तरूचिंतन
2015

वर्ष 7

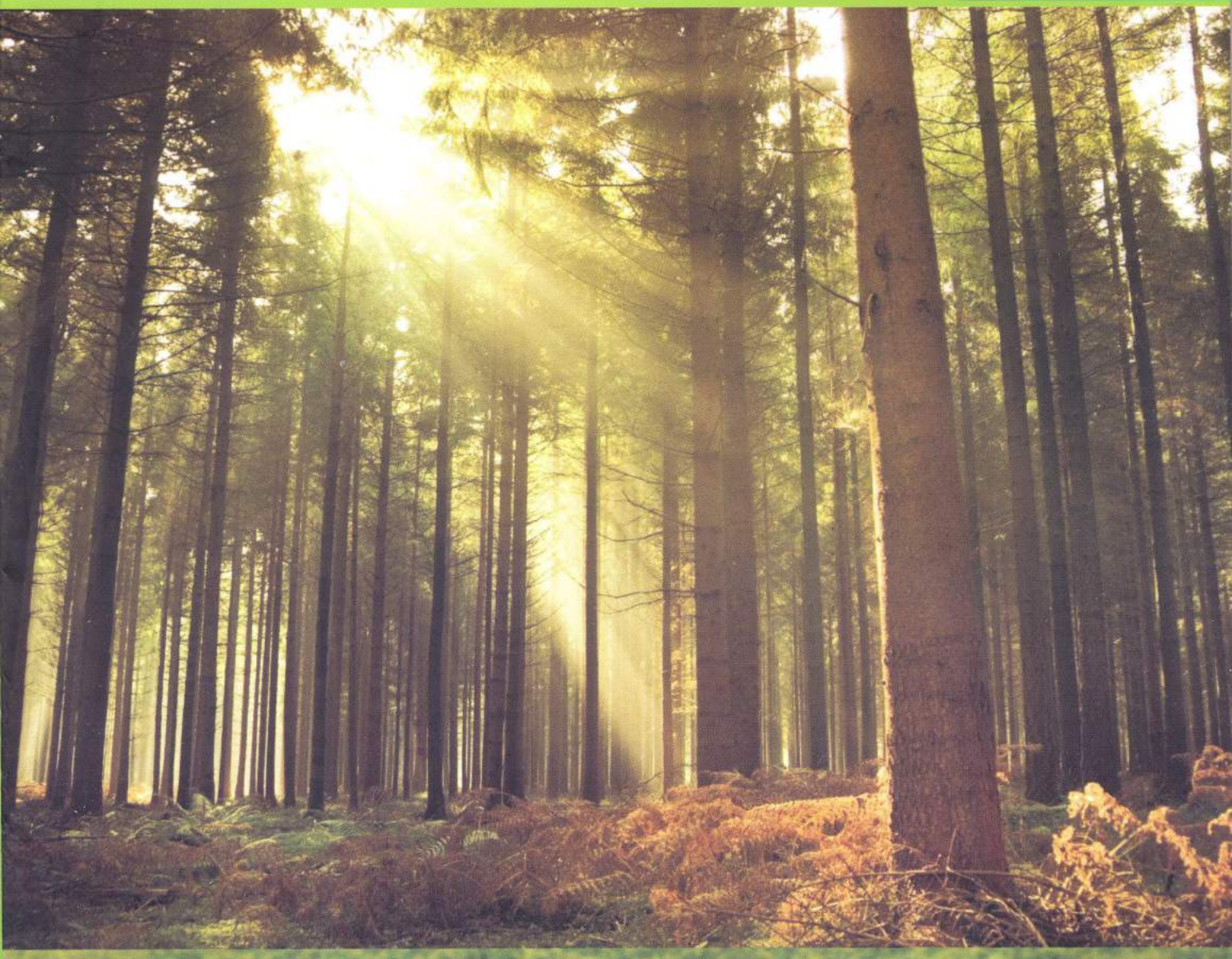

भारतीय वानिकी अनुसन्धान एवं शिक्षा परिषद्

(पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय, भारत सरकार की स्वायत्त परिषद्)

न्यू फॉरेस्ट, देहरादून (उत्तराखण्ड)

भारत महिमा

हिमालय के आँगन में उसे, प्रथम किरणों का दे उपहार
उषा ने हँस अभिनंदन किया और पहनाया हीरक-हार

जगे हम, लगे जगाने विश्व, लोक में फैला फिर आलोक
व्योम-तम पुँज हुआ तब नष्ट, अखिल संसृति हो उठी अशोक

विमल वाणी ने वीणा ली, कमल कोमल कर में सप्रीत
सप्तस्वर सप्तसिंधु में उठे, छिड़ा तब मधुर साम.संगीत

बचाकर बीज रूप से सृष्टि, नाव पर झेल प्रलय का शीत
अरुण-केतन लेकर निज हाथ, वरुण-पथ पर हम बढ़े अभीत

सुना है वह दधीचि का त्याग, हमारी जातीयता विकास
पुरंदर ने पवि से है लिखा, अस्थि-युग का मेरा इतिहास

सिंधु-सा विस्तृत और अथाह, एक निर्वासित का उत्साह
दे रही अभी दिखाई भग्न, मग्न रत्नाकर में वह राह

धर्म का ले लेकर जो नाम, हुआ करती बलि कर दी बंद
हमीं ने दिया शांति-संदेश, सुखी होते देकर आनंद

विजय केवल लोहे की नहीं, धर्म की रही धरा पर धूम
भिक्षु होकर रहते सम्राट, दया दिखलाते घर-घर घूम

यवन को दिया दया का दान, चीन को मिली धर्म की दृष्टि
मिला था स्वर्ण-भूमि को रत्न, शील की सिंहल को भी सृष्टि

किसी का हमने छीना नहीं, प्रकृति का रहा पालना यहीं
हमारी जन्मभूमि थी यहीं, कहीं से हम आए थे नहीं
जातियों का उत्थान-पतन, आँधियाँ, झड़ी, प्रचंड समीर
खड़े देखा, झेला हँसते, प्रलय में पले हुए हम वीर

चरित थे पूत, भुजा में शक्ति, नम्रता रही सदा संपन्न
हृदय के गौरव में था गर्व, किसी को देख न सके विपन्न

हमारे संचय में था दान, अतिथि थे सदा हमारे देव
वचन में सत्य, हृदय में तेज, प्रतिज्ञा मे रहती थी टेव

वही है रक्त, वही है देश, वही साहस है, वैसा ज्ञान
वही है शांति, वही है शक्ति, वही हम दिव्य आर्य-संतान

जियें तो सदा इसी के लिए, यही अभिमान रहे यह हर्ष
निछावर कर दें हम सर्वस्व, हमारा प्यारा भारतवर्ष

- जयशंकर प्रसाद

तरुचिंतन 2015

भारतीय वानिकी अनुसन्धान एवं शिक्षा परिषद्

(पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय, भारत सरकार की एक स्वायत्त परिषद्)

देहरादून (उत्तराखण्ड)

संरक्षक

डॉ. अश्वनी कुमार, भा.व.से.

महानिदेशक

भारतीय वानिकी अनुसन्धान एवं शिक्षा परिषद्

देहरादून

सम्पादक मंडल

प्रधान सम्पादक

श्री शैवाल दासगुप्ता, भा.व.से.,

उपमहानिदेशक (विस्तार), भा.वा.अ.शि.प.

सम्पादक

श्री राजा राम सिंह, भा.व.से.,

सहायक महानिदेशक (मीडिया एवं विस्तार), भा.वा.अ.शि.प.

सहायक सम्पादक

श्री रमाकान्त मिश्र

वैज्ञानिक-बी (मीडिया एवं विस्तार), भा.वा.अ.शि.प.

प्रकाशन

मीडिया एवं विस्तार प्रभाग

विस्तार निदेशालय

भारतीय वानिकी अनुसन्धान एवं शिक्षा, परिषद्

डाकघर - न्यू फॉरेस्ट

देहरादून - 248 006 (उत्तराखण्ड), भारत

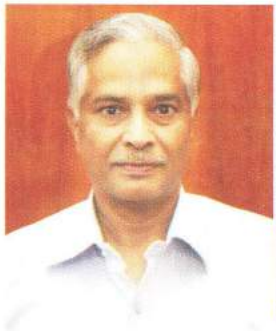

डॉ. अश्वनी कुमार
महानिदेशक
भारतीय वानिकी अनुसन्धान एवं शिक्षा परिषद्
देहरादून

संरक्षक की कलम से...

भारतीय वानिकी अनुसन्धान एवं शिक्षा परिषद् अपने राजभाषा दायित्वों के प्रति अत्यंत सजग और संवेदनशील है। परिषद् निरंतर अपने राजभाषायी लक्ष्यों की प्राप्ति के प्रति प्रयासरत है और इस दिशा में उत्तरोत्तर प्रगति को सुनिश्चित करने के लिए प्रयासों को सांस्थानिक स्वरूप में ढालने के लिए प्रयत्नशील है। ''तरूचिंतन'' इसी प्रकार का एक सार्थक और सफल प्रयास है।

परिषद् का मूल काम-काज वैज्ञानिक अनुसंधान है। अनुसंधान का मूल काम-काज आज भी अंग्रेजी में ही किया जाता है। इसके पीछे वैज्ञानिक साहित्य का प्रचुर मात्रा में अंग्रेजी में उपलब्ध होना, अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर वैज्ञानिक साहित्य की इस भाषा में सर्वस्वीकार्यता होना और इसी के साथ-साथ महत्वपूर्ण वैज्ञानिक सावधिक प्रकाशनों का अंग्रेजी में होना कुछ ऐसे तत्व हैं जो उच्च स्तरीय वैज्ञानिक अनुसंधान में एक प्रकार से अंग्रेजी के वर्चस्व को स्थापित किए हुए हैं। राजभाषायी अपेक्षाएं निश्चय ही इस अपरिहार्यता के आड़े नहीं आतीं क्योंकि राजभाषायी दायित्व मूलत: पत्राचार, टिप्पणी, दस्तावेजों और कम्प्यूटर इत्यादि पर हिन्दी में कार्य करने की सुविधा होना इत्यादि राजभाषा में काम करने के माहौल के निर्माण पर विशेष ध्यान देते हैं। इस प्रकार हम सरलता से राजभाषायी लक्ष्यों को प्राप्त कर सकते हैं। इसी प्रकार राजभाषा दायित्वों के अंतर्गत प्रत्येक तिमाही में कार्यशाला का आयोजन भी जहां एक ओर राजभाषायी लक्ष्यों की पूर्ति करता है, वहीं दूसरी ओर नियमितरूप से राजभाषा के कार्यान्वयन में आने वाली समस्याओं के निराकरण का मंच भी प्रदान करता है। आज के तकनीकी युग में अंग्रेजी वैज्ञानिक कार्यों के हिन्दी अनुवाद को प्राप्त कर लेना कहीं सरल हो गया है, अत: मेरा आप सब से आवाह्न है कि पत्राचार, टिप्पणी, प्रारूप इत्यादि विभिन्न कार्यों को यथासंभव अधिक से अधिक राजभाषा हिन्दी में करने का प्रयास करें।

परिषद् की पत्रिका ''तरूचिंतन'' राजभाषा हिन्दी में अपने विचार रखने का एक मंच प्रदान करते हुए हिन्दी में काम करने के माहौल के निर्माण में भी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। यह पत्रिका अपने सातवें वर्ष में प्रवेश कर रही है और इसमें निरंतर सुरूचिपूर्ण विविध रचनाओं की मात्रा बढ़ती ही जा रही है जो कि अपने आप में इसकी सफलता और परिषद् के वैज्ञानिक, अधिकारियों एवं उनके परिजनों का रूझान दोनों को व्यक्त करती है।

मैं इस अंक के सभी रचनाकारों की उनके राजभाषा हिन्दी के प्रसार में किए गए इस योगदान की भूरि-भूरि सराहना करता हूँ और राजभाषायी दायित्वों के निर्वहन में इस सरस एवं कलात्मक आयोजन के लिए श्री शैवाल दासगुप्ता, उप महानिदेशक (विस्तार) एवं श्री राजा राम सिंह, सहायक महानिदेशक (मीडिया एवं विस्तार) को बधाई देता हूँ।

डॉ. अश्वनी कुमार

श्री शैवाल दासगुप्ता
उप महानिदेशक (विस्तार)
भारतीय वानिकी अनुसन्धान एवं शिक्षा परिषद्
देहरादून

प्रधान सम्पादक की कलम से...

भारतीय वानिकी अनुसन्धान एवं शिक्षा परिषद् एक अखिल भारतीय संगठन है जिसमें न केवल विभिन्न भाषा-भाषी लोग कार्य करते हैं बल्कि वे विभिन्न भाषायी क्षेत्रों में कार्यरत हैं। इस प्रकार परिषद् के राजभाषा हिन्दी के प्रचार-प्रसार में विभिन्न भाषा-भाषी व्यक्तियों द्वारा महत्वपूर्ण योगदान किया जा रहा है। वार्षिक पत्रिका 'तरूचिंतन' इस प्रकार से बहुभाषी व्यक्तियों की रचनाओं से सुसज्जित एक ऐसा पुष्पगुच्छ है जिसमें आपको अलग-अलग भाषाओं के प्रभाव देखने को मिलेंगे।

तरूचिंतन की अवधारणा में एक ओर जहां राजभाषा हिन्दी के कार्यान्वयन के प्रयासों का प्रकाशन है वहीं दूसरी ओर इसमें परिषद् की वैज्ञानिक विशेषज्ञता के सरल सम्प्रेषण का भी समावेश किया गया है। पत्रिका में ललित साहित्य की विधाओं के लिए भी प्रावधान रखा गया है। यही नहीं पत्रिका में उपलब्ध रिक्त स्थानों का भी उपयोग विभिन्न प्रतिष्ठित साहित्यकारों की उल्लेखनीय रचनाओं के सरल अंशों के प्रकाशन में किया जाता है। इस प्रकार पत्रिका को अधिक से अधिक रोचक, जानकारीपरक और उपयोगी बनाने के सभी संभव प्रयास किए जाते हैं।

तरूचिंतन एक ऐसा मंच है जिसमें बिना किसी भेदभाव के सभी स्तर के अधिकारियों, वैज्ञानिकों एवं कर्मचारियों को अपने विचार व्यक्त करने का अवसर प्रदान प्राप्त होता है। यही नहीं इसमें परिषद् के कार्मिकों के परिजनों को भी बिना किसी रोक-टोक के अपनी रचनात्मकता के प्रदर्शन का अवसर प्राप्त होता है। इस प्रकार पत्रिका परिवार सहित परिषद् के कार्मिकों की रचनाधर्मिता को प्रोत्साहित करने का एक अनुपम साधन बन गई है। इस प्रकार यह पत्रिका राजभाषा हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिए विभिन्न स्तरों पर सफल उत्प्रेरक और प्रेरणा स्रोत्र बन चुकी है।

मैं इसके सभी रचनाकारों को बधाई देता हूँ, विशेषत: युवाओं एवं अहिन्दी भाषियों को। मैं मीडिया एवं विस्तार प्रभाग के सभी कार्मिकों को भी तरूचिंतन के इस अंक की सुरूचिपूर्ण और उच्च स्तरीय प्रस्तुति के लिए बधाई देता हूँ।

श्री शैवाल दासगुप्ता

श्री राजा राम सिंह
सहायक महानिदेशक (मीडिया एवं विस्तार)
भारतीय वानिकी अनुसन्धान एवं शिक्षा परिषद्,
देहरादून

सम्पादक की कलम से...

वानिकी विस्तार के क्षेत्र में किए जा रहे प्रयासों में प्रकाशनों की एक महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। विशेषकर जन सामान्य की बोली भाषा में विभिन्न विषयों की जानकारी उन तक पहुंचाना अत्यंत प्रभावकारी होता है। इसलिए राजभाषा हिन्दी जो कि एक बहुत बड़े भू-भाग में और भारत की लगभग आधी जनसंख्या द्वारा बोली और समझी जाती है, में विभिन्न सुगम, सरल और आकर्षक तकनीकी प्रकाशनों का किया जाना आवश्यक है। इसीलिए परिषद् में हिन्दी भाषा में सम्प्रेषण को सहज बनाने और इस प्रक्रिया में समस्त भा.वा.अ.शि.प. परिवार की भागीदारी सुनिश्चित करने के उद्देश्य से 'तरूचिंतन' का प्रकाशन किया जाता है।

इस पत्रिका में मुख्यालय एवं संस्थानों द्वारा राजभाषा के प्रचार-प्रसार के लिए पिछले एक वर्ष में की गई गतिविधियों का लेखा-जोखा तो प्रकाशित होता ही है, वानिकी के विभिन्न पक्षों को उजागर करने वाले सरल लेखों के साथ-साथ जन सामान्य के लिए उपयोगी विविध विषयों पर लेख तथा कविताएं और आलेख भी प्रकाशित किए जाते हैं।

पत्रिका के इस अंक में 78 रचनाकारों ने अपना योगदान दिया है। उन्नीस कविताओं और बारह ललित आलेखों सहित इस अंक में ''जलवायु परिवर्तन पर राष्ट्रीय कार्य योजना'' एवं कार्बन फूट प्रिंट पर जानकारीपरक लेख सहित वानिकी के विविध पहलुओं पर चौदह एवं पुस्तकों की प्रासंगिकता पर एक प्रेरक लेख सहित अन्य विविध विषयों पर भी पन्द्रह लेख प्रकाशित किए जा रहे हैं। इस अंक में परिषद् द्वारा नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (नराकास), देहरादून के तत्वावधान में आयोजित की गई जनपद स्तरीय निबंध प्रतियोगिता में प्रथम पुरस्कार प्राप्त निबंध को भी प्रकाशित किया गया है। मैं सभी रचनाकारों को उनके सहयोग और सफल रचना कर्म पर बधाई देता हूँ।

मुझे आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि गत अंकों की भाति यह अंक भी आपकी अपेक्षाओं पर पूर्ण उतरेगा। मैं आप सभी से आगामी अंक के लिए सरल और सुरूचिपूर्ण रचनाएं प्रेषित करने का भी अनुरोध करता हूँ।

श्री राजा राम सिंह

विषय सूची

क्र.सं.	विषय	लेखक	पृष्ठ
	संरक्षक की कलम से		III
	प्रधान सम्पादक की कलम से		V
	सम्पादक की कलम से		VII
	राजभाषा		
1.	परिषद् में राजभाषा कार्यान्वयन		3
2.	शुष्क वन अनुसंधान संस्थान (आफरी), जोधपुर में आयोजित "हिन्दी पखवाडा" की रिपोर्ट		5
3.	वन अनुसन्धान संस्थान, देहरादून की राजभाषा रिपोर्ट		6
4.	उष्णकटिबंधीय वन अनुसंधान संस्थान, जबलपुर की राजभाषा कार्यान्वयन की संक्षिप्त सचित्र रिपोर्ट		7
5.	वर्षा वन अनुसन्धान संस्थान, जोरहाट की राजभाषा गतिविधियां		8
6.	हिमालयन वन अनुसन्धान संस्थान, शिमला में राजभाषा गतिविधियां		9
7.	वन उत्पादकता संस्थान, रांची में राजभाषा गतिविधियां		10
	वानिकी		
8.	जलवायु परिवर्तन पर राष्ट्रीय कार्य योजना एवं वानिकी	श्री विजयराज सिंह रावत	13
9.	सामाजिक वानिकी की आवश्यकता	डॉ. ओम कुमार एवं श्री सुधीर कुमार	17
10.	यूकेलिप्टस वृक्ष पर पिटिकायें या गाँठें (Galls) बनाने वाला कीट- *लेप्टोसाइबे इनवासा* (*Leptocybe invasa*) का आक्रमण तथा उसका नियन्त्रण	डॉ. मौ. यूसुफ, डॉ. सुधीर सिंह श्री राम बहादुर सिंह तथा श्री संदीप	20
11.	कृषि वानिकी में औषधीय एवं सुगंधित पौधों का महत्व	श्री अशोक कुमार पाण्डेय	24

क्र.सं.	विषय	लेखक	पृष्ठ
12.	प्लाईवुड तथा अन्य पैनल उत्पादों के लिए गुणवत्ता नियंत्रण उपाय	डॉ. अनिल नेगी, डॉ. देवेन्द्र कुमार, डॉ. डी.पी. खाली तथा डॉ. ओम कुमार	27
13.	शीशम वृक्षों की मृत्यु : कारण और निवारण	श्री हरी शंकर लाल, डॉ. संजय सिंह एवं श्री रवि शंकर प्रसाद	30
14.	नीम के नाशिकीट, रोग, लक्षण और उनका नियन्त्रण	डॉ. के. पी. सिंह	33
15.	लाह की सघन खेती के लिए दो नए प्रजातियों के बीजों का परीक्षण एवं मूल्यांकन	श्री रवि शंकर प्रसाद, डॉ. संजय सिंह एवं श्री हरि शंकर लाल	36
16.	पूर्वी भारत के करंज की आनुवांशिक विविधता का पी.सी.आर. आधारित आणविक मार्कर द्वारा विश्लेषण	सुश्री कंचन कुमारी, डॉ. संजय सिंह एवं सुश्री अमृता सिन्हा	38
17.	बांस का कायिक प्रवर्धन	श्री संजय सिंह, श्री रवि शंकर प्रसाद, श्री शंकर लाल, श्री जीशान दानिश	42
18.	प्रदूषण नियन्त्रण के लिए पेड़ों का महत्व	डॉ. अरून्धती बरूवा	46
19.	जलवायु परिवर्तन: कृषि और हमारे वन	श्री शैलेश पाण्डेय, श्री आर. राजाऋषि एवं श्री राजेश कुमार	48
20.	पूर्वोत्तर भारत में झूम खेती और कार्बन डाइऑक्साइड उत्सर्जन	डॉ. कृष्णा गिरी, डॉ. शैलेश पांडेय,	50
		डॉ. गौरव मिश्रा और श्री शंकर शर्मा	52
21.	घटते वन, बढ़ती आपदायें	श्री दीपक सिंह सचान	
	विविधा		
22.	रंगों के उपचारात्मक प्रभाव एवं चिकित्सीय महत्व	डॉ. वाई.सी. त्रिपाठी, डॉ. राकेश कुमार एवं सुश्री अनिता पाल	57
23.	तुलसी-बहुआयामी औषधीय गुणों से युक्त एक पूजनीय पौधा	श्री देवेश तिवारी, सुश्री निशात अंजुम, श्री विकास तथा डॉ वाई.सी. त्रिपाठी	62
24.	प्राकृतिक प्रतिआक्सीकारकों की चिकित्सीय एवं पोषण-भेषजीय उपादेयता	डॉ. वाई. सी. त्रिपाठी, सुश्री निशात अन्जुम, श्री विकास	67
25.	पारम्परिक ऊर्जा का पर्यावरण हितैषी विकल्प: पवन ऊर्जा	डॉ. राजेश कुमार मिश्रा	72
26.	"आंवला" : एक दिव्य गुणों से युक्त वृक्ष	श्री सोनू भारती	77
27.	औषधीय पौधा	श्री महेन्द्र सिंह	79
28.	प्रकृति प्रदत, बहुपयोगी औषधीय गुण सम्पन्न आयुर्वेद का सुप्रसिद्ध योग - ''त्रिफला'' का एक घटक-बहेड़ा	श्री बाबूलाल शर्मा (सेवानिवृत) एवं श्रीमती संतोष गैरोला	80
29.	भारत में पुस्तकालय पद्धति को समर्थ बनाने हेतु प्रयास	श्रीमती अनुराधा भाटी	83
30.	पुस्तकें : मनुष्य की अभिन्न मित्र	डॉ. राजेश कुमार मिश्रा एवं श्रीमती पूर्णिमा श्रीवास्तव	90

क्र.सं.	विषय	लेखक	पृष्ठ
31.	कार्बन पदचिह्न (Carbon Footprint) गणना : पर्यावरण प्रबन्धन के लिए एक प्रभावी उपकरण	श्री दिनेश कुमार मीणा और श्री अजय कुमार	94
32.	कौंच (*म्यूकना प्यूरियेन्स*) औषधीय लता की उपयोगिता एवं प्रबन्धन	डॉ. बी. पी. टम्टा	97
33.	आंवले की खेती	डॉ. देवेन्द्र कुमार	99
34.	झारखण्ड के वन्य पुष्प एवं पत्तियों से भोजन	श्री पंकज सिंह, श्री जीशान दानिश और श्री संजय सिंह	102
35.	कीट रोगजनक सूत्रकृमि - वानिकी के कीटों के लिए प्रभावशाली जैव कीटनाशक	डॉ. संजय पौनीकर एवं डॉ. नितिन कुलकर्णी	105
36.	दस औषधीय वृक्ष	सुश्री आर. श्रीदेवी	108

लालित्य

37.	आखिर मुलर कौन था ?	श्री अनूप सिंह चौहान	111
38.	वदतु संस्कृतम जयतु भारतम	श्री एम. विनयचन्द्रन	114
39.	मेरी प्रिय माँ	श्री आर. वेलुमणि	115
40.	मेक इन इन्डिया	श्री एस. श्रीनिवासराघवन	116
41.	सामाजिक बदलाव में अनुवाद की भूमिका	श्रीमती पूंगोदै कृष्णन	117
42.	बढ़ई	श्रीमती आर.जी. अनिता	119
43.	जीवन एक परीक्षा	सुश्री अंजिपा	120
44.	नेकी का फल	श्रीमती रूपेन्द्रिका	121
45.	आओ मिलकर पेड़ लगायें	श्री शम्भू सिंह रावत	122
46.	एफ.आर.आई.	श्री अनूप कुमार वर्मा	123
47.	पर्यावरण बचाओ	सुश्री निशात अन्जुम	124
48.	अभिलाषा	श्री छत्रपाल सिंह	125
49.	गीत	श्री रमेश सिंह	126
50.	सुगन्ध	श्री अमित कुमार सिंह	127
51.	गंगा चाहती शुद्धिकरण	श्री अजय वशिष्ठ	128
52.	धरती माँ	सुश्री दिव्या यादव	129
53.	दोषी कौन ?	सुश्री दिव्या यादव	130
54.	बालिका की पुकार	श्री संतोष कुमार	131
55.	प्रेम पथ	श्री संतोष कुमार	132
56.	प्रचंड	श्री अनूप कुमार	133
57.	बिटिया	श्री शशांक शुक्ला	134
58.	खारी बंजर भूमि की पुकार	डॉ. रंजना आर्या	135

क्र.सं.	विषय	लेखक	पृष्ठ
59.	फागुन मास	सुश्री देवाक्षी काश्यप	136
60.	महिलाएं : समाज की वास्तविक वास्तुकार	सुश्री अंशु गर्ग	137
61.	मेरी मसूरी यात्रा	सुश्री दिव्यानी राना	142
62.	ज्ञान की गंगा	श्री बिरेन्द्र प्रसाद खंकरियाल	143
63.	कलयुग का प्रमाण	श्री शमसुद्दीन	144
64.	विश्वास करो तुम	श्रीमती सुधा पाण्डेय ''गुड्डी''	145
65.	मुस्कुराते रहिये	श्रीमती सुधा पाण्डेय ''गुड्डी''	146
66.	हिन्दी का राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय परिपेक्ष्य	डॉ. बसंन्ती मठपाल	147
67.	नतोहम रामवल्लभाम	श्री रमाकान्त मिश्र एवं श्रीमती रेखा मिश्र	151

राजभाषा

मानव

रात यों कहने लगा मुझसे गगन का चाँद,
आदमी भी क्या अनोखा जीव होता है!
उलझनें अपनी बनाकर आप ही फँसता,
और फिर बेचैन हो जगता, न सोता है।

जानता है तू कि मैं कितना पुराना हूँ?
मैं चुका हूँ देख मनु को जनमते-मरते;
और लाखों बार तुझ-से पागलों को भी
चाँदनी में बैठ स्वप्नों पर सही करते।

आदमी का स्वप्न? है वह बुलबुला जल का;
आज उठता और कल फिर फूट जाता है;
किन्तु, फिर भी धन्य; ठहरा आदमी ही तो?
बुलबुलों से खेलता, कविता बनाता है।

मैं न बोला, किन्तु, मेरी रागिनी बोली,
देख फिर से, चाँद! मुझको जानता है तू?
स्वप्न मेरे बुलबुले हैं? है यही पानी?
आग को भी क्या नहीं पहचानता है तू?

मैं न वह जो स्वप्न पर केवल सही करते,
आग में उसको गला लोहा बनाती हूँ,
और उस पर नींव रखती हूँ नये घर की,
इस तरह दीवार फौलादी उठाती हूँ।

मनु नहीं, मनु-पुत्र है यह सामने, जिसकी
कल्पना की जीभ में भी धार होती है,
वाण ही होते विचारों के नहीं केवल,
स्वप्न के भी हाथ में तलवार होती है।

स्वर्ग के सम्राट को जाकर खबर कर दे,
"रोज ही आकाश चढ़ते जा रहे हैं वे,
रोकिये, जैसे बने इन स्वप्नवालों को,
स्वर्ग की ही ओर बढ़ते आ रहे हैं वे।"

- राष्ट्र कवि रामधारी सिंह 'दिनकर'

परिषद् में राजभाषा कार्यान्वयन

भारतीय वानिकी अनुसन्धान एवं शिक्षा परिषद्, देहरादून

भारतीय वानिकी अनुसन्धान एवं शिक्षा परिषद्, मुख्यालय सहित अधीनस्थ संस्थानों में राजभाषा हिन्दी के नियम, अधिनियम, आदेश, वार्षिक कार्यक्रम इत्यादि के कार्यान्वयन सहित समस्त विधिक दायित्वों के सफल निवर्हन के साथ-साथ राजभाषा हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिए कार्यशील है। परिषद् में राजभाषा कार्यान्वयन की प्रगति की समीक्षा के लिए नियमित रूप से राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक का आयोजन किया जाता है। इन बैठकों में परिषद् मुख्यालय एवं संस्थानों में प्रत्येक तिमाही में किए गए कार्यों का बिंदुवार विश्लेषण किया जाता है और राजभाषा हिन्दी के प्रयोग को बढ़ावा देने के लिए आगामी कार्यक्रमों की रूपरेखा एवं नवीन प्रयासों पर चर्चा की जाती है। वर्ष 2014 के दौरान परिषद् में विशेष तौर पर उल्लेखनीय अनेक कार्यक्रम आयोजित किए गए।

हिन्दी सप्ताह समारोह 2014

हिन्दी के प्रचार-प्रसार हेतु भारतीय वानिकी अनुसन्धान एवं शिक्षा परिषद् में दिनांक 18 से 29 सितम्बर 2014 के मध्य हिन्दी सप्ताह समारोह आयोजित किया गया। दिनांक 29 सितम्बर 2014 को भा.वा.अ.शि.प. के सभागार में स्वरचित काव्यपाठ प्रतियोगिता तथा समापन समारोह का आयोजन किया गया। इस अवसर पर डॉ. अश्वनी कुमार, महानिदेशक, भा.वा.अ.शि.प. मुख्य अतिथि थे। कार्यक्रम का शुभारम्भ मुख्य अतिथि द्वारा द्वीप प्रज्ज्वलित कर किया गया। इस अवसर पर बोलते हुए डॉ. अश्वनी कुमार ने कहा कि यद्यपि यह हिन्दी सप्ताह का समापन समारोह है परंतु हमारे सरकारी काम-काज में हिन्दी के प्रयोग का समापन नहीं है। उन्होंने कहा कि भा.वा.अ.शि.प. एक वैज्ञानिक संस्था है जिसमें बहुत सी वानिकी से संबंधित शब्दावली केवल अंग्रेजी में है, अत: वानिकी की विभिन्न तकनीकी शब्दावली के लिए हिन्दी ग्लॉसरी की आवश्यकता है। उन्होने राजभाषा हिन्दी के प्रयोग में अभिवृद्धि के लिए और अधिक प्रयासों के लिए आह्वान किया।

हिन्दी सप्ताह समापन समारोह में बोलते हुए मुख्य अतिथि डॉ. अश्वनी कुमार, महानिदेशक, भा.वा.अ.शि.प. (ऊपर) एवं समापन समारोह का उद्घाटन (नीचे)

श्री शैवाल दासगुप्ता, उप महानिदेशक (विस्तार) ने राजभाषा हिन्दी के महत्व पर प्रकाश डालते हुए कहा कि यद्यपि हिन्दी सप्ताह इत्यादि का आयोजन करना राजभाषा नियमों और आदेशों के अंतर्गत अपेक्षित है, तथापि यह केवल एक औपचारिकता मात्र नहीं है। भारतीय वानिकी अनुसन्धान एवं शिक्षा परिषद् राजभाषा हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिए कटिबद्ध है तथा इसके लिए वह विभिन्न प्रकार के हिन्दी से संबंधित कार्यक्रम जैसे हिन्दी प्रशिक्षण कार्यशालाएं आदि आयोजित करती रहती है।

हिन्दी सप्ताह के दौरान 5 विभिन्न प्रतियोगिताओं नामत: निबन्ध प्रतियोगिता, टिप्पण लेखन प्रतियोगिता, अंग्रेजी से हिन्दी अनुवाद प्रतियोगिता, कम्प्यूटर पर हिन्दी टंकण प्रतियोगिता तथा स्वरचित काव्य पाठ प्रतियोगिता का

आयोजन किया गया। इन प्रतियोगिताओं में 44 प्रतिभागियों ने हिस्सा लिया। कार्यक्रम में विभिन्न प्रतियोगिताओं के विजेताओं को मुख्य अतिथि डॉ. अश्वनी कुमार, महानिदेशक के करकमलों द्वारा पुरस्कार प्रदान किये गये। समारोह का समापन श्रीमती नीना खाण्डेकर, सहायक महानिदेशक (मीडिया एवं विस्तार) द्वारा धन्यवाद प्रस्ताव के साथ हुआ। समापन समारोह में लगभग 100 अधिकारी/वैज्ञानिक एवं कर्मचारी उपस्थित थे।

नराकास के तत्वावधान में अखिल जनपद स्तरीय निबंध प्रतियोगिता

राजभाषा हिन्दी के कार्यों के क्रम में परिषद् में दिनांक 21 नवम्बर 2014 को नराकास के तत्वावधान में - अखिल जनपद-स्तरीय निबंध प्रतियोगिता, जिसका विषय '**घटते वन, बढ़ती आपदाएं** था, का आयोजन भा.वा.अ.शि.प. के सभागार में किया गया। इस अवसर पर श्री शैवाल दासगुप्ता, उप महानिदेशक (विस्तार), भा.वा.अ.शि.प. मुख्य अतिथि थे। कार्यक्रम का शुभारम्भ मुख्य अतिथि द्वारा द्वीप प्रज्ज्वलित कर किया गया। इस अवसर पर बोलते हुए श्री शैवाल दासगुप्ता, उप महानिदेशक (विस्तार) ने वन अनुसन्धान संस्थान एवं भारतीय वानिकी अनुसन्धान एवं शिक्षा परिषद् की स्थापना पर चर्चा की और बताया कि परिषद् हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिए कटिबद्ध है और परिषद् एवं उसके संस्थानों द्वारा राजभाषा हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिए अनेक गतिविधियां निरंतर की जाती रहती हैं और आज की निबंध प्रतियोगिता उसी क्रम में आयोजित की जा रही है। उन्होने कहा कि हमे अपने दैनिक कार्यों में हिन्दी का प्रयोग करना चाहिए और अपने सरकारी कार्य में हिन्दी भाषा के प्रयोग को बढ़ाने का प्रयास करना चाहिए। इसके लिए प्रबल इच्छाशक्ति होनी चाहिए, तभी इस दिशा में कोई प्रगति हो सकती है।

इससे पूर्व श्रीमती नीना खांडेकर, सहायक महानिदेशक (मी. व वि.) ने सभी अतिथियों और प्रतिभागियों का स्वागत किया और सबसे राजभाषा हिन्दी के प्रचार-प्रसार की दिशा में कार्य करने का आह्वान किया। उन्होंने भा.वा.अ.शि.प. के सभी संस्थानों के बारे में बताते हुए परिषद् के राजभाषा प्रयासों पर चर्चा की। नराकास की ओर से पर्यवेक्षक के रूप में उपस्थित नराकास, देहरादून के सदस्य सचिव श्री धूम सिंह ने सूचित किया कि नराकास, देहरादून को उसके प्रदर्शन पर महामहिम राष्ट्रपति जी से पुरस्कार प्राप्त हुआ है। उन्होंने परिषद् द्वारा किए गए आयोजन की भूरि-भूरि प्रशंसा की और परिषद् के प्रति आभार व्यक्त किया। कार्यक्रम में नराकास, देहरादून के सदस्य कार्यालयों के लगभग 50 प्रतिभागियों ने भाग लिया।

वर्ष के दौरान परिषद् की हिन्दी पत्रिका 'तरूचिंतन' का प्रकाशन किया गया। पत्रिका में विभिन्न विषयों जैसे राजभाषा, वानिकी, लालित्य आदि पर कुल 74 लेख/ कहानियां/ कविताएं इत्यादि प्रकाशित किए गए।

नराकास के तत्वावधान में अखिल जनपद स्तरीय निबंध प्रतियोगिता का उद्घाटन करते हुए श्री शैवाल दासगुप्ता, उप महानिदेशक (विस्तार), भा.वा.अ.शि.प.

निबंध प्रतियोगिता के सहभागियों को सम्बोधन करते हुए मुख्य अतिथि श्री शैवाल दासगुप्ता, उप महानिदेशक (विस्तार), भा.वा.अ.शि.प.

शुष्क वन अनुसन्धान संस्थान, जोधपुर में आयोजित "हिन्दी पखवाड़ा" की रिपोर्ट

शुष्क वन अनुसन्धान संस्थान, जोधपुर

शोध कार्यों के परिणामों को आमजन तक पहुँचाने में हिन्दी एक सशक्त माध्यम है, आज के युग की आवश्यकता है कि हम सभी हिन्दी को अधिकाधिक बढ़ावा दें यह उद्‌गार शुष्क वन अनुसंधान संस्थान के निदेशक श्री एन.के.वासु ने आफरी के सभागार में हिन्दी पखवाड़ा के उद्‌घाटन सत्र में आयोजित गोष्ठी के दौरान व्यक्त किए। इस अवसर पर आयोजित सत्र में शु.व.अ.सं. की वैज्ञानिक डॉ. संगीता सिंह ने *मानवीय हस्तक्षेप का पादप रोगों के विकास एवं महामारी में भूमिका* पर, सूचना प्रौद्योगिकी प्रकोष्ठ के वैज्ञानिक ए. के. सिन्हा ने राष्ट्रीय ज्ञान नेटवर्क (एन.के.एन) पर, श्री राजेश कुमार गुप्ता ने *शुष्क क्षेत्र में शहरी वनीकरण एवं भू-दृश्य निर्माण* पर हिन्दी में पावर प्वाईंट प्रदर्शन के माध्यम से व्याख्यान प्रस्तुत किया। शु.व.अ.सं. के हिन्दी अधिकारी श्री कैलाश चन्द्र गुप्ता ने राजभाषा नियमों के बारे में जानकारी दी तथा इस अवसर पर *सुनहरा भविष्य-सुनहरी आशा, मेरा देश-मेरी भाषा* नामक वृत्तचित्र का प्रदर्शन भी किया गया।

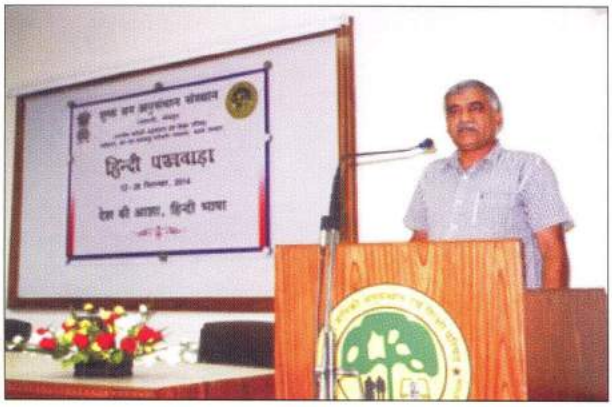

हिन्दी पखवाड़ा के उद्‌घाटन सत्र को सम्बोधित करते हुए संस्थान निदेशक, श्री एन. के. वासु

हिन्दी भाषा में कोई समस्या नहीं है, यह सुदृढ एवं सरल है। अत: आम व्यवहार में हिंदी को अपनाना आसान है। ये उदगार शुष्क वन अनुसन्धान संस्थान, जोधपुर के सभागार में

हिंदी पखवाड़ा के समारंभ का दृश्य

हिंदी पखवाडे के समापन समारोह में मुख्य अतिथि के रूप में अपने सम्बोधन में जय नारायण व्यास विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग अध्यक्ष प्रो. रामवीर सिंह शर्मा ने व्यक्त किए। उन्होंने बताया कि विभिन्न भाषाओं व विदेशी भाषाओं को जो चलन के रूप में प्रचलित हैं उसी रूप में अपनाना चाहिए।

कार्यक्रम में शु.व.अ.सं. के निदेशक श्री एन. के. वासु ने कहा कि हिंदी में शोध कार्यो को प्रकाशित कर आमजन तक पहुंचाने से ही इसकी उपयोगिता बढाई जा सकती है तथा हिंदी में अधिकाधिक कार्य करने का आपने आह्वान किया। उन्होंने हिंदी पखवाड़े के दौरान आयोजित विभिन्न प्रतियोगिताओं के विजेताओं एवं प्रतिभागियों को शुभकामनाएं दी।

कार्यक्रम में शु.व.अ.सं. के वरिष्ठ वैज्ञानिक डॉ. आई. डी. आर्य, डॉ. एस आई अहमद एवं डॉ. रंजना आर्य ने हिंदी पर अपने विचार रखे तथा कृषिवानिकी एवं विस्तार विभाग के विभागाध्यक्ष श्री उमाराम चौधरी ने *क्यु जावों परदेस* सुना कर सभी को मंत्रमुग्ध कर दिया। इस अवसर पर हिन्दी पखवाड़े के दौरान आयोजित विभिन्न प्रतियोगिताओं के विजेताओं को पुरस्कृत किया गया।

हिन्दी पखवाड़ा के समापन समारोह के दौरान शु.व.अ. सं. के हिन्दी अधिकारी श्री कैलाश चन्द गुप्ता ने वर्ष 2013-14 की हिंदी प्रगति रिपोर्ट प्रस्तुत की तथा सभी का आभार ज्ञापित किया।

वन अनुसन्धान संस्थान, देहरादून की राजभाषा रिपोर्ट

वन अनुसन्धान संस्थान, देहरादून

हिंदी सप्ताह समारोह

वन अनुसन्धान संस्थान, देहरादून में दिनांक 23 सितम्बर से 29 सितम्बर, 2014 तक हिन्दी सप्ताह समारोह का आयोजन किया गया। सप्ताह के दौरान हिंदी टिप्पण एवं प्रारूप लेखन, हिंदी निबंध लेखन एवं हिंदी स्वरचित काव्यपाठ प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया। दिनांक 29 सितम्बर 2014 को हिन्दी सप्ताह समारोह के समापन का भव्य आयोजन किया गया। समापन समारोह के अवसर पर स्वरचित काव्य पाठ प्रतियोगिता का आयोजन हुआ। इसके बाद समारोह में मुख्य अतिथि, संस्थान के कार्यकारी निदेशक डॉ. श्रीमती जयश्री आरडे चौहान ने समारोह में उपस्थित सभी अधिकारियों/कर्मचारियों को सम्बोधित करते हुए कहा कि हम सब का दायित्व है कि हम संविधान की भावना के अनुरूप अपना अधिक से अधिक कार्य राजभाषा हिन्दी में करें। हिन्दी सरल व सुबोध होने के साथ-साथ देश को एकसूत्र में पिरोने का कार्य करती है। साथ ही सप्ताह के दौरान आयोजित प्रतियोगिताओं के विजेताओं को मुख्य अतिथि द्वारा पुरस्कार प्रदान किया गया। संस्थान के कुलसचिव श्री शशिकर सामंत के कुशल मार्गदर्शन में सुश्री रशमा दीवान, अवर सचिव एवं श्री रमेश सिंह, उच्च श्रेणी लिपिक द्वारा सम्पूर्ण कार्यक्रम का कुशलतापूर्वक संयोजन किया गया।

एक विजेता प्रतियोगी को पुरस्कार प्रदान करतीं कार्यकारी निदेशक, डॉ. श्रीमती जयश्री आरडे चौहान

यूनिकोड पर कार्यशाला

संस्थान में दिनांक 26 सितम्बर, 2014 को यूनिकोड कार्यशाला का आयोजन किया गया। यूनिकोड कार्यशाला में केन्द्रीय अकादमी राज्य वन सेवा के प्रशिक्षण अधिकारी (हिंदी) श्री गुरू प्रसाद जोशी द्वारा प्रशिक्षण दिया गया। उन्होंने अपने संबोधन में प्रौद्योगिकी के सूत्रपात के क्रम में टाइपराइटर, इलेक्ट्रानिक टाइपराइटर युग एवं भारत में कम्प्यूटर के प्रारम्भ होने विषयक विस्तार से जानकारी प्रशिक्षाणार्थियों को उपलब्ध कराई। इसी के साथ उन्होंने राजभाषा नीति और संविधान में राजभाषा के लिए की गई व्यवस्थाओं की जानकारी भी दी। उन्होंने यूनिकोड तथा उसके उपयोग के विषय में जानकारी दी। इसके साथ ही उन्होंने ई-गवर्नेंस, ई-बिलिंग, ई-लेनदेन, ई-क़ार्ड, टिकटिंग एवं ई-बुक के विषय में भी जानकारी दी।

कार्यशाला में प्रशिक्षण देते श्री गुरू प्रसाद जोशी

इसके बाद प्रशिक्षण के द्वितीय सत्र में सभी प्रशिक्षणार्थियों को एक एक करके कम्प्यूटर पर यूनिकोड को सक्रिय करने और उसका उपयोग करने का श्री जोशी द्वारा अभ्यास कराया गया। उक्त प्रशिक्षण से प्रशिक्षणार्थी काफी लाभान्वित हुए। कार्यक्रम में अंत में श्री रमेश सिंह, हिंदी अनुभाग ने सभी के प्रति अपना आभार व्यक्त किया।

उष्णकटिबंधीय वन अनुसन्धान संस्थान, जबलपुर की राजभाषा कार्यान्वयन की संक्षिप्त रिपोर्ट

उष्णकटिबंधीय वन अनुसन्धान संस्थान, जबलपुर

उष्णकटिबंधीय वन अनुसन्धान संस्थान, जबलपुर में संघ की राजभाषा का कार्यान्वयन कार्य राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली द्वारा सहायक महानिदेशक, मीडिया एवं विस्तार प्रभाग, विस्तार निदेशालय, भारतीय वानिकी अनुसंधान एवं शिक्षा परिषद्, देहरादून के जरिए प्रेषित वर्ष 2015-16 के राजभाषा विषयक वार्षिक कार्यक्रम के अनुरूप निष्पादित किया जा रहा है।

संस्थान में निदेशक की अध्यक्षता में गठित राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठकें तय समय पर आयोजित की जाती हैं और संस्थान के शासकीय काम-काज में राजभाषा हिन्दी का प्रगामी प्रयोग निर्धारित लक्ष्य के अनुरूप किये जाने पर लिये निर्णय पर अमल किया जाता है। संस्थान नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, जबलपुर का सदस्य कार्यालय है, जो 'नराकास' द्वारा राजभाषा के कार्यान्वयन संबंध में दिये जाने वाले सुझावों पर अमल करता है।

निदेशक की अध्यक्षता में संपन्न हुई शीर्षस्थ प्रशासनिक बैठकों में वार्तालाप हिन्दी में की जाती है एवं बैठकों के कार्यवृत्त आदि, संबंधित कार्यालय के सूचना एवं अपेक्षित कार्रवाई हेतु हिन्दी में प्रेषित किये जाते हैं। संस्थान की राजभाषा के प्रगामी प्रयोग से संबंधित तिमाही, अर्द्धवार्षिक तथा वार्षिक मूल्यांकन संबंधित आवधिक रिपोर्टें आई.सी. एफ.आर.ई. मुख्यालय, देहरादून एवं राजभाषा विभाग के संबंधित कार्यालयों को तय समय पर प्रेषित किये जाते हैं।

संस्थान में राजभाषा का कार्यान्वयन कार्य सुचारु रूप से निष्पादित करने के लिए एक कार्य-योजना बनाई गई है, जिसके तहत राजभाषा विभाग द्वारा राजभाषा हिन्दी में शासकीय काम-काज करने के लिए निर्धारित किये गये लक्ष्य

हिन्दी पखवाड़ा समारोह की झलकियाँ

को प्राप्त करने की दिशा में निरंतर सकारात्मक कार्रवाई की जा रही है।

संस्थान में भारत सरकार के मार्गदर्शी रूपरेखा के अनुरूप 14 सितम्बर को हिन्दी दिवस एवं 15 सितम्बर से 28 सितम्बर तक हिन्दी पखवाड़ा समारोह बड़े हर्षोल्लास से मनाया गया है। इस दौरान हिन्दी की विविध प्रतियोगिताएँ आयोजित की गई एवं प्रतियोगिता में सफल प्रतिभागियों को पुरस्कार से लाभान्वित किया गया।

वर्षा वन अनुसन्धान संस्थान, जोरहाट की राजभाषा गतिविधियां

वर्षा वन अनुसन्धान संस्थान, जोरहाट

हिन्दी कार्यशाला

संस्थान के सम्मेलन कक्ष में दिनांक 4 जुलाई 2014 को एक हिन्दी कार्यशाला का आयोजन किया गया। कार्यशाला में संस्थान के कुल 7 प्रभागों और 7 अनुभागों से मनोनीत कार्मिकों को आमंत्रित किया गया। कार्यशाला के प्रारंभ में डॉ. प्रवीण कुमार वर्मा, कार्यकारी हिन्दी अधिकारी ने सबका स्वागत किया और हिन्दी कार्यशाला की उपयोगिता संबंधी जानकारी दी। इसके उपरान्त श्री शंकर शर्मा, कनिष्ठ हिन्दी अनुवादक ने स्लाइड प्रस्तुति द्वारा सभी प्रतिभागियों को राजभाषा प्रकोष्ठ की गतिविधियों से अवगत कराया। कार्यशाला उपरान्त प्रतिभागियों से सुझाव मांगे गये और उनकी समस्याओं का निराकरण भी किया गया।

भारत सरकार, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय की राजभाषा नीति के कार्यान्वयन का आकलन करने के लिए दिनांक 28.11.2014 को श्री बदरी यादव, अनुसंधान अधिकारी (का.), कार्यान्वयन कार्यालय (पूर्वोत्तर), राजभाषा विभाग, गुवाहाटी द्वारा संस्थान का निरीक्षण किया गया। श्री यादव ने संस्थान के हिन्दी प्रकोष्ठ द्वारा किए गये कार्यों का लेखा-जोखा लिया एवं राजभाषा कार्यों की सराहना की। इस अवसर पर एक बैठक-सह-हिन्दी कार्यशाला भी आयोजित की गई।

हिन्दी सप्ताह समारोह - 2014

संस्थान में 15 से 19 सितंबर 2014 तक विभिन्न कार्यक्रमों के साथ हर्षोल्लास से हिन्दी सप्ताह मनाया गया। हिन्दी सप्ताह का शुभारंभ 15 सितंबर को प्रात: उदघाटन समारोह के साथ किया गया जिसमें संस्थान के सभी वैज्ञानिक, अधिकारी, कर्मचारी और शोधार्थी उपस्थित थे। हिन्दी सप्ताह के दौरान कविता पाठ एवं निबंध लेखन, आशुभाषण एवं वाद-विवाद प्रतियोगिताएं आयोजित की गई। हिन्दी सप्ताह के दौरान एक कार्यशाला तथा एक राजभाषा ज्ञान पर लिखित परीक्षा भी आयोजित की गई।

हिन्दी सप्ताह समारोह की झलकियाँ

हिन्दी सप्ताह का समापन दिनांक 19 सितंबर, 2014 को आयोजित एक सभा के जरिए किया गया। इस सभा में संस्थान के वरिष्ठ वैज्ञानिकों, अधिकारीगणों, कर्मचारियों, शोधार्थियों और स्कूली बच्चों ने भाग लिया। समारोह की अध्यक्षता समूह समन्वयक (अनु.) डॉ. आर. के. बोरा ने किया। श्री शंकर शर्मा, हिन्दी अनुवादक ने सप्ताह भर आयोजित कार्यक्रमों का संक्षिप्त प्रतिवेदन प्रस्तुत किया। समापन समारोह में ही राजभाषा हिन्दी में कार्य कर रहे कर्मचारियों को प्रोत्साहित करने के लिए नकद पुरस्कार से सम्मानित किया गया। सप्ताह के दौरान आयोजित विभिन्न प्रतियोगिताओं के विजेताओं को पुरस्कार व प्रमाणपत्र प्रदान किये गये। सभा के सभापित डॉ. आर. के. बोरा ने अपने भाषण में राजभाषा हिन्दी में अधिक से अधिक कार्य करने के लिए जोर दिया।

हिमालयन वन अनुसन्धान संस्थान, शिमला में राजभाषा गतिविधियां

हिमालयन वन अनुसन्धान संस्थान, शिमला

हिन्दी कार्यशाला

हिमालयन वन अनुसन्धान संस्थान, शिमला में 28 जुलाई, 2014 को हिन्दी कार्यशाला का आयोजन किया गया जिसमें कार्यालय के सभी अधिकारियों, वैज्ञानिकों एवं कर्मचारियों ने भाग लिया। कार्यशाला की अध्यक्षता संस्थान के निदेशक, डॉ. वी. पी. तिवारी ने की।

कार्यशाला में हिन्दी अधिकारी, श्री प्रदीप भारद्वाज ने सभी सदस्यों का स्वागत किया तथा राजभाषा अधिनियम 1963 तथा इसके अन्तर्गत बनाए गए राजभाषा नियम 1976 के बारे में विस्तृत जानकारी दी। उन्होंने राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा संघ का राजकीय कार्य हिन्दी में करने के लिए बनाए गए वार्षिक कार्यक्रम और इस दिशा में हिमालयन वन अनुसन्धान संस्थान, शिमला द्वारा किए जा रहे कार्यों से भी अवगत करवाया।

डॉ. वी. पी. तिवारी, निदेशक, हि.व.अ.सं., शिमला राजभाषा कार्यशाला को संबोधित करते हुए

उन्होंने आगे कहा कि हालांकि संस्थान राजभाषा के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य कर रहा है लेकिन अभी इस क्षेत्र में बहुत कुछ किया जाना शेष है। इस अवसर पर डॉ. वी.पी. तिवारी, निदेशक, हि.व.अ.सं., ने अपने संबोधन में सभी अधिकारियों एवं कर्मचारियों से आह्वान करते हुए कहा कि राजभाषा हिन्दी को किसी दबाव में नहीं बल्कि इसे हम सभी दिल से अपनायें।

अंत में संस्थान के समूह समन्वयक (अनुसन्धान) डॉ. के. एस. कपूर ने कार्यशाला में उपस्थित सभी भागीदारों को धन्यवाद किया तथा राजभाषा के विषय में प्रदान की गई महत्वपूर्ण जानकारी की उपस्थित सभी अधिकारियों एवं कर्मचारियों ने सराहना की।

हिन्दी सप्ताह

संस्थान में दिनांक 19 सितम्बर 2014 से 25 सितम्बर 2014 तक हिन्दी सप्ताह का आयोजन किया गया जिसमें संस्थान के अधिकारियों, वैज्ञानिकों एवं कर्मचारियों ने हिन्दी की विभिन्न प्रतियोगिता में भाग लिया। हिन्दी सप्ताह समापन समारोह में डॉ. अश्विनी कुमार, भारतीय पुलिस सेवा, प्रो. चांसलर, ए.पी.जी. विश्वविद्यालय, शिमला मुख्य अतिथि थे। मुख्य अतिथि का स्वागत करते हुए डॉ. तिवारी ने संस्थान के दैनिक कार्यों में बढ़ावा देने की दिशा में किए जा रहे प्रयासों से भी अवगत करवाया। इस अवसर पर हिन्दी अधिकारी श्री प्रदीप भारद्वाज, उप-अरण्यपाल ने बताया कि संस्थान के लगभग 80 प्रतिशत प्रशासनिक कार्य हिन्दी में हो रहे हैं और वैज्ञानिक तकनीकी कार्यों को हिन्दी में करने के लिए संस्थान प्रयासरत है। मुख्य अतिथि डॉ. अश्विनी कुमार ने विजेताओं को बधाई दी और पुरस्कार वितरित किए। मुख्य अतिथि महोदय ने संस्थान द्वारा हिन्दी भाषा को बढ़ावा देने के क्षेत्र में किए जा रहे उत्कृष्ट कार्यों की सराहना की और इस दिशा में निरन्तर प्रयास करते रहने के लिए प्रेरित किया।

हिन्दी सप्ताह समापन समारोह में दीप प्रज्ज्वलित करते हुए मुख्य अतिथि डॉ. अश्विनी कुमार, भा.पु.से.

वन उत्पादकता संस्थान, रांची में राजभाषा गतिविधियां

वन उत्पादकता संस्थान, रांची

वन उत्पादकता संस्थान में दिनांक 01 सितम्बर से 15 सितम्बर 2014 तक हिन्दी पखवाड़ा का आयोजन किया गया। हिन्दी पखवाड़ा के दौरान संस्थान में प्रशासनिक एवं अनुसन्धान सम्बन्धित सभी कार्यकलाप हिन्दी में किए गए एवं इस प्रयास में संस्थान के सभी अधिकारियों एवं कर्मचारियों की सक्रिय सहभागिता रही। इस दौरान राजभाषा कार्यान्वयन समिति के सदस्यों एवं अन्य अधिकारियों तथा कर्मचारियों की एक औपचारिक बैठक दिनांक 15 सितम्बर 2014 को आयोजित की गई। बैठक की अध्यक्षता डॉ. शमीम अख्तर अंसारी, निदेशक और अध्यक्ष, राजभाषा कार्यान्वयन समिति, वन उत्पादकता संस्थान, रांची द्वारा की गई।

इसी क्रम में दिनांक 15 सितम्बर 2014 को डॉ. शमीम अख्तर अंसारी, निदेशक, वन उत्पादकता संस्थान, रांची द्वारा संस्थान की प्रथम हिन्दी वानिकी ई-शोध पत्रिका ''शोधतरू'' के प्रथम अंक का ऑनलाईन विमोचन किया गया। डॉ. संजय सिंह, वैज्ञानिक-ई और सम्पादक, ''शोधतरू'' ने इस पत्रिका के सम्बन्ध में विस्तृत जानकारी दी और कहा कि यह ई-शोध पत्रिका हिन्दी में वानिकी में हो रहे शोध को आम जन तक पहुंचाने का एक नवीन प्रयास है।

हिन्दी पखवाड़ा 2014 के दौरान आयोजित बैठक में डॉ. शमीम अख्तर अंसारी, निदेशक, व.उ.सं., रांची का पुष्प गुच्छ से स्वागत

हिन्दी पखवाड़ा के दौरान विभिन्न प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया। जिसके अन्तर्गत ''*वानिकी शोध एवं विस्तार में हिन्दी की उपयोगिता*'' विषय पर हिन्दी निबन्ध लेखन प्रतियोगिता, ''*वानिकी पर आधारित कोलाज प्रतियोगिता*'' एवं ''*क्विज प्रतियोगिता*'' का आयोजन किया गया। सभी प्रतियोगिताओं में अधिकारियों, कर्मचारियों एवं शोधर्थियों ने बढ़-चढ़ कर भाग लिया।

समारोह में उपस्थित वैज्ञानिकों, अधिकारियों, कर्मचारियों एवं शोधार्थियों को सम्बोधित करते हुए डॉ. शमीम अख्तर अंसारी, निदेशक, व.उ.सं., रांची ने अपने सम्बोधन में संस्थान में हिन्दी में हो रही गतिविधियों एवं कार्यकलापों की सराहना की और कार्यालय के सभी अधिकारियों एवं कर्मचारियों को हिन्दी के प्रचार-प्रसार में उनकी सक्रिय भागीदारी एवं योगदान के लिए बधाई दी। उन्होंने शोध और उससे जुड़े विचारों को हिन्दी भाषा में भी प्रस्तुत करने पर बल दिया। उन्होंने तकनीकी भाषा को सरल करने पर जोर देने की जरूरत बताई जिससे भविष्य में मौलिक और उच्चगुणवत्ता के वानिकी शोध प्राप्त हों। वानिकी शोध ई-पत्रिका ''शोधतरू'' के प्रथम अंक को विमोचित करते हुए कहा कि यह पत्रिका हिन्दी में वानिकी शोध में अहम भूमिका निभायगी साथ ही साथ इस पत्रिका की गुणवत्ता और मौलिकता को बनाए रखने पर भी जोर दिया। इन्होंने संतोष प्रकट करते हुए कहा कि विगत वर्षो में कार्यालय स्तर पर हिन्दी के प्रयोग में निरंतर वृद्धि हुई है। साथ ही हिन्दी में अपनी कार्यक्षमता को और अधिक अग्रसर करने के लिए सभी का आह्वान किया।

हिन्दी पखवाड़ा के दौरान निबन्ध प्रतियोगिता का आयोजन

वानिकी

चारु चंद्र की चंचल किरणें

चारुचंद्र की चंचल किरणें, खेल रहीं हैं जल थल में,
स्वच्छ चाँदनी बिछी हुई है अवनि और अम्बरतल में।
पुलक प्रकट करती है धरती, हरित तृणों की नोकों से,
मानों झूम रहे हैं तरु भी, मन्द पवन के झोंकों से

पंचवटी की छाया में है, सुन्दर पर्ण-कुटीर बना,
जिसके सम्मुख स्वच्छ शिला पर, धीर-वीर निर्भीकमना,
जाग रहा यह कौन धनुर्धर, जब कि भुवन भर सोता है?
भोगी कुसुमायुध योगी-सा, बना दृष्टिगत होता है

क्या ही स्वच्छ चाँदनी है यह, है क्या ही निस्तब्ध निशा,
है स्वच्छन्द-सुमंद गंध वह, निरानंद है कौन दिशा?
बंद नहीं, अब भी चलते हैं, नियति-नटी के कार्य-कलाप,
पर कितने एकान्त भाव से, कितने शांत और चुपचाप!

है बिखेर देती वसुंधरा, मोती, सबके सोने पर,
रवि बटोर लेता है उनको, सदा सवेरा होने पर।
और विरामदायिनी अपनी, संध्या को दे जाता है,
शून्य श्याम-तनु जिससे उसका, नया रूप झलकाता है।

– मैथिलीशरण गुप्त

जलवायु परिवर्तन पर राष्ट्रीय कार्य योजना एवं वानिकी

श्री विजयराज सिंह रावत
भारतीय वानिकी अनुसन्धान एवं शिक्षा परिषद्, देहरादून

जलवायु परिवर्तन आज विश्व की सबसे चितंनीय समस्यायों में से एक है। इसके सम्भावित दुष्परिणामों में विश्व स्तर पर निपटने के लिए भारत विश्व समुदाय के साथ-साथ चलने के लिए वचनबद्ध है। वैश्विक जलवायु परिवर्तन की समस्या की गम्भीरता को देखते हुये भारत सरकार ने जून 2008 में जलवायु परिवर्तन पर राष्ट्रीय कार्ययोजना (ज.प.रा.का.यो.) की घोषणा की। इस कार्य योजना का मुख्य उद्देश्य आर्थिक तथा पर्यावरणीय उद्देश्यों की प्रगति के साथ-साथ सतत् विकास पथ प्राप्त करना है। इस कार्ययोजना के अंतर्गत राष्ट्रीय विकास के साथ-साथ जलवायु परिवर्तन न्यूनीकरण तथा अनुकूलन हेतु कई महत्वपूर्ण सुझाव दिये गये। राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के कई अति महत्वपूर्ण क्षेत्रों में इस कार्यक्रम को मिशन के रूप में चलाने हेतु सरकार ने आठ राष्ट्रीय मिशन घोषित किये। ये सभी राष्ट्रीय मिशन राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के महत्वपूर्ण क्षेत्रों, प्राकृतिक संसाधनों व उनके धारणीय उपयोग से जलवायु परिवर्तन न्यूनीकरण तथा अनुकूलन लक्ष्यों की प्राप्ति पर केन्द्रित है। जलवायु परिवर्तन पर राष्ट्रीय कार्य योजना के अन्तर्गत आठ विभिन्न मिशनों में एक ''हरित भारत मिशन'' वानिकी कार्यों के द्वारा जलवायु परिवर्तन न्यूनीकरण तथा अनुकूलन पर केन्द्रित है। इसके अन्य मिशनों में वानिकी कार्यक्रमों का महत्वपूर्ण योगदान है। प्रस्तुत लेख में विभिन्न मिशनों में वानिकी के योगदान की सम्भावनायें तलाशने का प्रयास किया गया है। जलवायु परिवर्तन पर राष्ट्रीय कार्य योजना के अंतर्गत निम्न आठ मिशन हैं :

1. जवाहर लाल नेहरू राष्ट्रीय सौर ऊर्जा मिशन :

ऊर्जा क्षेत्र के इस महत्वकांक्षी मिशन का उद्देश्य सौर ऊर्जा में वैश्विक नेतृत्व प्राप्त करना तथा नीतिगत तरीके से देशभर में सौर ऊर्जा का विसरण करना है। मिशन तीन चरणों में अपना कार्य पूरा करेगा। प्रथम चरण (2010-13) में सौर ऊर्जा क्षेत्र में सरल विकल्पों को अपनाना, जिन इलाकों में व्यवसायिक ऊर्जा उपलब्ध नहीं है वहां सौर ऊर्जा की पहुंच बनाना तथा विद्युत प्रसारण में कुछ सीमा तक और सौर ऊर्जा उपलब्ध कराना है।

द्वितीय (2013-2017) तथा तृतीय (2017-22) चरण में पूरे देश में सौर ऊर्जा का सघन विकास करना तथा 2022 तक इन सबकी प्राप्ति हेतु मिशन का लक्ष्य है कि :

- 1 लाख मेगावाट सौर ऊर्जा उत्पादन हेतु नीतिगत ढ़ाँचा तैयार करना।
- सौर ऊर्जा यत्रों के निमार्ण हेतु सुविधा तथा बाजार तैयार करना।
- 20,000 मैगा वाट तक गैर-विद्युत पारेषण उपयोग प्रोत्साहित करना।

राष्ट्रीय मिशन	
जवाहर लाल नेहरू सौर ऊर्जा मिशन	2020 तक एक लाख मेगावाट
ऊर्जा क्षमता	2015 तक 23 मिलियन टन तेल समतुल्य ऊर्जा बचत
टिकाऊ पर्यावास मिशन	आवास, व्यावसायिक भवन, सार्वजनिक परिवहन में ऊर्जा सक्षमता, ठोस अपशिष्ट प्रबन्धन
जल मिशन	जल संरक्षण, नदी बेसिन प्रबन्धन
हिमालयी पर्यावास की धारणीयता पर राष्ट्रीय मिशन	10 मिलियन हेक्टेयर वन तथा गैर वन भूमि में वनीकरण
टिकाऊ कृषि मिशन	सूखा राहत, जोखिम प्रबन्धन, कृषि अनुसन्धान
जलवायु परिवर्तन पर रणनितिक ज्ञान हेतु मिशन	अनुसन्धान, प्रशिक्षण एवं आँकड़ा प्रबन्धन

- लगभग 2 करोड़ वर्ग फुट सौर-तापीय, संग्रह क्षेत्र विकसित करना।
- दो करोड़ सौर प्रकाश तंत्र लगाना।

इस मिशन के क्रियान्वयन हेतु सरकार ने बारहवीं पंचवर्षीय योजना में 8,795 करोड़ रूपये का प्रावधान किया है।

2. ऊर्जा सक्षमता विकास पर राष्ट्रीय मिशन :

मिशन का उद्देश्य ऊर्जा क्षेत्र में सक्षम रणनीतियों से सस्ती तथा अधिक कार्यक्षमता प्राप्त कर पारिस्थितिकी सन्तुलन के साथ-साथ विकास करना है। इस मिशन के अन्तर्गत कुछ अभिनव प्रयास निम्न हैं :

अधिक ऊर्जा खपत वाले उद्योगों में ऊर्जा सुधार हेतु बाजार आधारित व्यवस्था लागू करना : ऊर्जा बचत प्रमाण पत्र प्राप्त कर उसका व्यापार किया जा सकता है, इससे उद्योग जगत में ऊर्जा बचत हेतु प्रतिस्पर्धा बढ़ेगी।

ऊर्जा कार्य सक्षमता हेतु बाजार में बदलाव : ऊर्जा सक्षम उपकरणों को प्रोत्साहन देना तथा अधिक से अधिक घरेलू ऊर्जा उपकरण जैसे टी.वी., रेफ्रीजिरेटर, फ्रिज आदि पर स्टार रेटिंग (तीन, चार, पांच वाले सितारे)। उपकरण पर जितने सितारे लगे होंगे उतना ही ऊर्जा सक्षम होगा।

ऊर्जा सक्षमता प्राप्त करने हेतु आर्थिक सुधार लागू करना।

3. टिकाऊ पर्यावास हेतु राष्ट्रीय मिशन

मिशन के उद्देश्य : ऊर्जा सक्षम भवन निर्माण, नगर नियोजन, ठोस तथा तरल अपशिष्ट प्रबन्धन में सुधार, सार्वजनिक यातायात में सुधार तथा ऊर्जा संरक्षण से टिकाऊ पर्यावरण को प्रोत्साहित करना है।

ऊर्जा संरक्षण भवन निर्माण कोड : नयी भवन निर्माण परियोजनायें तथा व्यावसायिक भवनों में ऊर्जा सक्षमता बढ़ाना।

उचित नगर नियोजन, सार्वजनिक यातायात प्रबन्धन में सुधार तथा परिवर्तन, छोटे तथा मंझले शहरों को सक्षम यातायात सुविधाओं से जोड़ना।

ठोस तथा तरल अपशिष्ट का पुनर्चक्रण : अपशिष्ट से ऊर्जा प्राप्त करने की तकनीक तथा अनुसन्धान को प्रोत्साहन देना।

भारत में बड़ी तेजी से शहरीकरण हो रहा है, 1901 में केवल 11 प्रतिशत जनसंख्या शहरी क्षेत्रों में रहती थी यह बढ़कर 2001 में 28.5 प्रतिशत हो गयी तथा 2011 जनगणना के अनुसार 31 प्रतिशत आबादी शहरी क्षेत्रों में रहती है। वनों का शहरी परिवेश में वातावरण को सौम्य बनाने तथा जीवन स्तर सुधारने में महत्वपूर्ण योगदान है। शहरी तंत्र में वृक्ष कई प्रकार की पर्यावरणीय सेवायें, जैसे जैवविविधता संरक्षण, वायुमण्डलीय प्रदूषकों का शमन, ऑक्सीजन उत्पादन, ध्वनि प्रदूषण कम करना, शहरी तापीय द्वीप प्रभाव को कम करना, सूक्ष्म जलवायु में सुधार, मृदा स्थिरीकरण, मृदा क्षरण बचाव, भू-जल का पुनर्चक्रण तथा कार्बन पृथक्करण आदि प्रदान करते हैं।

हरित भारत मिशन का प्रमुख उद्देश्य पांच लाख हेक्टेयर गैर-वन भूमि में वनीकरण करना हैं। शहरी वनीकरण कार्यक्रमों में हरित भारत मिशन से खाली पड़ी शहरी भूमि पर वनीकरण कार्यक्रम, धारणीय पर्यावास पर्यावरण हेतु राष्ट्रीय मिशन के उद्देशों की पूर्ति में सहायक होंगे।

राष्ट्रीय जल मिशन :

मिशन का मुख्य उद्देश्य जल संरक्षण, जल की बर्बादी को कम करना तथा एकीकृत जल संसाधन विकास एवं प्रबन्धन द्वारा राज्यों में अन्तर्राज्यीय स्तर पर एक समान वितरण व्यवस्था स्थापित करना है। जल संसाधनों पर जलवायु परिवर्तन के प्रतिघात का आकलन तथा जल संसाधनों के विस्तृत आँकड़ों का आधार तैयार कर सार्वजनिक करना है।

जल प्रयोग क्षमता को 20 प्रतिशत तक बढ़ाना : बेसिन स्तर पर एकीकृत जल संसाधन प्रबन्धन को प्रोत्साहित करना, जल के अत्यधिक दोहन तथा भेद्य क्षेत्रों में विशेष ध्यान देना। इस मिशन के क्रियान्वयन हेतु 11$^{वीं}$ तथा 12$^{वीं}$ पंचवर्षीय योजना में 89,101 करोड़ रूपये व्यय का प्रावधान रखा गया है।

टिकाऊ हिमालयी परितंत्र पर राष्ट्रीय मिशन :

मिशन का उद्देश्य हिमालयी हिमनदो (ग्लेशियर) तथा पर्वतीय पारिस्थितिकी तंत्रों की धारणीयता एवं सुरक्षा हेतु प्रबन्धन विधियों का विकास, हिमालयी हिमनद्, जैवविविधता, वन्य जीव संरक्षण, पारम्परिक ज्ञान तथा जीविकोपार्जन पर जलवायु परिवर्तन के प्रभावों आदि अति महत्वपूर्ण विषयों को परिभाषित करना है। मिशन के अन्तर्गत हिमालयी हिमनद्

विज्ञान पर एक आधुनिक राष्ट्रीय संस्थान की स्थापना भी शामिल है। मिशन हिमालयी क्षेत्रों में कार्यरत विभिन्न वैज्ञानिक संस्थानों की नेटवर्किंग कर हिमालय पारिस्थितिकी धारणीयता हेतु क्षमता विकास पर मुख्यत: केन्द्रित रहेगा। हिमालयी क्षेत्र में स्थित संस्थानों में लगभग 10 नये केन्द्रों की स्थापना कर ज्ञान वर्धन हेतु तंत्र स्थापित किया जायेगा।

हिमालय पारिस्थितिकी तंत्र की धारणीयता में दक्ष 25 हिमनद विज्ञानियों सहित कम से कम 100 विशेषज्ञों की पहचान तथा क्षमता विकास।

पारम्परिक तथा नवीन जानकारी को जोड़ने हेतु 25 क्षमता विकास कार्यक्रम प्रस्तावित हैं। हिमालयी क्षेत्र में हो रहे परिवर्तनों को भली भांति समझने हेतु प्रेक्षणालयों के नेटवर्क की स्थापना करना भी इस मिशन में शामिल है।

इस मिशन में 2010 से 2017 तक 1,695 करोड़ रूपये के व्यय का प्रावधान है। भारत सरकार का विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय इस मिशन के क्रियान्वयन हेतु नोडल मंत्रालय है।

हिमालयी क्षेत्र प्रचुर वन सम्पदा से सम्पन्न है। भारतीय उपमहाद्वीप की प्रमुख नदियों का स्रोत, सिंचाई, जल विद्युत परियोजनायें हिमालयी क्षेत्रों में है। हिमालयी परितंत्रों का सतत् प्रबन्ध राष्ट्र की जैवविविधता एवं पारिस्थितिकीय सुरक्षा के लिए महत्वपूर्ण है। मिशन के क्रियान्वयन के महत्वपूर्ण दिशा-निर्देशों में कई विषयों पर चर्चा की गई है, जैसे शहरीकरण, पर्यटन, जल सुरक्षा, ऊर्जा, वन प्रबन्धन तथा ढाचांगत सुविधायें। हिमालयी क्षेत्रों का लगभग 41.5 प्रतिशत भाग वनाच्छादित है इन वनों से नाना प्रकार की पर्यावरणीय सेवायें प्राप्त होती हैं। हिमालय का अत्यधिक हरित क्षेत्र वायुमण्डलीय कार्बन डाईऑक्साइड को सोखने में महत्वपूर्ण योगदान देता है। इस मिशन के अंतर्गत हिमालयी क्षेत्रों के 2/3 भाग को वनाच्छादित करने का लक्ष्य रखा गया है, जिसमें स्थानीय एवं प्रतिभागी समुदायों की महत्वपूर्ण भूमिका होगी तथा पर्यावरणीय सेवाओं के भुगतान का प्रयास किया जायेगा।

हरित भारत मिशन :

ज.प.रा.का.यो. के इस महत्वकांक्षी मिशन का उद्देश्य अनुकूलन तथा न्यूनीकरण उपायों से वनों में कार्बन संग्रह में वृद्धि के साथ-साथ वन क्षेत्रों का सतत् विकास है। उक्त उद्देश्य की प्राप्ति हेतु मिशन का लक्ष्य अगले 10 वर्षों में 5 लाख हेक्टेयर निम्नीकृत वनों को सघन करना तथा अन्य 5 लाख हेक्टेयर गैर-वन भूमि में वनीकरण करना है।

दस लाख हेक्टेयर क्षेत्रफल के उपचार के फलस्वरूप वनों से प्राप्त पारिस्थितिकी सेवाओं, जैवविविधता, जल सेवा, कार्बन संग्रहण आदि सेवाओं में सुधार करना तथा वन एवं वन क्षेत्रों के आसपास रहने वाले समुदायों की वनों पर आधारित जीविकोपार्जन क्षमता में वृद्धि भी मिशन का उद्देश्य है।

वर्ष 2020 तक वनों की कार्बन संग्रहण क्षमता 50-60 मिलियन टन प्रतिवर्ष तक बढ़ाना।

हरित भारत मिशन की कुल लागत 46000 करोड़ रूपये है। पिछले वर्ष लीमा (पेरू) में आयोजित संयुक्त राष्ट्र जलवायु परिवर्तन सम्मेलन में भारत के पर्यावरण वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्री श्री प्रकाश जावड़ेकर ने इस मिशन हेतु एक मुश्त 10 हजार करोड़ (60 मिलियन हॉलर) निर्गत करने की घोषणा की थी, इस घोषणा से इस मिशन के अन्तर्गत हो रहे कार्यों को अवश्य प्रोत्साहन मिलेगा। यह मिशन भारत सरकार के पर्यावरण, वन एवं जंलवायु परिवर्तन मंत्रालय के अधीन संचालित हो रहा है।

जलवायु परिवर्तन हेतु सामरिक ज्ञान हेतु राष्ट्रीय मिशन :

इस मिशन का प्रमुख उद्देश्य अनुसन्धान एवं तकनीक के विकास से जलवायु परिवर्तन जनित चुनौतियों की पहचान कर उचित प्रतिक्रिया करना; जलवायु परिवर्तन के विभिन्न पहलुओं पर उच्च गुणवत्ता केन्द्रित अनुसन्धान हेतु वित्तीय संसाधन सुनिश्चित करना है। अपने उद्देश्य प्राप्ति हेतु मिशन ज्ञान नेटवर्क स्थापित करेगा, जिनका मुख्य कार्य :

- जलवायु आधारित अनुसन्धान क्षमता में वृद्धि,
- जलवायु परिवर्तन पर विभिन्न राष्ट्रीय मिशनों के अंतर्गत जलवायु अनुकूलन तथा न्यूनीकरण हेतु उपयुक्त तकनीक का विकास करना तथा
- जलवायु परिवर्तन पर राष्ट्रीय कार्य योजनांतर्गत विभिन्न मिशनों के क्रियान्वयन में कार्य कर रही संस्थाओं की जहां भी आवश्यक हो सहायता करना है।

बारहवीं पंचवर्षीय योजनांतर्गत इस मिशन हेतु 2500 करोड़ रूपये का प्रावधान है। भारत सरकार के विज्ञान एवं

प्रौद्योगिकी मंत्रालय को इस मिशन का नोडल उत्तरदायित्व दिया गया है।

विश्व स्तर पर वनों का वितरण, संरचना तथा पारिस्थितिकी में जलवायु का महत्वपूर्ण योगदान है, अत: यह अवश्यम्भावी है कि जलवायु परिवर्तन से वानस्पतिक आवरण भी प्रभावित होगा। जलवायु परिवर्तन से वनस्पतियों, प्राकृतिक पारिस्थितिकी तंत्रों आदि में होने वाले कई परिवर्तन अपरिवर्तनीय होंगे, अत: यह मिशन वन एवं जलवायु परिवर्तन के निम्न आयामों में विशेष अध्ययन कर सकता है:

1. जलवायु परिवर्तन रूझानों से वन पारिस्थितकी तंत्र में होने वाले परिवर्तनों की माडलिंग आधारित अध्ययन तथा अनुसन्धान,
2. वन पारितंत्रों में अनुकूलन तथा भेद्यता पर अनुसन्धान : जलवायु परिवर्तन से वन पारितंत्रों में होने वाले प्रभावों की जानकारी अभी अपूर्ण है। यह मिशन इस दिशा में कार्य कर हरित भारत मिशन के उद्देश्यों की पूर्ति में योगदान कर सकता है।

धारणीय कृषि पर राष्ट्रीय मिशन :

कृषि को पारिस्थितिकी रूप से धारणीय जलवायु अनुकूल उत्पादन तंत्र में परिवर्तन के साथ-साथ इसकी पूर्ण क्षमता के दोहन से खाद्य सुरक्षा को सुनिश्चित करना, खाद्य संसाधनों की न्याय संगत पहुंच, जीविकोपार्जन अवसरों में बढ़ोत्तरी तथा राष्ट्रीय स्तर पर आर्थिक स्थिरता में योगदान इस मिशन के प्रमुख उद्देश्य है।

मिशन लक्ष्य तथा समय सीमा : अपने उद्देश्यों की पूर्ति हेतु मिशन की प्रमुख कार्ययोजना निम्न है:

- वर्षा आधारित कृषि क्षेत्रों का विकास : कृषि तंत्रों के साथ प्राकृतिक संसाधनों का विकास तथा संरक्षण हेतु क्षेत्रीय अवधारणा,
- कृषि जल प्रबन्धन : प्रभावी जल प्रबन्धन तकनीक तथा उपकरणों को प्रोत्साहित कर जल प्रयोग क्षमता को बढ़ाना,
- मृदा स्वास्थ्य सुधार : स्थानीय तथा फसल आधारित मृदा स्वास्थ्य प्रबन्धन को प्रोत्साहन,
- जलवायु परिवर्तन तथा धारणीय कृषि,
- जलवायु परिवर्तन सबन्धित ज्ञान का अनुसन्धान संस्थानों से कृषकों तथा कृषकों से सस्थानों में आदान-प्रदान।

इस मिशन के क्रियान्वयन हेतु 12वीं पंचवर्षीय योजना के अंत तक 1,08,000 करोड़ रूपये का प्रावधान रखा गया है।

धारणीय कृषि :

धारणीय कृषि का राष्ट्रीय मिशन में भी वानिकी की महत्व भूमिका तलाशी जा सकती है। भारत में वानिकी का कृषि उत्पाद में काफी योगदान रहा है। कृषि वानिकी जैसे कार्यक्रम धारणीय कृषि उत्पाद में काफी योगदान देते हैं। पर्वतीय क्षेत्रों में ढलानों पर लगातर कृषि से मृदा क्षरण की संभावनायें बनी रहती हैं। वनीकरण करने से पहाड़ी ढ़लाने पर मृदा स्थिरिकरण में काफी सहायता होगी।

हरित भारत मिशन तथा कृषि मिशन में आपस में सहयोग की कई सम्भावनायें हैं तथा ये एक दूसरे के उद्देश्यों की पूर्ति में सहायक हो सकते हैं।

जलवायु परिवर्तन पर राज्य कार्य योजनायें :

वर्ष 2008 में ज.प.रा.का.यो. की घोषणा के बाद भारत सरकार ने सभी राज्यों से भी राष्ट्रीय कार्य योजना के समरूप जलवायु परिवर्तन पर राष्ट्रीय कार्य योजना बनाने का आह्वान किया, राष्ट्रीय तथा राज्य स्तरीय कार्यक्रमों में समरूपता लाने हेतु एक रूप रेखा विकसित की गई जिसके अंतर्गत विभिन्न चरणों में यह कार्य योजना बनाना तथा इसका क्रियान्वयन करना है। केन्द्र सरकार ने राज्यों को जलवायु परिवर्तन कार्य योजना बनाने हेतु तकनीकी तथा आर्थिक सहायता प्रदान की है। अब तक 30 राज्य केन्द्र सरकार को अपनी कार्ययोजना भेज चुके है।

जलवायु परिवर्तन पर राष्ट्रीय कार्य योजना की सफलता राज्य कार्य योजनाओं के उचित क्रियान्वयन पर काफी कुछ निर्भर करती है क्योंकि इन योजनाओं के अंतर्गत होने वाले कार्यों का निष्पादन राज्य स्तर पर ही होना है। विभिन्न मिशनों के अंतर्गत होने वाले कार्यक्रमों को धरातल पर सफल बनाने हेतु केन्द्रीय ऐजेंसियों तथा राज्य सरकारों की मशीनरी में समन्वय की अत्यन्त आवश्यकता है।

सामाजिक वानिकी की आवश्यकता

डॉ. ओम कुमार एवं श्री सुधीर कुमार
भारतीय वानिकी अनुसन्धान एवं शिक्षा परिषद्, देहरादून

जब हम सामाजिक वानिकी की आवश्यकता की बात करते हैं तो सर्वप्रथम हमारा ध्यान इस बात पर जाता है कि सामाजिक वानिकी क्या है? सामाजिक वानिकी, वानिकी की वह शाखा है जिसके अन्तर्गत पेड़-पौधे ऐसी भूमि पर लगाये जाते हैं जो वन क्षेत्र से बाहर हो और ग्रामीण व शहरी जनता की दैनिक आवश्यकताओं जैसे ईधन, चारा, लकड़ी, खाद आदि की पूर्ति करे और वायु व भूमि के कटाव को रोके। पहाड़ों में तीव्र ढाल वाली भूमि को तेज वर्षा के प्रवाह से बचाने के लिए भी वृक्ष अत्यन्त आवश्यक हैं। वन क्षेत्र कम होने से पहाड़ों में भूस्खलन होने लगा है जिससे बाढ़ व सूखे जैसी विपदाओं में वृद्धि हो रही है। वनों में कमी होने से प्राकृतिक वातावरण पर भी विपरीत प्रभाव पड़ता है। वृक्ष हमें प्राणदायक वायु आक्सीजन प्रदान करते हैं तथा वातावरण से कार्बनडाई आक्साइड गैस की मात्रा को कम करते हैं।

ग्रामीण क्षेत्रों में भी वृक्ष विनाश काफी हुआ है और एक तरफ बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण शायद कोई ही ऐसा गांव हो जो अपने ईधन, चारे और लकड़ी की आवश्यकता के मामले में आत्मनिर्भर हो। दूसरे लकड़ी की कमी में ग्रामवासी गोबर को उपलों के रुप में जलाते हैं जिससे रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता बढ़ती है।

उपर्युक्त अनेक कारणों से आज हमें वृक्ष, पौधे एवं उपयोगी घास पैदा करने की और भी अधिक आवश्यकता हो गई है। इसके लिए यह जरुरी है कि बंजर भूमि में, सड़कों, रेलवे लाइनों व नहरों के किनारे तथा ग्रामीण क्षेत्रों में पंचायती चरागाहों, खेतों की मेड़ों पर अधिक से अधिक वृक्ष लगाये जायें।

सामाजिक वानिकी को हम तीन भागों में बांट सकते हैं।

1. **कृषि वानिकी :** साधारणत: कृषि फसलों के साथ-साथ वृक्ष उगाने को कृषि वानिकी कहते हैं। इन पेड़-पौधों से किसानों को उनकी उपज के साथ-साथ जलाऊ लकड़ी, चारा, इमारती लकड़ी व खाद प्राप्त होती है। भूमि प्रबन्ध का भी यह एक अच्छा तरीका है जिससे किसानों को अपनी फसल के साथ-साथ अतिरिक्त आय प्राप्त होती है और साथ ही साथ भूमि को उचित संरक्षण भी मिलता है। कृषि वानिकी के अन्तर्गत शीशम, पॉपलर, सूबबूल, जामुन, यूकेलिप्टस हाईब्रिड, भीमल, शहतूत के वृक्ष उगाना उत्तम है। यद्यपि वृक्षों का कुछ हद तक कृषि फसलों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है परन्तु दूसरी तरफ ईधन, चारा व मृदा कटाव में कमी करके काफी हद तक क्षतिपूर्ति कर देते हैं।

2. **प्रसार वानिकी :** इसके अर्न्तगत वे पेड़-पौधे आते हैं जो नहरों, सड़कों व रेलवे लाइनों के किनारों, बड़ी विद्युत लाइनों व भूमि को पुन: स्थापित करने के लिए लगाये जाते हैं जैसे :

   (i) **नहरों के किनारे :** शीशम, आम, पॉपलर, शहतूत, कटहल, अर्जुन, *एकेशिया ऐराविका, एकेशिया इन्डिका*।

   (ii) **रेलवे लाइनों के किनारे :** इन स्थानों पर पानी का कोई प्रबन्ध नहीं हो पाता है इसलिए इन स्थानों पर एगैव, ऐसन्डो, बांस व मूंज, यूकेलिप्टस, *एकेशिया ऐरेबिका, ऐलबीजीया लिमब*।

   (iii) **सड़कों के किनारे :** सड़कों के किनारे शीशम, नीम, अमलताश, मन्दारा, सैवला, आम, जामुन कटहल, शहतूत आदि पेड़ सड़कों के किनारे लगाये जा सकते हैं।

   पेड़-पौधों का चुनाव उस क्षेत्र की आवश्यकता व अनुकूलता को मध्यनजर रखते हुए करना चाहिए।

3. **मिलीजुली वानिकी :** वह वानिकी है जिसके अन्तर्गत परती भूमि, पंचायत भूमि और गाँव की अन्य भूमि पर फल, चारे व जलाऊ लकड़ी के वृक्षों के साथ-साथ चारे के लिए घास भी उगायी जाती है। जैसे-दूनघाटी की पथरीली भूमि में भीमल वृक्षों के साथ भाभर घास लगाना।

सामाजिक वानिकी के लाभ - सामाजिक वानिकी से अनेक लाभ है जैसे :

1. सामाजिक वानिकी से ग्रामीण व शहरी जनता को दैनिक आवश्यकता जैसे ईधन, चारा, लकड़ी, खाद आदि घर के पास उपलब्ध होती है।
2. स्वस्थ पर्यावरण बनाये रखने में सहायक है।
3. प्रदूषण को कम करते है।
4. उद्योगों को कच्चा माल उपलब्ध कराते हैं।
5. वायुवेग को कम करते हैं।
6. भूमि कटाव को रोकते हैं।
7. छाया प्रदान करते हैं।
8. प्राकृतिक वनों पर दबाव कम करने में भी सामाजिक वानिकी का विशेष योगदान है।

उपरोक्त सभी उपयोगों को मध्यनजर रखते हुए आज सामाजिक वानिकी की अत्यन्त आवश्यकता है क्योंकि सामाजिक वानिकी के द्वारा ही आज ग्रामीण जनता की दैनिक आवश्यकता जैसे ईधन, चारा, इमारती लकड़ी, रेशे व खाद की पूर्ति हो सकती है। सामाजिक वानिकी के अन्तर्गत पेड़-पौधे लगाने के फलस्वरुप गांव में किसानों की आर्थिक दशा बहुत सुधर गयी है। कुछ वृक्ष जो सामाजिक वानिकी के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं, जैसे-आँवला, शीशम, नीम, कटहल, सूबबूल, पॉपलर व भीमल आदि।

1. आँवला :

आँवला बहुउपयोगी वृक्ष है। इसका काष्ठ लाल, कठोर होता है जिसका उपयोग कृषि उपकरण बनाने में होता है। इसकी लकड़ी पानी में भी टिकाऊ है और कुंआ निमार्ण कार्य के लिए उपयुक्त है। इसका ईधन के रुप में भी उपयोग होता है। देशी दवाई के लिए इसका फल सर्वश्रेष्ठ है। यह विटामिन सी का सबसे बड़ा प्राकृतिक स्रोत है। इसका उपयोग अचार व मुरब्बा बनाने में किया जाता है तथा पत्तियों का उपयोग पशुओं के लिए चारे के रुप में भी किया जाता है।

2. शीशम :

यह एक बहुत उपयोगी वृक्ष है। ये रेत, रोड़ी व पत्थर युक्त भूमि में अच्छी तरह उगता है। सामाजिक वानिकी के अन्तर्गत शीशम के रोपण हेतु फार्म, खेती की मेढ़, बंजर भूमि, पंचायती भूमि तथा सड़कों के किनारे, नहर तट, रेलवे लाइन के निकट की भूमि, पार्क, विद्यालयों एवं महाविद्यालयों के प्रांगण तथा औद्योगिक क्षेत्रों के अहाते उपयुक्त स्थान हैं।

उपयोग : सामाजिक वानिकी कार्यक्रम के अन्तर्गत शीशम रोपण जनता की इमारती लकड़ी व ईधन की आवश्यकताओं की आपूर्ति करता है। इसका उपयोग फर्नीचर और हल बनाने में किया जाता है।

इसकी पत्तियाँ पशुओं को भी खिलाई जाती है। उत्तर प्रदेश में शीशम की कलियों को चारे की दुर्लभता के संकटपूर्ण दिनों में चारे के रुप में प्रयोग किया जाता है।

3. भीमल :

पहाड़ों में घास-चारा देने वाला यह अत्यन्त महत्वपूर्ण वृक्ष है। जिस पर वहां के निवासियों की पूर्ण अर्थव्यवस्था आश्रित है। इसको ग्रामीण अपने खेतों के आस पास उगाते हैं। भीमल के चारे में प्रोटीन अच्छी मात्रा में पाई जाती है। चारा पत्ती के बाद जो शाखा शेष रहती है, उनसे ग्रामीण लोग टोकरियां बनाते हैं, जो घर के दैनिक उपयोग में आती हैं। इसके रेशे से रस्सी बनती है। भीमल के पेड़ के सूखने पर उत्तम किस्म का जलाऊ ईधन प्राप्त होता है। भीमल के फल गाँव में बड़े आनन्द से खाये जाते हैं।

4. नीम :

नीम का हर भाग महत्वपूर्ण है। नीम की पत्तियाँ बहुउपयोगी है। इनको उबाल कर पीने से व नहाने से विषैले जीवाणु मरते हैं। इसकी सूखी हुई पत्तियाँ मच्छर आदि से बचाव करती है। पत्तियां और फल दोनों कीटनाशक होते हैं। इसके फलों से तेल प्राप्त होता है जो कुष्ठ और चर्म रोगों की प्रभावकारी औषधि है। तेल की मालिश (गठिया) रोगियों के लिए लाभकारी होती है। छाल और गोंद से महत्वपूर्ण दवायें बनती हैं। नीम शाखा का उपयोग दन्त मंजन के रूप में किया जाता है। नीम की पत्ती का उपयोग किसी भी तरह के अनाज को संग्रहित करने में किया जाता है।

5. पॉपलर :

यह वृक्ष बहुप्रयोजनीय तथा तीव्रता से उगने वाला है। यह साधारण ऊँचाई और सादी पत्तियों वाला पर्णपाती वृक्ष है। उत्तर प्रदेश, हरियाणा, पंजाब और हिमाचल प्रदेश में पॉपलर वृक्ष कृषि वानिकी के अर्न्तगत सफलता पूर्वक उगाया जाता है। इस वृक्ष को गेहूं, दाल, धान, सरसों बरसीम तथा सब्जियों जैसे गाजर, शलगम, सोयाबीन, मटर, टमाटर, अदरक, हल्दी आदि के साथ संयुक्त रुप से उगाया जा सकता है।

उपयोग : पॉपलर की काष्ठ का उपयोग परती काष्ठ की स्तरण, फाइबर बार्ड, हल्के पैकिंग की पेटियां, माचिस, साधारण फर्नीचर, कागज और पैंसिल, कृषि यन्त्र, सजावटी काष्ठ तथा ईधन के लिए किया जाता है।

प्रवर्धन : साधारत: पॉपलर का प्रवर्धन कलम लगाकर किया जाता है।

रोपण का समय : पॉपलर के रोपण के लिए जनवरी माह का समय उपयुक्त है।

माँ

जाती हुई धूप संध्या की
सेंक रही है माँ,
अपना अप्रासंगिक होना
देख रही है माँ।

भरा हुआ घर है
नाती पोतों से, बच्चों से,
अन बोला बहुओं के बोले
बंद खिड़कियों से,
दिन भर पकी उम्र के घुटने
टेक रही है माँ।

फूली सरसों नहीं रही
अब खेतों में मन के,
पिता नहीं हैं अब नस नस
क्या कंगन सी खनके,
रस्ता थकी हुई यादों का
छेक रही है माँ।

बुझी बुझी आँखों ने
पर्वत से दिन काटे हैं,
कपड़े नहीं, अलगनी पर
फैले सन्नाटे हैं,
इधर उधर उड़ती सी नजरें
फेक रही है माँ।

– यश मालवीय

यूकेलिप्टस वृक्ष पर पिटिकायें या गाँठें (Galls) बनाने वाला कीट- लेप्टोसाइबे इनवासा (*Leptocybe invasa*) का आक्रमण तथा उसका नियन्त्रण

डॉ. मौ. यूसुफ, डॉ. सुधीर सिंह, श्री राम बहादुर सिंह तथा श्री संदीप
वन अनुसन्धान संस्थान, देहरादून

परिचय :

यूकेलिप्टस, आस्ट्रेलिया मूल का वृक्ष है। इसका सामान्य नाम सफेदा एवं कुल माइरटेसी (Myrtaceae) है। पूरे विश्व में इस वृक्ष की 900 प्रजातियाँ पायी जाती हैं। भारत में यूकेलिप्टस का इतिहास सन् 1790 से मिलता है, जब मैसूर के शासक टीपू सुल्तान ने इसे बैंगलौर में अपने महल के बगीचे में लगाया था। उस समय इसकी लगभग 16 प्रजातियों के बीज आस्ट्रेलिया से प्राप्त हुये थे। सन् 1843 में यूकेलिप्टस को तमिलनाडु राज्य में नीलगिरी पहाड़ियों में लगाया गया था, तथा वन विभाग का प्रथम यूकेलिप्टस वृक्षारोपण 1877 में मालाबावी एवं तुम्कुर में हुआ था।

यह वृक्ष आर्थिक दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है। कृषि वानिकी के अंतर्गत किसानों को कृषि क्षेत्रों में खेतों की मेंड़ों पर तथा सिंचाई की नहर के दोनों तरफ यूकेलिप्टस लगाने के लिए उत्साहित किया जाता है। इस वृक्ष का उपयोग कागज, प्लाइवुड, फर्नीचर, इमारती लकड़ी, खम्भे, सुरभित तेल आदि प्राप्त करने में किया जाता है। इस वृक्ष के फूलों से मधुमक्खी पालन द्वारा शहद भी प्राप्त किया जाता है। यूकेलिप्टस की अनेकों प्रजातियाँ जैसे *यूकेलिप्टस ग्लोबुलस* (*Eucalyptus globulus*), *यूकेलिप्टस रोबस्टा* (*Eucalyptus robusta*), *यूकेलिप्टस मैकुलेटा* (*Eucalyptus maculata*) आदि से बहुमूल्य गोंद प्राप्त किया जाता है। भारत में कृषि वानिकी में मुख्य रूप से *यूकेलिप्टस कमलडुलेन्सिस* (*Eucalyptus camaldulensis*), *युकेलिप्टस टैरेटीकोर्निस* (*Eucalyptus teretecornis*) आदि लगाये जाते हैं।

यूकेलिप्टस के रोपित वृक्ष

यह वृक्ष उष्णकटिबंधीय (Tropical) व उपोष्णकटिबंधीय (Sub-tropical) देशों में बड़ी मात्रा में उगाया जा रहा है। *यूकेलिप्टस* के पौधों को दीमक (Termites), वेद्यक (Borers) जैसे *सीलोस्टरना* प्रजा. (*Celosterna* spp.), निषपत्रक (Defoliator), रसचूसक (Sap suckers) आदि कीटों व सफेद फफूँद (*Cylindrocladium* spp., *Corticium* spp., *Botryodiplodia* spp. and *Ganoderma* spp.) इत्यादि द्वारा नुकसान पहुँचता है।

यूकेलिप्टस में पूर्व में ज्ञात सामान्य कीटों के अतिरिक्त सन् 2000 से एक आस्ट्रेलियाई मूल का कीट अचानक आस्ट्रेलिया के बाहर यूकेलिप्टस के पौधों में फैल गया, जो इस पौधे की पत्तियों की मध्यशिराओं, शिराओं, डंठलों, कोमल तनों आदि पर गाँठें या पिटिकाएं बना देता है, जिस कारण यूकेलिप्टस के पौधे विकृत हो जाते हैं और अपनी वृद्धि खो देते हैं। आश्चर्य इस बात का है कि आस्ट्रेलिया में इसका प्रकोप इतना कम था कि इस कीट के भयंकर प्रकोप का किसी को भी आभास नहीं हो पाया। जब इस कीट के द्वारा यूकेलिप्टस के पौधों में महामारी का रूप धारण किया तब इजराइल के वैज्ञानिकों का ध्यान इस कीट की खोज पर आकर्षित हुआ और सन् 2004 में मेन्डल तथा सहयोगियों ने इस कीट का *लेप्टोसाइबे इनवासा* (*Leptocybe invasa*) के नाम से नामकरण किया। *लेप्टोसाइबे इनवासा* को फाईलम-आर्थोपोडा, वर्ग-इनसेक्टा, गण-हाइमेनोप्टेरा, कुल-युलोफिडी में रखा गया है। इसे ब्लूगम चाल्सिड (Blue gum chalcid) भी कहते हैं।

वितरण (Distribution) :

यह आस्ट्रेलिया का मूल रहवासी (Original inhabitant) कीट है। इस कीट को लगभग सभी यूकेलिप्टस वृक्षों को उगाने वाले देशों जैसे अफ्रीका, एशिया, यूरोप, उत्तरी अमेरिका, भूमध्यसागरीय देशों में तथा केन्या (2002), युगाण्डा (2002), तंजानिया (2005), दक्षिण अफ्रीका (2007) में भयंकर प्रकोप के साथ उल्लेखित किया गया है।

इस कीट को भारत में पहली बार सन् 2001 में कर्नाटक राज्य के मान्डया जिले में देखा गया था तथा सन् 2002 में तमिलनाडु राज्य के विल्लीपुरम् जिले में भी इसका प्रकोप पाया गया था। तदुपरान्त 2010-11 से इस कीट के प्रकोप से हरियाणा, पंजाब, उत्तराखण्ड तथा उत्तरप्रदेश में यूकेलिप्टस वृक्ष उगाये जाने वाले क्षेत्रों में भारी नुकसान पहुँचा है।

पोषिता (Hosts) :

मेन्डल ने यूकेलिप्टस पौधों की 36 प्रजातियों पर प्रयोग करके यह देखा कि इनमें से 10 प्रजातियाँ, *लेप्टोसाइबे इनवासा* कीट द्वारा पिटिकायें बनाने के लिए अनुकूल पायी गयीं हैं, जो निम्न प्रकार हैं:

यूकेलिप्टस कमलडुलेन्सिस (Eucalyptus camaldulensis), यूकेलिप्टस टेरेटीकोर्निस (Eucalyptus tereticornis), यूकेलिप्टस बोट्रियोडिस (Eucalyptus botryoides), यूकेलिप्टस ग्रेण्डिस *(Eucalyptus grandis), यूकेलिप्टस रोबस्टा (Eucalyptus robusta), यूकेलिप्टस सेलिग्ना (Eucalyptus saligna), यूकेलिप्टस ब्रिजिसियाना (Eucalyptus bridgesiana), यूकेलिप्टस गलोबूलस (Eucalyptus globulus), यूकेलिप्टस गन्नीई (Eucalyptus gunnii)* तथा *यूकेलिप्टस विमिनेलिस (Eucalyptus viminalis)*।

क्षति (Damage) :

लेप्टोसाइबे इनवासा कीट *यूकेलिप्टस* पौधशालाओं में छोटे पौधों तथा बड़े वृक्षों की पत्तियों की मध्यशिराओं (midribs), नये कोमल तनों, डंठलों व नयी शाखाओं पर

यूकेलिप्टस पौधे पर पिटिकायें

पिटिकायें बना देता है, जिससे यूकेलिप्टस पौधों को नुकसान पहुँचता है तथा अधिक प्रकोप की अवस्था में यूकेलिप्टस के पौधों की वृद्धि रूक जाती है और मूल प्ररोह से गुच्छे में अनेकों शाखाएं निकल आती हैं। प्राय: पौधों पर पिटिकाएं इतनी बड़ी तथा भारयुक्त होती हैं कि उनके भार से पौधा झुक जाता है। ऐसा भी देखा गया है कि रोपित पौधा पिटिकाओं के भार से झुक कर शाखाएं टूट जाती हैं तथा सूख जाती हैं।

लेप्टोसाइबे इनवासा कीट की जैविकी (Biology of *Leptocybe invasa*) :

लेप्टोसाइबे इनवासा

मादा *लेप्टोसाइबे इनवासा* कीट लगभग 1.1-1.4 मि.मी. लम्बी होती है। कीट का शरीर गहरे भूरे रंग व हरी, नीली चमक लिए हुए होता है। इसका अगला कक्षांग (Coxa) पीले रंग का, मध्य व पिछला कक्षांग शरीर के रंग अनुसार भूरा होता है। टागें एवं टार्सी पीले, श्रंगिक (Antenna) का आधारखण्ड (Scape) पीला व अन्य खण्डों पर भूरे रंग की धारियाँ होती हैं।

मेन्डल तथा सहयोगियों के अनुसार इस कीट को अण्डा निक्षेपण से वयस्क कीट के बाहर निकलने में लगभग 134

दिन लगते हैं तथा इस अवस्था में सामान्य तापमान (25°C) उपयुक्त होता है। इन कीटों में मादा कीट की संख्या अधिक पायी जाती है तथा नर कीट यदा-कदा ही देखे गये हैं। मादा कीट में प्रजनन अनिषेक जनन (Parthenogenesis) विधि द्वारा होता है।

वयस्क कीट का जीवन 3 दिन से 5 दिन तक होता है परन्तु शहद के पानी में बने घोल (50%) को भोजन के रूप में देने से इसके जीवनकाल को 6 से 9 दिन तक बढ़ाया जा सकता है। मादा कीट अपने जीवनकाल में 80 से 100 तक अण्डे पौषक पौधे की बाहय त्वचा में देती है। अण्डे सफेद, अण्डाकार, अर्धपारदर्शी व एक सिरे पर खुरदरे होते है।

पौषक पौधे पर अण्डे देने के स्थान पर रासायनिक क्रिया द्वारा स्राव निकलता है, जो अण्डों को ढक लेता है और कुछ समय बाद पौधे का यह भाग फूलना आरम्भ हो जाता है। पौधे के इसी फूले भाग को गाँठ या पिटिका (gall) कहते हैं।

नर *लेप्टोसाइबे इनवासा*, मादा के आकार के ही होते हैं तथा उनके सिर (Head) व मीसोसोमा (mesosoma) पर भूरे रंग के एवं नीली, हरी चमक लिए हुए होते हैं। मेटासोमा (metasoma) भूरे रंग का, टांगें, व श्रृंगिकाएं (Antennae) पीले रंग के होते हैं। मादा कीटों के साथ-साथ नर कीटों की भी भारत में उपस्थिति पायी गयी है।

लेप्टोसाइबे इनवासा कीट द्वारा पिटिकाएं (galls) बनाने की क्रिया व जीवन चक्र :

इस कीट द्वारा यूकेलिप्टस पौधे पर पिटिका बनाने की क्रिया की पाँच अवस्थायें होती हैं।

प्रथम अवस्था :

यह अवस्था अण्ड निक्षेपण के बाद 1 से 2 सप्ताह की होती है। इस अवस्था में पौधे के प्रभावित भागों की बाहय आकारिकी में बदलाव आ जाता है। पौधे के प्रभावित भागों की बाहय त्वचा का आकार कुछ बड़ा हो जाता है तथा पत्ती में मध्यशिरा के भाग में अण्डे के प्रवेश के स्थान पर मध्यशिरा का रंग हरे से गुलाबी हो जाता है। इस अवस्था के अन्तिम समय में पिटिका (gall) का उभार स्पष्ट बनने लगता है।

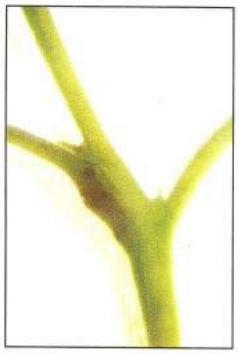
प्रथम अवस्था में पिटिका

द्वितीय अवस्था :

इस कीट द्वारा बनी यह पिटिका (gall) आकार में बड़ी होकर चौड़ाई में लगभग 2.7 ± 0.5 मिमी. तक की हो जाती है। इस अवस्था का समय 48 दिन है।

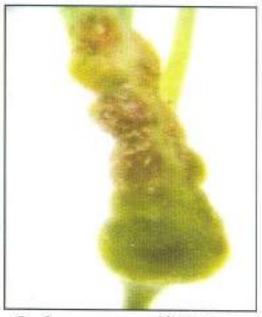
द्वितीय अवस्था में पिटिका

तृतीय अवस्था :

इस अवस्था का समय लगभग 16 दिन होता है। इस अवस्था में पौधे पर बनी पिटिका का रंग हरे से चमकीले गुलाबी रंग का हो जाता है।

तृतीय अवस्था में पिटिका

चतुर्थ अवस्था :

पिटिका बनने की चौथी अवस्था का समय लगभग 14 दिन होता है। इस अवस्था में पौधे पर बनी पिटिका (gall) अपनी चमक खो कर गहरे लाल रंग की हो जाती है। पौधों पर पिटिका के रंग बदलने की क्रिया अलग-अलग भागों में अलग-अलग होती है।

पंचम अवस्था :

मादा कीट द्वारा पौधे पर पिटिका बनाने की अन्तिम अवस्था का समय लगभग 35 दिन होता है। इस अवस्था में पौधे पर बनी पिटिका (gall) का रंग पत्ती पर हल्का भूरा व तने पर लाल या भूरे रंग का हो जाता है और पिटिकाओं पर *लेप्टोसाइबे इनवासा* कीटों के निकलने के स्थान पर छिद्र दिखाई देते हैं।

लेप्टोसाइबे इनवासा कीट के विकास की अवस्था अण्ड निक्षेपण से वयस्क कीट के बाहर निकलने में लगभग 134 दिन लग जाते हैं। *लेप्टोसाइबे इनवासा* कीट के द्वारा एक पत्ती पर अधिकतम 50 पिटिकाएं तक बन सकती हैं।

नियन्त्रण :

रासायनिक नियन्त्रण :

यूकेलिप्टस पौधे को *लेप्टोसाइबे इनवासा* कीट के द्वारा नुकसान से बचाने के लिए कोई पूर्ण रूप से प्रभावी रासायनिक नियन्त्रण नहीं है। फिर भी जहां इस कीट के द्वारा यूकेलिप्टस पौधों को नुकसान हो रहा हो, वहाँ पर निम्नलिखित प्राथमिक उपचार किये जाने चाहिए:-

मेगास्टिगमस विगियानी

1. नियमित निरीक्षण कर पिटिका वाले यूकेलिप्टस पौधों की निगरानी रखनी चाहिये।
2. पौधे के पिटिका वाले भागों को काट कर उसे जलाकर नष्ट कर दें।
3. यूकेलिप्टस पौधों पर *लेप्टोसाइबे इनवासा* कीट द्वारा पिटिका बनाने से बचाने के लिए सिस्टेमिक कीटनाशक जैसे रोगार 2 मि.ली. प्रति लीटर पानी में बने घोल या *इमीडाक्लोपरिड* 2 मि.ली. प्रति लीटर पानी में घोल का नियमित अन्तराल पर छिड़काव किया जाना चाहिए।

प्राय: रासायनिक नियन्त्रण द्वारा कीटनाशकों से पर्यावरण को हानि होने के कारण जैविक नियंत्रण को बढ़ावा दिया जाता है परंतु *लेप्टोसाइबे इनवासा* के नियन्त्रण में देखा गया है कि नियमित 15 दिनों के अन्तराल से कीटनाशकों के छिड़काव से भी कीट का नियन्त्रण नहीं हो पाया तथा अत्यधिक क्षति होने के कारण एवं विस्फोटक स्थिति को नियन्त्रित करने के लिए *लेप्टोसाइबे इनवासा* के जैविक नियन्त्रण पर शोध कार्य किया गया।

जैविक नियन्त्रण :

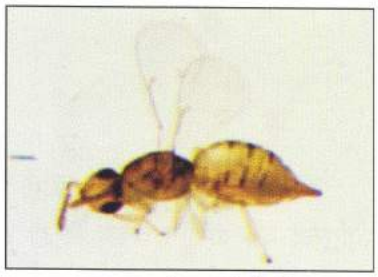

क्वाड्रास्टीकस मैन्डेली

लेप्टोसाइबे इनवासा कीट की संख्या को कम करने के लिए जैविक नियंत्रण एक उपयुक्त उपाय है। इस जैविक नियंत्रण में डिम्भ परजीव्याभ (Larval Parasitoid), *क्वाड्रास्टीकस मैन्डेली (Quadrastichus mandelii)* तथा एक स्थानीय परजीव्याभ कीट *मैगास्टिगमस विगियानी (Megastigmus viggianii)* गॉल बनाने वाले कीट के जैविक नियन्त्रण में बहुत सहायक सिद्ध हुए हैं। इस नियंत्रण की प्रक्रिया में परजीव्याभ कीटों का वृहत्त गुणन कर *लेप्टोसाइबे इनवासा* कीट से प्रभावित यूकेलिप्टस पौधों के रोपित क्षेत्रों तथा पौधशालाओं में छोड़ा जाता है।

लेप्टोसाइबे इनवासा कीट को नियंत्रित करने के लिए उपरोक्त परजीव्याभों (Parasitoid) कीटों का वृहत्त गुणन कर, उन्हें *लेप्टोसाइबे इनवासा* के जैविक नियन्त्रण के लिए पंजाब में छोड़ा गया है।

मेगास्टिगमस प्रजाति का परजीव्याभ *लेप्टोसाइब इनवासा* का डिम्भ परजीव्याभ (Larval Parasitoid) कीट है। भारत में अंकिता और पोरानी ने कर्नाटक में *यूकेलिप्टस* पौधों पर *मेगास्टिगमस* स्प. (*Megastigmus* sp.) को यूकेलिप्टस की पिटिकाओं से प्राप्त किया था। अत: भारत में *लेप्टोसाइबे इनवासा* कीट को नियन्त्रित करने के लिए स्थानीय मूल का कीट *मेगास्टिगमस* प्रजाति (*Megastigmus* sp.) का कीट भी उपयुक्त परजीव्याभ (Parasitoid) कीट है जो इस कीट को नियन्त्रित कर यूकेलिप्टस पौधे पर पिटिका (gall) बनाने की प्रक्रिया को रोक देता है।

कृषि वानिकी में औषधीय एवं सुगंधित पौधों का महत्व

श्री अशोक कुमार पाण्डेय
वन उत्पादकता संस्थान, रांची

औषधीय एवं सुगंधित पौधों से संपन्न भारत देश में आयुर्वेद का प्राचीन काल से ही चिकित्सा जगत में एक अद्वितीय स्थान रहा है। औद्योगीकरण के फलस्वरूप चिकित्सा जगत में अवयवों की खोज तथा तत्काल निदान प्रक्रिया ने आयुर्वेद की परम्परागत चिकित्सा पद्धति को गंभीर रूप से आहत किया है। आधुनिक चिकित्सा पद्धति लोगों के न केवल स्थायी निदान में अक्षम साबित हुई है वरन् समानान्तर दुष्प्रभावों के परिणाम भी लोगों को भुगतने पड़े हैं। इस कारण आज पुन: जनसाधारण का ध्यान प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति की ओर आकृष्ट हो रहा है, जिससे जड़ी-बूटियों की महत्ता को पुन: प्रतिष्ठा प्राप्त हो रही है। यही कारण है कि वर्तमान समय में राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर हर्बल उत्पादों एवं जड़ी-बूटियों की मांग में उत्तरोत्तर वृद्धि हो रही है, जिसकी पूर्ति के लिए प्राकृतिक आवासों में उपलब्ध जड़ी-बूटियाँ न केवल अपर्याप्त साबित हो रही हैं बल्कि उनका अत्यधिक और अविवेकपूर्ण विदोहन होने के कारण कई बहुमूल्य वनौषधियाँ विलुप्त होने के कगार पर खड़ी हैं। इस समस्या का एक ही समाधान है:- औषधीय एवं सुगंधित पौधों की व्यावसायिक स्तर पर खेती। यह गर्व की बात है कि विश्व की कुल वनौषधि सम्पदा का एक बड़ा हिस्सा भारत में विभिन्न क्षेत्रों में पाया जाता है। वर्तमान में आवश्यकता है कि इन बहुमूल्य औषधियों की खेती करके इनका संरक्षण किया जाये। साथ ही मांग के अनुरूप उच्च गुणवत्तायुक्त उत्पाद तैयार किया जाए ताकि रोजगार के अवसर भी सुनिश्चित हो सके।

कृषिवानिकी कोई नई पद्धति नहीं है, इसका अभ्यास आदि काल से होता आया है। कृषिवानिकी में भूमि के एक ही भाग (टुकड़े) पर कृषि उत्पादन एवं वानिकी दोनों किए जाते हैं। कृषि फसल के साथ - साथ वृक्षों को रोपित करने से उपयुक्त समय व बाजार मूल्य प्राप्त होने पर काटने व बेचने की सुविधा है। फसलों के साथ रोपित वृक्ष प्राकृतिक आपदा से हुई हानि को सहन करते हुए कृषक के लिए निवेश व बीमा जैसे लाभकारी सिद्ध होते हैं।

कृषिवानिकी के विभिन्न प्रकार :

कृषिवानिकी के अन्तर्गत खेत के चारों ओर मेड़ों पर दो या तीन पंक्तियों में अथवा खेतों के अन्दर पंक्तियों में एक निश्चित दूरी में फसलों के साथ वृक्षों को रोपित किया जाता है। इस पद्धति में रोपित वृक्षों के मध्य दूरी इस प्रकार रखी जाती है कि उनके मध्य में औषधीय एवं सुगंधित पौधो को उगाया जा सके तथा कृषि कार्य हेतु उनके मध्य से ट्रैक्टर आदि चलाया जा सके। कृषिवानिकी पद्धति को उपलब्ध स्थल एवं स्थानीय आवश्यकता की पूर्ति के अनुसार विभिन्न स्वरूपों में वर्गीकृत किया जा सकता है यथा कृषि वानिकी पद्धति; कृषि बागवानी पद्धति; कृषि बागवानी वानिकी पद्धति; पुष्प बागवानी, कृषि एवं वानिकी पद्धति; सब्जी वानिकी पद्धति; मत्स्य पालन वानिकी पद्धति; गृह वाटिका पद्धति एवं चारागाह वानिकी पद्धति।

खेतों में फसलों के साथ वृक्ष प्रजातियों का रोपण करने से लाभ :

- अधिकांशत: यह देखा गया है कि केवल एकल फसलों के पैदावार की तुलना में कृषिवानिकी से अधिक लाभ प्राप्त होता है। अत: खेत का पूरा उपयोग कर अधिकतम व विभिन्न प्रकार के उत्पाद प्राप्त कर सकते हैं।
- खेत में ही चारा, ईंधन, इमारती लकड़ी, कुटीर एवं लघु उद्योगों के लिए कच्चा माल प्राप्त कर सकते हैं।
- खेत से ही ईंधन प्राप्त कर।

- कृषि कार्य के लिए अनुपयुक्त भूमि का सुधार व उसकी उत्पादकता में वृद्धि कर सकते हैं।
- प्राकृतिक आपदाएं, जैसे-बाढ़, सूखा, अधिक वर्षा आदि से कृषि फसल को क्षति पहुँचने पर अथवा कृषि फसल अधिक होने के कारण मूल्य में कमी आने पर अपने खेत के वृक्ष को बेचकर धन अर्जित कर सकते हैं।
- इससे परती एवं अवक्रमित भूमि में उपयुक्त प्रजाति के पेड़ एवं फसल लगाकर भूमि की स्थिति विकसित कर सकते है।
- उपलब्ध प्राकृतिक वनों पर जैविक दबाव कम कर सकते हैं।
- वृक्षारोपण में वृद्धि कर भूमि एवं जल संरक्षण कर, पर्यावरण में संतुलन स्थापित कर प्रदेश व देश के विकास में अपना योगदान दे सकते हैं।
- कृषिवानिकी पर आधारित कृषि पद्धति में बहुउपयोगी वृक्षों के साथ नगदी फसलें, औषधीय एवं सुगंधित पौधे लगाये जा सकते हैं। इसके साथ ही मत्स्य पालन, भेड़ पालन, बकरी पालन, मुर्गी पालन, शुकर पालन इत्यादि भी कर सकते है, जिससे अतिरिक्त आय प्राप्त होती है।

औषधीय एवं सुगंधित पौधों की खेती के साथ रोपित वृक्षों में निम्न विशेषतायें होनी चाहिए :

1. **शीघ्र बढ़ने वाला :** कृषिवानिकी के अन्तर्गत ऐसे वृक्षों को उगाना चाहिए जो अपेक्षाकृत तेज बढ़ने वाले हो जिससे आप अपने लाभ हेतु उनसे कम समय में ही उपज प्राप्त कर सकें।
2. **सीधा तना :** कृषिवानिकी में रोपण हेतु सीधे तने, कम शाखाओं, विरल छत्र व शाख तराशी सहने वाली वृक्ष प्रजातियों को चयन में प्राथमिकता दी जानी चाहिए।
3. **गहरी जड़ें :** कृषिवानिकी में लम्बी जड़ों वाले वृक्षों को उगाना बहुत लाभदायक होता है। यह जड़ें भूमि में जाकर नीचे से लाभदायक पदार्थ ऊपर लाती हैं जो कृषि फसलों को लाभ पहुँचाती हैं। वृक्षों की मूसला जड़ों की बढ़त इस प्रकार हो कि वे जल से खनिज लवणों के अवशोषण व फसलों की आवश्यकता के साथ सामंजस्य स्थापित कर सकें।
4. **द्विबीजपत्रीय वृक्ष :** कृषिवानिकी के अन्तर्गत द्विबीजपत्र वाले वृक्ष उगाना अधिक लाभदायक है, क्योंकि ऐसे वृक्ष हवा से नाइट्रोजन लेकर भूमि में जमा करते है, जो कि कृषि फसलों के लिए लाभदायक है। जैसे - सुबबूल, बबूल, विलायती बबूल, महुआ, काला सिरस, करंज, शीशम।

औषधीय एवं सुगंधित पौधों पर आधारित कृषिवानिकी पद्धति :

इसके अन्तर्गत कृषि क्षेत्र में प्लाट के चारों ओर मेड़ों पर दो या तीन पंक्तियों में वृक्षों को 5 मीटर के अन्तराल में रोपित करते हैं। इसके अतिरिक्त खेतों के अन्दर पंक्तियों में एक निश्चित दूरी में भी वृक्षों को रोपित किया जाता है। इस पद्धति में रोपित वृक्षों के मध्य अन्तराल इस प्रकार रखा जाना चाहिए कि उनके मध्य में औषधीय एवं सुगंधित पौधों को उगाया जा सके तथा कृषि कार्य हेतु उनके मध्य से ट्रैक्टर आदि चलाया जा सके।

इस पद्धति में साधारणत: 5मी. X 4मी. अथवा 5मी. X 5मी. की दूरी अधिक उपयुक्त होती है। इस पद्धति में काष्ठ प्रजाति (सागौन, सिरस, बबूल, नीम, बांस), चारा व जलाऊ प्रजाति (विलायती बबूल, बबूल, शहतूत, कचनार) तथा फल प्रजाति (आम, आँवला, चिरौंजी, बेल, नींबू, बेर) का रोपण क्षेत्र विशेष के अनुसार कृषकों द्वारा अपनाया जाता है।

दो वृक्षों के मध्य में रिक्त स्थानों में कंदयुक्त औषधीय पौधे जैसे - सफेद मूसली, अदरक, सतावर, काली मूसली, बच, क्योकंद, तिखुर, कचूर, हल्दी, आमाहल्दी आदि की खेती करके किसानों को अतिरिक्त आय प्राप्त होती है तथा रिक्त भूमि का भी सही उपयोग होता है। वृक्षों की जड़ों के समीप लतानुमा पौधे जैसे- गिलोय, गुड़मार, सतावर इत्यादि लगाने से ये लताएँ वृक्षों के सहारे फैल जाती हैं जिसका उपयोग करने से किसानों को अतिरिक्त लाभ मिलता है।

औषधीय एवं सुगंधित पौधों को उगाने हेतु क्षेत्रानुसार विवरण

क्षेत्र	वृक्ष	औषधीय पौधे
शुष्क क्षेत्र	सागौन, खमेर, शीशम, नीम, जेट्रोफा, आँवला, बेर, बबूल, मौसंबी, आम, चिरौंजी, करौंदा, बेल, शहतूत, कटहल, कचनार, सीताफल	अश्वगंधा, कालमेघ, मुश्कदाना, अदरक, क्योकंद, तिखुर, हल्दी, आमाहल्दी, गिलोय, अडूसा, गुड़मार, गोखरू, केंवाच, अनन्तमूल, घृतकुमारी
अर्द्धशुष्क क्षेत्र	सागौन, खमेर, सिरस, शीशम, कुटज, आँवला, कैथा, अमरूद, संतरा, शहतूत, मौसंबी, आम, बेल, कटहल, चिरौंजी, करौंदा, नीम, बांस	सफेद मूसली, सर्पगंधा, सतावर, घृतकुमारी, रोशाघास, नींबूघास, सिट्रोनेला घास
जल भराव क्षेत्र	अर्जुन, जामुन, यूकेलिप्टस, गूलर, बबूल, जारूल, अगस्त	बच, निशोध, खस घास, ब्राम्ही, नागरमौथा, मंडूकपर्णी, भृंगराज

कृषिवानिकी उत्पाद विपणन :

कृषिवानिकी के अन्तर्गत उगाई गई वृक्ष प्रजातियों तथा औषधीय पौधे का विक्रय स्थानीय अथवा निकटवर्ती विक्रय केन्द्र में कर सकते हैं। क्षेत्र में स्थापित उद्योगों से सामंजस्य स्थापित कर भी वृक्ष प्रजाति, मात्रा व दर के सम्बन्ध में पूर्व से ही अनुबन्ध किया जा सकता है।

एक बूँद

ज्यों निकल कर बादलों की गोद से
थी अभी एक बूँद कुछ आगे बढ़ी,
सोचने फिर-फिर यही जी में लगी
हाय क्यों घर छोड़कर मैं यों बढ़ी।

मैं बचूँगी या मिलूँगी धूल में,
चू पड़ूँगी या कमल के फूल में।
बह गई उस काल एक ऐसी हवा
वो समन्दर ओर आई अनमनी,

एक सुन्दर सीप का मुँह था खुला
वो उसी में जा गिरी मोती बनी।

लोग यों ही हैं झिझकते सोचते
जबकि उनको छोड़ना पड़ता है घर,
किन्तु घर का छोड़ना अक्सर उन्हें
बूँद लौं कुछ और ही देता है कर।

- अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध'

औषधीय एवं सुगंधित पौधों को उगाने हेतु क्षेत्रानुसार विवरण

क्षेत्र	वृक्ष	औषधीय पौधे
शुष्क क्षेत्र	सागौन, खमेर, शीशम, नीम, जेट्रोफा, आँवला, बेर, बबूल, मौसंबी, आम, चिरौंजी, करौंदा, बेल, शहतूत, कटहल, कचनार, सीताफल	अश्वगंधा, कालमेघ, मुश्कदाना, अदरक, क्योकंद, तिखुर, हल्दी, आमाहल्दी, गिलोय, अड़ूसा, गुड़मार, गोखरू, केंवाच, अनन्तमूल, घृतकुमारी
अर्द्धशुष्क क्षेत्र	सागौन, खमेर, सिरस, शीशम, कुटज, आँवला, कैथा, अमरूद, संतरा, शहतूत, मौसंबी, आम, बेल, कटहल, चिरौंजी, करौंदा, नीम, बांस	सफेद मूसली, सर्पगंधा, सतावर, घृतकुमारी, रोशाघास, नींबूघास, सिट्रोनेला घास
जल भराव क्षेत्र	अर्जुन, जामुन, यूकेलिप्टस, गूलर, बबूल, जारूल, अगस्त	बच, निशोध, खस घास, ब्राम्ही, नागरमौथा, मंडूकपर्णी, भृंगराज

कृषिवानिकी उत्पाद विपणन :

कृषिवानिकी के अन्तर्गत उगाई गई वृक्ष प्रजातियों तथा औषधीय पौधे का विक्रय स्थानीय अथवा निकटवर्ती विक्रय केन्द्र में कर सकते हैं। क्षेत्र में स्थापित उद्योगों से सामंजस्य स्थापित कर भी वृक्ष प्रजाति, मात्रा व दर के सम्बन्ध में पूर्व से ही अनुबन्ध किया जा सकता है।

एक बूँद

ज्यों निकल कर बादलों की गोद से
थी अभी एक बूँद कुछ आगे बढ़ी,
सोचने फिर-फिर यही जी में लगी
हाय क्यों घर छोड़कर मैं यों बढ़ी।

मैं बचूँगी या मिलूँगी धूल में,
चू पड़ूँगी या कमल के फूल में।
बह गई उस काल एक ऐसी हवा
वो समन्दर ओर आई अनमनी,

एक सुन्दर सीप का मुँह था खुला
वो उसी में जा गिरी मोती बनी।

लोग यों ही हैं झिझकते सोचते
जबकि उनको छोड़ना पड़ता है घर,
किन्तु घर का छोड़ना अक्सर उन्हें
बूँद लौं कुछ और ही देता है कर।

– अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध'

प्लाईवुड तथा अन्य पैनल उत्पादों के लिए गुणवत्ता नियंत्रण उपाय

डॉ. अनिल नेगी, डॉ. देवेन्द्र कुमार*, डॉ. डी.पी. खाली* तथा डॉ. ओम कुमार
भारतीय वानिकी अनुसंधान एवं शिक्षा परिषद्, देहरादून
*वन अनुसंधान संस्थान, देहरादून

प्रस्तावना :

काष्ठ तथा काष्ठ आधारित उत्पादों का क्षेत्र व्यापक और बहु-आयामी हैं। काष्ठ आधारित उत्पादों की संख्या, उपयोजन पद्धतियों और मूल्यांकन प्रक्रिया में पर्याप्त भिन्नतायें हैं।

काष्ठ आधारित उत्पादों को विभिन्न रूपों में विकसित किया गया है और उनका उपयोजन किया जा रहा है। इन उत्पादों में : प्लाईवुड, ब्लाकबोर्ड, फलश डोर, पार्टीकल बोर्ड, फाईबर बोर्ड, सुधारित काष्ठ आदि मुख्य हैं। इन उत्पादों के गुणवत्ता नियंत्रण तथा विभिन्न उपयोगों में उपयोगिता जांचने के लिए अनुसंधान मानकों में विनिर्माण से संबंधित न्यूनतम गुणवत्ता मानक तय किये गये हैं। इसके परिणामस्वरूप उत्पादों का स्वतंत्र विकास किया गया और प्लाईवुड, हार्डबोर्ड, पार्टीकल बोर्ड की परीक्षण पद्धतियों में भी विविधता आई। किसी भी उत्पाद के परीक्षण में निम्नलिखित का समावेश होता है :

1. नमूनाकरण
2. नमूने का आकार
3. परीक्षण उपकरणों का विवरण
4. परीक्षण की निष्पादकता/प्रक्रिया
5. परिणामों का कप्यूटरीकरण एवं विवरण

नमूनाकरण अत्यन्त महत्वपूर्ण पहलू है जिसमें परिणाम के साथ-साथ प्रकिया का परीक्षण भी हो जाता है। प्रक्रिया नियंत्रित न होने के कारण परीक्षण परिणामों में अत्यधिक विविधता आ जाती है, जबकि पूर्ण तैयार माल के बारे में सुस्पष्ट योजना और दिशा निर्देश होने चाहिए जैसा कि विभिन्न नमूना आकारों में दिया जाता है।

नमूना स्तर पर पूर्वाग्रह पहलू से मुक्त होने के लिए निरापद अध्ययन करना महत्वपूर्ण होता है। किसी स्रोत से नमूना एकत्र करते समय खोजकर्ता को स्रोत के बारे में पता नहीं होना चाहिए और यह जानना भी आवश्यक नहीं है कि नमूने से क्या किया जाना है। इस प्रक्रिया से अन्तर्राष्ट्रीय/संक्रियात्मक पूर्वाग्रह की स्थिति का उन्मूलन हो जायेगा। यदि फसल के आकलनकर्ता को फसल के मालिक के बारे में तथा फसल के मालिक को खोजकर्ता के बारे में मालूम हो तो आकलन गलत होने के बावजूद भी स्वीकार कर लिया जायेगा।

परीक्षण उपकरणों का विवरण, उपस्कर तथा परिणामों की विवेचना स्वाभाविक रूप में संक्षिप्त होती है क्योंकि ये प्राचल निर्धारक प्रवृत्ति के होते हैं और नमूनाकरण की तरह प्रसंभाव्य नहीं होते हैं।

मानकीकरण एक गतिशील क्रियाकलाप है। प्रस्तुत प्रलेख में प्लाईवुड की गुणवत्ता नियंत्रण का विशेष रूप से उल्लेख किया गया है।

प्लाईवुड में गुणवत्ता नियंत्रण की आवश्यकता :

भारत की प्लाईवुड फैक्ट्रियों में परम्परागत संशलिस्ट रेजिन जैसे यू एफ तथा पी एफ से विभिन्न प्रजातियों से प्लाईवुड बनाया जाता है। इस प्रक्रिया में बडी मात्रा में प्रकाष्ठ, सरेस तथा ऊर्जा बरबाद हो जाती है। बड़ी प्लाईवुड फैक्टरियों में बहुत सा माल बेकार चला जाता है। यदि विनिर्माण की हर स्थिति में इस पर ध्यान दिया जाये तो प्लाईवुड की गुणवत्ता बढ़ाने के साथ-साथ उत्पादन में भी काफी वृद्धि हो सकती है। विनिर्माण के दौरान प्लाईवुड फैक्टरियों में गुणवता नियंत्रण के निम्नलिखित उपाय अपनाने चाहिए:-

1. **लट्ठों का चयन तथा भण्डारण :** प्लाईवुड बनाने के लिए लट्ठे, सीधी, सिलिंडर के आकार के तथा गांठों, अपक्षय और दरारों से मुक्त होने चाहिए। लट्ठों का घेरा पर्याप्त होना चाहिए। आखिरी छोर पर फटन, तनन और

अपक्षय से लट्ठों को बचाना चाहिए। दरारें, असामान्य दाब के कारण आती हैं जिनसे नमी में तेजी से कमी आती है और कई बार तंतुओं में नमी का प्रवाह असामान्य हो जाता है। उचित नमीरोधक का प्रयोग करके इस तरह के निम्नीकरण को रोका जा सकता है या लट्ठों को ताजे पानी के तालाब में भण्डारित करना चाहिए या लगातार पानी का छिड़काव करना चाहिए।

2. **विनियरिंग से पहले लट्ठों का पूर्व उपचार** : भाप देने/छीलने से पहले उबालने के लिए हीटिंग पिट्स को इस तरह बनाना चाहिए ताकि लट्ठों को अप्रत्यक्ष रूप से वाष्पित किया जा सके। उत्तम कोटि का मुलम्मा प्राप्त करने के लिए उच्चकोटि की प्रजाति का होना आवश्यक है। लट्ठे का ब्यास, नमी मात्रा तथा नमी घटक उचित मात्रा में होने चाहिए। लट्ठे में कठोर गांठें नहीं होनी चाहिए और साथ ही आखरी छोर पर गांठे नही होनी चाहिए। आखिरी छोर के फटने और रंग बदलने की प्रवृत्ति नहीं होनी चाहिए। उपयुक्ततम परिणाम प्राप्त करने के लिए सही तापमान में उचित समय तक ऊर्जा देनी चाहिए।

3. **विनियरिंग के लिए छिलका उतारना** : मुलम्मे की गुणवत्ता मशीन में खाली जगह और चाकू के कोण को सेट करने पर निर्भर करती है। लट्ठे के छिलके उतारने के लिए प्रेशर बार और नाईफ एज को अनुप्रस्थ और तिरछे गैप्स में उचित रूप से फिक्स करना चाहिए, जो वांछित मुलम्मे की मोटाई के अनुरूप हो। विनियरिंग की आवश्यक मोटाई के अनुसार अनुप्रस्थ गैप 75% या उससे अधिक हो सकता है और छीले जाने वाले मुलम्मे का वर्टीकल गैप करीब 25% होना चाहिए जो पतले विनियरिंग मे कुछ अधिक भी हो सकता है। ये गैप पूरे नाईफ की लम्बाई तक एक जैसे होने चाहिए और मुलम्मा उतारने से पहले नाईफ को चैक करना चाहिए अन्यथा उतारे गये विनियर की मोटाई असमान होगी। इसके बाद नाइफ एंगल को समायोजित करना चाहिए जो छीले जाने वाले लट्ठें के व्यास के अनुसार 93° से 89° हो सकता है। छिलका उतारने के दौरान लट्ठे का व्यास कम हो जाता है, तदनुसार नाईफ का कोण भी कम करना चाहिए। नाईफ के बीवल्स उचित कोण पर होने चाहिए और बहुत बड़े नहीं होने चाहिए अन्यथा प्राप्त विनियर असमान हो सकता है और उस पर नाईफ के निशान पड़ सकते हैं।

4. **कटान संक्रिया पर नियंत्रण** : कटान संक्रिया शुरू करने से पहले दो मुख्य बातों का ध्यान रखना चाहिए (क) कर्तन की गति का उचित समायोजन (ख) लट्ठे में उचित साफ-सफाई करना। प्रजाति के अनुसार उपयुक्ततम कर्तन गति निश्चित करनी चाहिए और काष्ठ की गुणवता के आधार पर अधिकतम उत्पाद प्राप्त होता है। आधुनिक खरादों में टेलिस्कोपिक स्पाईन्डल्स होते हैं जिससे बड़े व्यास के लट्ठों पर बड़े आकार के चक्स निकाले जा सकते हैं और साथ ही छोटे व्यास के लट्ठों से अपेक्षाकृत छोटे चक्स भी निकाले जा सकते हैं। छिलका निकालने में स्वचलित व्यवस्था करने पर उच्च उत्पाद प्राप्त होते है। छिलका उतारने के दौरान मुलम्में पर कुछ त्रुटियां आ जाती है।

5. **विनियर का प्रहस्तन** : छीलते समय बेनीर और बोबीन को यांत्रिक रूप से घुमाया जाता है। स्लाईस बनाते समय विनियर को हाथ से एकत्र किया जाता है। इन्हें आवश्यक साईज में काटने हेतु क्लिपर पर ले जाया जाता है। विनियर को काटते समय 5 से 7 से.मी. पर अतिरिक्त छूट देनी चाहिए, जो बाद मे हलकी काटछांट होने के लिए आवश्यक है। मलु निकालने की प्रक्रिया के लिए 5 से 9% स्थान सिकुड़न के लिए छोड़ना होता है। यदि विनियर् जेट शुष्क में सुखाना है तो शुष्कक से बाहर आने के बाद क्लिपिंग करनी चाहिए जिससे 3.5 से 6% सामग्री की बचत होती है और अनियंत्रित सिकुड़न भी नहीं आती है। कारखानों में विनियरस् को जेट शुष्कक में सुखाना चाहिए जिससे सर्वोत्तम संभावित परिणाम प्राप्त हो सकें। ये परिणाम परम्परागत बेल्ट शुष्कक की बजाय 25 से 50% लाभदायी हो सकते हैं। शुष्कक इन्फ्रारेड रेडियेशन और उच्च आवृत्ति में भी विनियरस् को शुष्कित कर सकते हैं।

6. **विनियर का श्रेणीकरण** : सूखने के बाद विनियरस् को भण्डारित करना चाहिए ताकि एक ही प्रजाति की समान

मोटाई वाले विनियरस् को समान रूप से प्रयोग में लाया जा सके। विनियरस् को ए तथा बी श्रेणी में रखना चाहिए और ध्यान रखना चाहिए कि ए श्रेणी के विनियरस् से बी श्रेणी की प्लाईवुड न बनाई जाये यदि अनियमित विनियरस् से प्लाईवुड तैयार करने का प्रयास किया गया तो उच्च दाब के बावजूद उत्तम परिणाम नहीं मिलेंगे।

7. **सरेस लगाना :** ऐसे सरेस को लगाना चाहिए जिसकी श्यानता मुलम्मे की रंध्रता के अनुरूप हो। गाढ़ा सरेस ठीक तरह से नहीं फैलेगा और मलुम्मे के तल पर यांत्रिक बंधन नहीं हो सकेगा। दूसरी ओर पतला सरेस, छिद्रों के भीतरी भाग तक पहुंच जायेगा। सरेस का पी एच भी समय-समय पर चेक करना चाहिए। उसकी श्यानता, पी एच, अनुप्रयोग आदि को गुणवत्ता नियंत्रण चार्ट में रिकार्ड करना चाहिए। विभिन्न प्रकार के प्लाईवुड बोर्डस के लिए दाब की सूची तय करनी चाहिए जिसे गुणवत्ता नियंत्रण चार्ट में नोट करना चाहिए। जैसे ही बोर्ड दाब से बाहर आता है, उसे दरारों से बचाने के लिए उचित स्थितियों मे रखना चाहिए।

प्लाईवुड और अन्य उत्पादकों की गुणवत्ता निश्चित करने हेतु भारतीय मानक ब्यूरो में विभिन्न भारतीय मानक विकसित किए गए हैं। यदि प्लाईवुड कारखानों में उपयुक्त गुणवत्ता नियंत्रण के उपाय सही तरीके से अपनाए जाएं तो उचित गुणवत्ता वाली प्लाईवुड प्राप्त की जा सकती है।

कर्मवीर

देख कर बाधा विविध, बहु विघ्न घबराते नहीं
रह भरोसे भाग्य के दुख भोग पछताते नहीं
काम कितना ही कठिन हो किन्तु उकताते नहीं
भीड़ में चंचल बने जो वीर दिखलाते नहीं
हो गये एक आन में उनके बुरे दिन भी भले
सब जगह सब काल में वे ही मिले फूले फले ।

आज करना है जिसे करते उसे हैं आज ही
सोचते कहते हैं जो कुछ कर दिखाते हैं वही
मानते जो भी हैं सुनते हैं सदा सबकी कही
जो मदद करते हैं अपनी इस जगत में आप ही
भूल कर वे दूसरों का मुँह कभी तकते नहीं
कौन ऐसा काम है वे कर जिसे सकते नहीं।

जो कभी अपने समय को यों बिताते हैं नहीं
काम करने की जगह बातें बनाते हैं नहीं
आज कल करते हुए जो दिन गँवाते हैं नहीं
यत्न करने से कभी जो जी चुराते हैं नहीं
बात है वह कौन जो होती नहीं उनके लिए
वे नमूना आप बन जाते हैं औरों के लिए।

व्योम को छूते हुए दुर्गम पहाड़ों के शिखर
वे घने जंगल जहाँ रहता है तम आठों पहर
गर्जते जल-राशि की उठती हुई ऊँची लहर
आग की भयदायिनी फैली दिशाओं में लपट
ये कँपा सकती कभी जिसके कलेजे को नहीं
भूलकर भी वह नहीं नाकाम रहता है कहीं।

– अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध

शीशम वृक्षों की मृत्यु : कारण और निवारण

श्री हरी शंकर लाल, डॉ. संजय सिंह एवं श्री रवि शंकर प्रसाद
वन उत्पादकता संस्थान, रांची

भूमिका :

शीशम *(Dalbergia sissoo* Roxb.*)* एक महत्वपूर्ण वृक्ष है, जो की इसके बहुमूल्य काष्ठ के लिए लगाया जाता है। इसका वर्णन दक्षिण एशिया की वानिकी में पुरातन इतिहास काल से है। शीशम भारत के विभिन्न भागों में लगभग 1,000 मी. तक की ऊंचाई तक रेतीले तथा प्रचुर जलोढ़ मिट्टी तथा उच्च प्रवाहित भूमि तथा नदियों के किनारे तथा तटों पर साफ भूमि में पाया जाता है। यह चिकनी मिट्टी में भली भांति वृद्धि नहीं कर पाता है। शीशम सामाजिक वानिकी कार्यकम के अंतर्गत सड़क किनारे नालो की और नदियों के किनारे तथा उत्तर पूर्व भारत में बंजर भूमि में लगाई जाने वाले वृक्षों में से एक है। शीशम एक मध्यम से उच्च आकार का (Gregarious) झुण्ड में रहनेवाला पर्णपाती वृक्ष है जो अनुकूल परिस्थिति में लगभग 30 मी. ऊंचाई तथा 2.4 मी. व्यास को प्राप्त कर लेता है। शीशम वृक्ष खैर-शीशम प्राथमिक मिश्रित प्रकार के वन की मुख्य प्रजाति है। भारत के अलावा यह प्रजाति नेपाल, भूटान, बांग्लादेश, म्यांमार, मलेशिया, पाकिस्तान तथा अफगानिस्तान में भी पाया जाता है। यह वृक्ष जावा, नाइजीरिया, मॉरीशस, श्रीलंका, केन्या, उत्तरी पेलेस्टीन तथा दक्षिण अफ्रीका में भी परिवर्तनीय दशाओं के साथ पाया जाता है। ट्रूप के अनुसार यह सर्व विदित है की हिमालय तथा भाबर क्षेत्रों में शीशम के उद्भव क्षेत्र है तथा अन्य स्थानों पर मनुष्य द्वारा ही वितरित किया गया है।

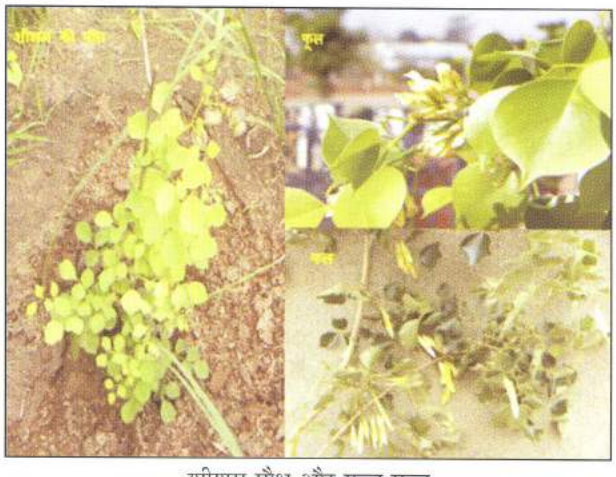

शीशम पौध और फूल फल

इस उपयोगी वृक्ष में पिछले एक दशक में विस्तृत रूप से मृत्यु दर देखी गई है। पिछले सालों में यह पूर्ण प्राकृतिक दर में पाई गई है। यह बीमारी सांकेतिक दर से फैल चुकी है जो कि अभी तक पूर्ण रूप से ज्ञात नहीं है।

कीट एवं रोग :

शीशम पर 125 आक्रमणकारी कीट पतंगों में से केवल 10 ही ज्ञात है। *Plecoptera reflexa* निष्पत्रण का कारण है तथा इसका दीर्घ तथा बारंबार आक्रमण रोपणों में मृत्यु का कारक है। *Leucopetra sphenograpta* की इल्ली पत्तियों के घेरे को नष्ट करती है। *Cladobrostis melitricha* वृक्ष की जीवित शाखाओं में छेद करता है जो की शीशम के शीर्ष में भारी छंटाई के लिए उत्तरदायी है। शीशम में फ्यूजेरीयम म्लानि उत्पन्न करने वाली *Fusarium solani* एक परपोषित परजीवी है जो भूमि में पाया जाता है। यह मृत वृक्ष पर या कमजोर जड़ों पर आक्रमण करता है। चिकनी तथा जल जमाव वाले स्थानों में विभिन्न रोगों का विकास होता है। अधिक बालू और कम सिल्ट प्रवाह की स्थिति में रोग उत्पन्न नहीं होता है। तराई क्षेत्रों में जहाँ जल का स्तर उच्च होता है तथा वर्षा के दौरान सतह तक आ जाता है, वहाँ शीशम अच्छे से वृद्धि नहीं करता है तथा म्लानि रोग से ग्रसित हो सकता है। इस रोग का विशेष चिन्ह लक्षण वृक्ष की पत्तियों की अग्राभिसारी क्रम में क्षय होना है। रोगग्रस्त वृक्ष कुछ माह की अवधि में मर जाता है।

शीशम वृक्ष मृत्यु के कारण :

1. अनुचित प्रजातियों का साइट मिलान :

एक अध्ययन के अनुसार भारत में शीशम का चिकनी मिट्टी में रोपण वृद्धि को कम करता है तथा कुछ वर्षों पश्चात यह रोग के लिए संवेदनशील हो जाता है।

यद्यपि एक अन्य अध्ययन में दुर्बल स्वास्थ्य तथा मिट्टी के भौतिक गुणों में कोई पारस्परिक संबंध नहीं मिला था, तथापि जलमग्नता मृत्यु में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

2. विदेशीय बीज स्रोतों का बड़े पैमाने पर वृक्षारोपण :

1980 के दशक में बड़े पैमाने से पौधरोपण के परीक्षण द्वारा यह ज्ञात हुआ है कि पाकिस्तान का बीज स्रोत नेपाल में दुर्बल वृद्धि करता है। शीशम मृत्यु एक क्षेत्रीय समस्या है तथा पारिस्थितिकी क्षेत्रों में बीजों के गमन को कठिन एवं बमुश्किल ही वर्णित किया जा सकता है। लेकिन, पाकिस्तान के बीज स्रोत का नेपाल में खराब प्रदर्शन दर्शाता है कि पिछले दो दशकों से गलत बीज के स्रोत के विस्तृत प्रयोग से समस्या में वृद्धि हुई है।

3. जलवायु परिवर्तन :

वनस्पति की अस्थिरता और जंगल के सूक्ष्म वातावरण पर प्रभावित करने के लिए जलवायु परिवर्तन का कोई स्पष्ट सबूत नहीं है, फिर भी यह एक महत्वपूर्ण कारक हो सकता है।

4. नई आक्रामक कवक या कीट :

आक्रामक कीटों एवं नई बीमारियों की भूमिका को नकारा नहीं जा सकता। ज्यादातर देखा गया है कि अनुचित क्षेत्र का चयन ही शीशम की रोगग्रसित करने का प्रमुख कारण है। यह रोगजनक कीट वहाँ ज्यादा होते हैं, जहां जलजमाव होता है। कठोर मिट्टी में ये जीवित नहीं रह पाते हैं।

शीशम मृत्यु दर : भारत के परिप्रेक्ष्य में :

पिछले कुछ दशकों में मुख्यत: हानिप्रद जैविकी तथा अजैविक तनाव शीशम में मृत्यु दर के लिए उत्तरदायी रहे हैं। सर्वेक्षणों को देखने पर ज्ञात होता है की इसकी मृत्यु दर बिहार, हरियाणा, पंजाब, उत्तर प्रदेश, बंगाल, एवं असम में 10 - 22 प्रतिशत तक है। शीशम उत्तर प्रदेश में म्लानी (*Fusarium solani*) से ग्रसित पाया गया है। इस प्रकार की मृत्यु दर की प्रतिशतता 8.94 से 20.80% तक अधिकतम गोंडा (20.80%) जिले में देखी गयी है जिसके बाद बहराइच (20.48%) तथा गोरखपुर (18.33%) आते हैं। न्यूनतम मृत्यु दर 8.94% का विवरण वाराणसी में मिलता है। एक अन्य उदाहरण में पंजाब के रोपण में 154866 हेक्टेयर में सामान्य उत्पादन पर 28000 घन मी. में मृत्यु देखा गया है। कसूर और सिंह ने अधिकतम मृत्यु दर 20-30% रिपोर्ट दर्ज किया है। विभिन्न अनुसंधान कार्यकर्ताओं ने खस्ता फफूंदी, पट्टी जंग, पत्ता तुषार, रंग सड़ांध, जड़ सड़ांध जैसे रोगों को शीशम वृक्ष की मृत्युदर का कारण दर्ज किया। 1993 के बाद से डाइबैक नामक एक गंभीर बीमारी भारतीय उपमहाद्वीप के कई देशों में पहचानी गयी। रोग के शुरुआती लक्षणों में परिगलित संयोजन के कारण पत्तियाँ गिर जाती हैं। जैसे-जैसे छोटे टहनियों का विकास होता है, शीर्ष की पारदर्शता बढ़ जाती है। शाखाओं की कमी के कारण अंतिम चरण में प्रभावित वृक्ष अपनी छत्र (canopy) के सारे भाग को गिरा देते हैं। तना के आधार पर गमोसिस (gummosis) के साथ काले धब्बे आ जाते है जो 5 मी. ऊपर तक पाये जाते हैं। वृक्षों के रोगों के कारक जैसे *Pseudomonas syrijae* और बहुत सारे रोगवाहको को देशव्यापी माना गया है।

बिहार में मृत शीशम वृक्षों के झुंड

निवारण : मृत्यु दर प्रतिरोधी वृक्षों का चयन एवं परीक्षण वृक्षारोपण :

वन उत्पादन संस्थान द्वारा 45 उत्तम वृक्षों का चयन निर्धारित मानदंडों के आधार पर झारखंड, बिहार और पश्चिम बंगाल राज्य में किया गया है। कलमों (प्रति वृक्ष 50-100 कलम) अपने गुणन के लिए आई.बी.ए. (IBA) उपचार करके धुंध कक्ष में लगाई गई। साथ ही वन अनुसंधान संस्थान, देहरादून द्वारा विकसित मृत्यु दर प्रतिरोधी क्लोन को भी क्षेत्र वृक्षारोपण के लिए शामिल किया गया है। एक-एक प्रतिरूप परीक्षण झारखंड एवं बिहार की स्थानीय परिस्थितियों में स्थापित किया गया है। विकास आकड़ा (ऊंचाई और व्यास) 6 महीने और रोपण के एक वर्ष के बाद दर्ज किया गया है। इन उन्नत वृक्षों के क्लोन (प्रतिरूपों) को बड़ी मात्रा में नए पौधों के निर्माण के लिए एक प्रतिरूप गुणन बगीचे (क्लोनल मल्टीप्लीकेशन गार्डेन) के रूप में स्थापित किया गया। एक गुणन के लिए प्रजनक के अनुरूप आपूर्ति के लिए 20 क्लोन के साथ रखा गया है। इस तरह शीशम की लगातार बहुगुणन और मृत्यु दर प्रतिरोधी पौधों की जांच करके परीक्षण वृक्षारोपण भी किया जा रहा है।

आगे बढ़े चलेंगे

यदि रक्त बूँद भर भी होगा कहीं बदन में
नस एक भी फड़कती होगी समस्त तन में।
यदि एक भी रहेगी बाकी तरंग मन में।
हर एक साँस पर हम आगे बढ़े चलेंगे।
वह लक्ष्य सामने है पीछे नहीं टलेंगे।।

मंजिल बहुत बड़ी है पर शाम ढल रही है।
सरिता मुसीबतों की आग उबल रही है।
तूफान उठ रहा है, प्रलयाग्नि जल रही है।
हम प्राण होम देंगे, हँसते हुए जलेंगे।
पीछे नहीं टलेंगे, आगे बढ़े चलेंगे।।

अचरज नहीं कि साथी भाग जाएँ छोड़ भय में।
घबराएँ क्यों, खड़े हैं भगवान जो हृदय में।
धुन ध्यान में धँसी है, विश्वास है विजय में।
बस और चाहिए क्या, दम एकदम न लेंगे।
जब तक पहुँच न लेंगे, आगे बढ़े चलेंगे।।

- रामनरेश त्रिपाठी

नीम के नाशिकीट, रोग, लक्षण और उनका नियंत्रण

डॉ. के. पी. सिंह
वन अनुसन्धान संस्थान, देहरादून

नीम – *Azadirachta indica* A. Juss रूटेल्स वर्ग के मेलियेसी कुल का बहुउपयोगी वृक्ष है। इसकी मौलिक उत्पत्ति के बारे में विविध राय है – कुछ लोगों की मान्यता है कि इसकी उत्पत्ति म्यांमार (बर्मा) है और अन्य लोगों का मानना है कि यह दक्षिण भारत में पाया गया है। भारत से ही नीम का पाकिस्तान, बांगलादेश, म्यांमार (बर्मा), न्यु-चाइना, थाइलैंड, इन्डोनेशिया, मलेशिया, सिंगापुर, ईरान, ऑस्ट्रेलिया, श्रीलंका, जर्मनी, फ्रांस, स्पेन और यूनाइटेड किंगडम आदि तक विस्तार हुआ है। प्रदूषण नियंत्रण की अद्‌भुत क्षमता से परिपूर्ण नीम को आधुनिक युग में कल्पतरू की संज्ञा दी जा रही है। नीम के औद्योगिक महत्व एवं नीम उत्पादों की बढ़ती हुई वर्तमान तथा भविष्य की मांग के मद्‌देनजर इसके संरक्षण-संवर्धन हेतु विश्वस्तरीय प्रयास किए जा रहे हैं। नीम वृक्ष के प्रत्येक हिस्से में गुणकारी विशिष्टता है, जैसे कि ''एन्टीफिडैन्ट'', ''डिटरैन्ट'', ''ग्रोथ इनहिविसन'', ''ओविपोजिसनल डिटरैन्ट'', प्रतिकारक, कीटनाशक, फफूद नाशक तथा सूत्रकृमिनाशक (nematicidal)। सर्वेक्षणों द्वारा ज्ञात हुआ है कि नीम के पौधे, पौधशाला स्तर से लेकर विकास की प्रारम्भिक अवस्थाओं के दौरान कई प्रकार के कीटों एवं रोगों से प्रभावित होते हैं, जिसके परिणामस्वरूप बड़ी संख्या में पौधे नष्ट हो जाते हैं। ऐसी स्थिति में समुचित उपचार द्वारा पौधों को बचाया जा सकता है।

नीम के मुख्यकीट :

1. **नीम निष्पत्रक :** नीम की पत्तियों को खाने वाले कीट निम्न हैं : *लेस्पर्येशिया कोइनिजियाना, लेप्टेसेनेरिया रिडक्टा, अकिया जनाटा, एन्डोक्राइटा अन्डयूलिफर, एस्कोटिस सेलेनेरिया, वोर्मिया वैरिगाटा, किल्ओरा कारनेरिया, लालोइया लेपिडा, एडोक्सोफाइस औराटा, लोपोस्चिजा कोइनिजियाना, हिप्सिपाइना रिडक्टा, थोसिया वाइपारटिटा*। ये कीट नीम की पत्तियों को खाकर नुकसान पहुचाते हैं।

   नियन्त्रण : इनकी रोकथाम के लिए मोनोक्रोटाफास 36EC या डाइमेथोएट 30EC 0.01-0.02% छिड़काव पत्तियों पर करना चाहिए।

2. **रस चूषक (सैपसकर्स)** – ये कीट नीम की पत्तियों एवं टहनियों से रस चूसते हैं तथा पौधों को काफी मात्रा में नुकसान पहुचाते हैं। इसके अंतर्गत निम्न कीट मुख्य हैं : *एफिस स्पीरीकोला, पल्वीनेरिया मैक्सिमा, पारलाटोरिया ओरिन्टेलिस*।

   नियन्त्रण – इसकी रोकथाम के लिए मोनोक्रोटाफास 36EC या डाइमेथोएट 30EC 0.01-0.02% छिड़काव पत्तियों पर करना चाहिए।

3. **दीमकें** – पौधशालाओं में दीमक द्वारा अत्यधिक क्षति होती है जो अनुकूल अवस्थाओं में गंभीर रूप ले लेती है। ये 30 से.मी. ऊपरी मृदा के बीच सामान्यत: मूसला जड़ साथ ही साथ पार्विक जड़ों को क्षति पहुंचाती है जिसके फलस्वरूप युवा पादपों की मृत्यु हो जाती है। प्रभावित पादप में पत्तियों के पीला पड़ने और मुरझाने के लक्षण दिखाई पड़ते हैं और परिणामस्वरूप पूर्ण निर्जलीकरण होने से पौधे मर जाते हैं।

   नियन्त्रण – पौधशालाओं के 10x1 मी. प्रति क्यारी 50 मि.ली. क्लोरपाइरिफोस (20EC) 50 ली. पानी में मिलाकर डालने से दीमक नियन्त्रण होगा। फॉरेट व फ्युरिडान 250 ग्राम प्रति क्यारी मे मिलाने से दीमक को नियंत्रित किया जा सकता है।

4. **नीम के बीजों के कीट** – ये कीट बीजों के अन्दर घुसकर उनको खोखला कर देते हैं। नीम के बीजों को हानि पहुचाने वाले कीट निम्न हैं – *ओरिजीफिलस एवयूमिनेटस, ओ० सूरिनामोन्सिस, रिजोपर्थी डोमिनिका, स्टेगोवियम पेनिसियम, कार्पोफिलस डिमिडिएटस, ट्राइवोलियम कैस्टानियम, ट्रा. कल्पयूसम*।

नियन्त्रण– बीजों को कार्बनडाइसल्फाइड (CS_2) कार्बन टेट्राक्लोराइड द्वारा उपचारित कर कीटों से बचाया जा सकता है।

नीम के मुख्य रोग :

नवोद्भिद् शीर्णता रोग : यह एक कवक जनित रोग है जो *फोमा जोलियाना* नामक कवक द्वारा होता है। इसके जीवाणु अनुकूल वातावरण मिलते ही कोमल पौधों को नष्ट कर देते हैं। पत्तियों पर भूरे रंग के धब्बें प्रकट होते हैं तथा धीरे-धीरे इनका आकार सिकुड़ने लगता है जिसके परिणामस्वरूप पत्तियां या तो गिर जाती है या सूख कर तने से लगी रहती है।

नियन्त्रण – रोग के लक्षण प्रकट होते ही कॉपर युक्त फफूंदी नाशक जैसे ब्लाइटोक्स का 0.2% घोल एक-एक माह के अन्तराल पर तीन बार छिड़काव कर देने पर इस रोग से बचाव हो जाता है।

1. **आल्टर्नेरिया पर्ण-चिती रोग :** पौधे की पत्तियों पर भूरे रंग के धब्बों के रूप मे प्रकट होने वाला यह रोग *आल्टरनेरिया आल्टरनेरिया आल्टरनाटा* नामक कवक द्वारा फैलते है। अनुकूल परिस्थितियों मे ये धब्बे आपस मे मिलकर पत्ती के काफी भाग को घेर लेते है। इस रोग के प्रभाव से 60% तक पर्ण-पतन होता हुआ देखा गया है।

   नियन्त्रण – इसकी रोकथाम के लिए पौधों पर कॉपर युक्त फफूंदी नाशक जैसे ब्लाइटोक्स अथवा डाइथेन एम-45 का 0.2% घोल, 20 दिन के अन्तराल पर तीन बार छिड़काव करना चाहिए।

2. **विस्फोट छिद्र रोग :** *ह्यूडोमोनास एजाडिरेक्टी* नामक जीवाणु द्वारा उत्पन्न रोग, नवरोतित पौधों में देखा गया है। इस रोग का प्रकोप 22-27°C तापमान पर अधिक पाया गया है।

   नियन्त्रण – पौधों पर जीवाणु नाशक जैसे प्लान्टोमाइसिन या एग्रीमाइसिन का 0.05% का छिड़काव करने से इस रोग से बचाव होता है।

3. **मूल विगलन रोग:** यह रोग पौधे की प्रारम्भिक अवस्था में उसकी जड़ों के आस पास पानी एकत्र होने के कारण उत्पन्न होते है। जल निकासी की समुचित व्यवस्था न होने से कुछ मृदा जनित कंवक जैसे *फ्यूजेरियम* समुदाय के कवक जड़ो को आक्रान्त कर उन्हें सड़ाना प्रारम्भ कर देते है, जिसके परिणामस्वरूप पौधौ के ऊपरी भागो में जल तथा पोषक तत्वो की कमी हो जाती है तथा पौधा मुरझाने लगता है।

   नियन्त्रण – इस रोग से बचाव के लिए क्यारियों में जल एकत्रित नहीं होने देना चाहिए तथा पौधे की सिंचाई डाइथेन जेड-78 (0.02%) के जलीय घोल से करनी चाहिए।

4. **पूर्ण-कुंचन रोग :** इस रोग से ग्रसित पौधों की पत्तियां गुच्छे के रूप में एकत्रित हो जाती है। यह रस चूसने वाले कीड़ों जैसे माइट इत्यादि कीड़ो से होती है।

   नियन्त्रण – इसके उपचार हेतु इथियान (0.05%), ब्लाइटोक्स (0.2%) तथा पावरमिन 2 मी.ली. प्रति लीटर का सम्मिलित मिश्रण प्रभावशाली पाया गया है।

5. **गेनोडर्मा मूल विगलन रोग :** यह बीमारी बेसीडियोमाइटीस समुदाय के कवक द्वारा उत्पन्न होती है, इस रोग के ग्रसित पौधों की मृत्युदर 10-40% तक आंकी गई है। नीम में यह बीमारी कम लगती है। *'गेनोडर्मा'* नाम से जाना जाने वाला यह रोगकारक कवक अनुकूल परिस्थिति पाकर चाकलेटी रंग के कुकुरमुत्तों के रूप मे पेड़ो की जड़ों से निकलता है। धीरे-धीरे इनका आकार बढ़ने लगता है तथा ये कई वर्षो तक जीवित रहते हैं। इस रोग को प्रारम्भिक अवस्था में पहचानना मुश्किल होता है, क्योकि इस कवक की प्रजनन संरचना काफी समय बाद बनती है। किन्तु इसकी जड़ो को धीरे-धीरे नष्ट कर पौधें में जल एंव पोषक तत्वों का संचरण रोक देता है, जिससे पौधा धीरे-धीरे नष्ट होता जाता है।

   नियन्त्रण – रोगग्रस्त पौधों की जड़ों को फफूंदी से नाशक दवा जैसे बेविस्टीन (0.2%) के घोल से उपचारित कर इस रोग पर नियन्त्रण किया जा सकता है।

6. **तना एवं छाल का प्रवण :** तने व छाल को मुख्य रूप से प्रभावित करने वाली यह शुष्क क्षेत्रो की पादप प्रजातियों की सामान्य बीमारी है। इस रोग से प्रभावित भागों पर कुछ परजीवी जैसे *अल्टरनेरिया समुदाय* या

बोट्रोयोडिप्लोडिया थियोब्रोमी आदि आक्रमण कर देते हैं।

नियन्त्रण- इस रोग की रोकथाम हेतु तने को बाह्य नुकसानों से बचाना चाहिए। पेड़ की छटाई करते समय अनावश्यक आघात नहीं होना चाहिए तथा कटे हुए स्थान पर चौबाटिया पेस्ट का लेप अवश्य करना चाहिए। अधिक तापमान से छाल को फटने से बचाने के लिए तने को 4 फीट तक बुझे हुए चूने के घोल से लेप कर देना चाहिए। इन प्रतिरोधात्म उपायों द्वारा पौधों को इस रोग से बचाया जा सकता है।

7. **पश्चक्षय रोग** : इस रोग का प्रकोप राजस्थान व गुजरात प्रदेशों के विभिन्न स्थानों पर अत्यधिक पाया गया है। गुजरात के मेहसाना नामक स्थान मे 70-80% तक नीम के पौधें इस रोग से प्रभावित पाए गए है। यह बीमारी एक शीर्ष भेदक कीट द्वारा होती है जिसे *लेस्पेरेसिया कोइनिगाना* के नाम से जाना जाता है। इससे ग्रसित पौधे का शीर्ष भाग धीरे-धीरे सूखने लगता है जिससे कुछ कवक जैसे *कोन्डिडा* प्रजाति इत्यादि प्रभावित भाग की ओर आकृष्ट होकर उस भाग को काला कर देते है। इससे प्रभावित शाखाएं सूखने लगती है।

नियन्त्रण- रोग की प्रारम्भिक अवस्था मे रोगोर (0.05%), ब्लाइटोक्स (0.15%) तथा पापरमिन 2 मि.ली प्रति लीटर का सम्मिलित मिश्रण पूर्ण नियंत्रणकारी है।

अस्तोदय की वीणा

बाजे अस्तोदय की वीणा-क्षण-क्षण गगनांगण में रे।
हुआ प्रभात छिप गए तारे,
संध्या हुई भानु भी हारे,
यह उत्थान पतन है व्यापक प्रति कण-कण में रे।।
ह्रास-विकास विलोक इंदु में,
बिंदु सिन्धु में सिन्धु बिंदु में,
कुछ भी है थिर नहीं जगत के संघर्षण में रे।।
ऐसी ही गति तेरी होगी,
निश्चित है क्यों देरी होगी,
गाफ़िल तू क्यों है विनाश के आकर्षण में रे।।
निश्चय करके फिर न ठहर तू,
तन रहते प्रण पूरण कर तू,
विजयी बनकर क्यों न रहे तू जीवन-रण में रे?

- रामनरेश त्रिपाठी

लाह की सघन खेती के लिए दो नई प्रजातियों के बीजों का परीक्षण एवं मूल्यांकन

श्री रवि शंकर प्रसाद, डॉ. संजय सिंह एवं श्री हरि शंकर लाल
वन उत्पादकता संस्थान, रांची

भूमिका:

लाह एक प्राकृतक राल है जो *केरिया लेका* नामक कीट द्वारा उत्पन्न किया जाता है जो कि मादा कीट के शरीर से द्रव के रूप में स्रवित होता है। इसका उत्पादन मुख्यत: वनों या वनों के आसपास रहने वाले लोगों द्वारा किया जाता है। यह उन लोगों के लिए जीविका का एक मुख्य स्रोत माना जाता है। परंपरागत तरीके से लाह का उत्पादन मुख्य रूप से बेर, पलाश, एवं कुसुम जैसे पोषक वृक्षों में किया जाता रहा है। किन्तु इसमें अनेक कठिनाइयों का सामना करना पर रहा है और उत्पादन में भी लगातार हास हो रहा है। क्योंकि जंगल लगातार घटते जा रहे है, जिनके कारण तीनों प्रजातियों के वृक्षों की संख्या लगातार घट रही है। जिसका मुख्य कारण यह है की इनको परिपक्व होने में काफी समय लगता है।

इन्हीं सब बातों को ध्यान में रख कर लाह के पारंपरिक पोषक वृक्षों के अलावा *फ्लेमिंजिया सेमियालता* (*Flemingia semialata*) और *फ्लेमिंजिया मैक्रोफायला* (*Flemingia macrophyla*) जिसे गलफुल्ली और वन छोला के नाम से भी जाना जाता है। ये दलहन प्रजाति के पौधे हैं, जिनकी औसत ऊंचाई लगभग 2 से 3 मीटर होती है। पारंपरिक पोषक वृक्षों के जगह इन प्रजातियों का उपयोग करने के कई कारण है। इसका पौधा कम समय में तैयार होता है, लगभग एक वर्ष में ही इसमें लाह लगाया जा सकता है तथा छंटाई के 6 महीने के बाद पुन: लाह लगाया जा सकता है। इसे एक बार लगाने के बाद 6 से 8 वर्ष तक लगातार लाह की उपज ली जा सकती है तथा इसके साथ-साथ उन्हीं खेतों में अन्य फसल भी लगाई जा सकती है।

इन प्रजातियों में जाड़े में कुसुमी लाह का उत्पादन किया जाता है और साथ में ग्रीष्म काल में भी कुसुमी लाह की खेती की जा सकती है, परंतु इसका उत्पादन जाड़े की तुलना में कम होता है। किसानों की इसके प्रति अत्यधिक रुझान देख कर कम समय में वैज्ञानिक विधि द्वारा ज्यादा से ज्यादा पौधे कैसे तैयार किए जाए ताकि उन्हें किसानों के बीच वितरण किया जा सके इन्ही सब बातों को ध्यान में रख कर इनके बीजों पर प्रयोगात्मक अध्ययन किया गया है।

सामग्री एवं विधि:

इस अध्ययन में दोनों प्रजातियों के बीजों के बाहरी लक्षण के अलावा अंकुरण क्षमता की जांच के लिए तीन विधियाँ अपनाई गई।

बीज के भौतिक जांच:

इसके बीज का संग्रह झारखंड के खूंटी ज़िले से प्राप्त किया गया। इसके बाद इनकी शुद्धता की जांच के लिए वैज्ञानिक तकनीक के द्वारा इसको शुद्धिकरण किया गया तत्पश्चात स्लाइड कैलीपर की सहायता से बीज की लंबाई चौड़ाई नापी गई तथा बीज में विद्यमान नमी का आकलन किया गया। प्रत्येक प्रजाति के 30 बीज और तीन प्रतिरूप का अध्ययन किया गया। इसके अलावा भौतिक जांच के लिए बीजों का रंग, पानी में डुबोकर उनकी शुद्धता तथा बीजों को काट कर परखा गया।

बीज अंकुरण जांच :

बीज अंकुरण हेतु तीन अलग-अलग उपचार प्रयोग किए गए - उपचार 1 (साधारण पानी में एक घंटे); उपचार 2 (गरम पानी में एक घंटे के लिए); तथा उपचार 3 (आधे घंटे के लिए सल्फ्यूरिक अम्ल में)। उपचार के पश्चात बीजों को पेट्री डिश में सोख्ता कागज के ऊपर रखा गया, उसमें समय-समय पर पानी दी गई ताकि नमी बरकरार रहे। प्रत्येक प्रजाति की 30-30 बीज को पेट्री डिश में रख कर उसे ऊष्मानियंत्रक में रखा गया जिसका तापमान 28 ± 0.5°C था, आर्द्रता 70 ± 5 प्रतिशत रखी गयी। 6 दिनों के बाद बीजों में

तालिका : *फ्लेमिंजिया सेमियालता* और *फ्लेमिंजिया मैक्रोफायला* पौधे की वानस्पतिक लक्षण

लक्षण	विशेषताएं	*फ्लेमिंजिया सेमियालता*	*फ्लेमिंजिया मैक्रोफायला*
फेनोलॉजी	फल आने की अवधि संग्रह का सर्वश्रेष्ठ समय	जनवरी-मार्च मार्च-अप्रैल	सितम्बर-जनवरी नवम्बर-दिसम्बर
आकार	फलों का प्रकार रंग	फली हल्का काला	फली गहरा काला
माप	लम्बाई (मि.मी.) चौड़ाई (से.मी.) अभिमुखता अनुपात	0.36 (से.मी.) 0.35 (से.मी.) 1.02	0.32 (से.मी.) 0.30 (से.मी.) 1.06
वजन	1000 बीज वजन (ग्रा) बीज की संख्या प्रति किलो	22.50 (ग्रा) 44440	18.20 (ग्रा) 54945
प्रारम्भिक स्थिति	नमी की मात्रा (%) जीवन क्षमता (%)	8.2 73	8.0 70
शुद्धता	शुद्धता (%)	95	96
अंकुरण	अंकुरण (%) अंकुरण अवधि (दिन)	70 12	60 15
भंडारण अवधि	प्रकृति धारणा शक्ति (माह) अधिकतम तापमान (^{0}C) उपयुक्त कंटेनर	आर्थोडॉक्स 24 4 हवा मुक्त बैग	आर्थोडॉक्स 24 2-4 हवा मुक्त बैग, प्लास्टिक कंटेनर

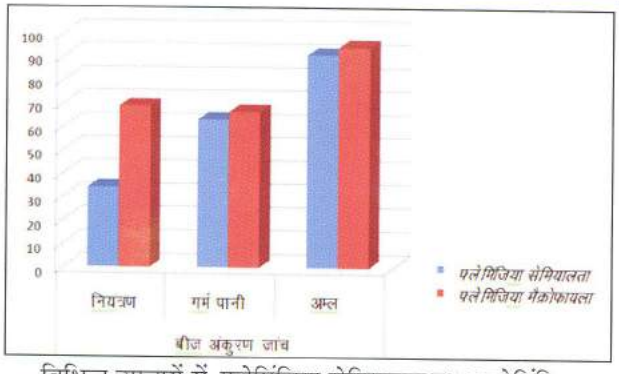

विभिन्न उपचारों में *फ्लेमिंजिया सेमियालता* तथा *फ्लेमिंजिया मैक्रोफायला* का अंकुरण

अंकुरण प्रारम्भ हो गया तथा लगातार 12 दिनों तक उसकी वृद्धि दर्ज की गई।

परिणाम और चर्चा :

प्रत्येक उपचार में अंकुरण छठे दिन से प्रारम्भ हो गया तथा अधिकतम बीज छठे दिन में ही अंकुरित हो गये। साधारण पानी से उपचारित बीजो में फ्लेलमजिया सेमियालता में 34% तथा फ्लेलमजिया मैक्रोफायला में 69% अंकुरण पाया गया। फ्लेलमजिया सेमियालता के बीज का गरम पानी में उपचार अंकुरण क्षमता को लगभग दुगना बढ़ाने में प्रभावी सिद्ध हुआ। इस उपचार में जांच के दौरान सबसे ज्यादा अंकुरण 11 दिन पाया गया तथा सेमियालता में औसतन कुल 63% तथा मैक्रोफायला में 66.7% अंकुरण पाया गया। अम्ल द्वारा उपचरित बीज में अधिकतम औसतन अंकुरण 94.4% मैक्रोफायला में मिला जबकि सेमियालता में औसतन अंकुरण 91.1% पाया गया।

निष्कर्ष :

दोनों प्रजातियों में मैक्रोफायला में सर्वोत्तम अंकुरण प्राप्त हुआ जो साबित करता है की उपरोक्त प्रजाति पौधे तैयार करने में अम्ल द्वारा उपचरित मैक्रोफायला के बीज अंकुरण क्षमता के अनुसार उत्तम साबित होते है।

पूर्वी भारत के करंज की आनुवांशिक विविधता का पी.सी.आर. आधारित आणविक मार्कर द्धारा विश्लेषण

सुश्री कंचन कुमारी, डॉ. संजय सिंह एवं सुश्री अमृता सिन्हा
वन उत्पादकता संस्थान, रांची

पोंगेमिआ पिन्नाटा, जिसे सामान्यत: करंज के नाम से जाना जाता है, एक मध्यम आकार का सदाबहार और पर्णपाती झाड़ीनुमा वृक्ष है। भारतीय उपमहाद्वीप, एशिया, अफ्रीका, प्रशांत और चीन में इसका व्यापक वितरण देखा गया है। यह एक नाइट्रोजन स्थिरीकरण करने वाला वृक्ष है तथा यह लेगुमिनेसी कुल का एक सदस्य है। इसे सामान्य रूप से मिट्टी का कटाव रोकने के लिए राजमार्गो, सड़कों तथा नहरों के किनारे लगाया जाता है। इसके बीज और तेल, स्वाद कसैला, कृमिनाशक और परिष्कृत होता है। इसका तेल पर्यावरण के लिए हानिरहित है तथा जैव-डीजल के महत्वपूर्ण स्रोत के रूप में इसमें अपार सम्भावनाए है। हालांकि इसकी उपज की वृद्धि के लिए, हमें सबसे पहले उच्च कोटी के बीज की पहचान करनी होगी। किसी भी प्रजाति के अंतर्निहित आनुवंशिक सुधार उसमें आनुवंशिक परिवर्तनशीलता की मात्रा पर निर्भर करता है। आनुवंशिक विविधता को मापने के कई तरीके है जैसे कि रूपतामक, जैव रासायनिक और आणविक गुण। इस सब में आणविक गुण जो आनुवंशिक पदार्थ पर निर्भर करता है, पर्यावरण परिवर्तन से प्रभावित नहीं होता है। हमारे पर्यावरण में मौजूद भिन्नताओं को खोजने में आणविक चिन्हक (मार्कर) एक शक्तिशाली उपकरण सिद्ध हुआ है।

पी.सी.आर. आधारित आणविक मार्कर का व्यापक उपयोग, वंशावली सहित प्रजातियों के पौधे विश्लेषण, जनसंख्या अध्ययन और आनुवंशिक सम्बन्ध मानचित्रण में होता है। आनुवंशिक मार्करों में आर.ए.पी.डी. (रैंडम प्रवर्धित बहुरूपी डी.एन.ए.) एक अत्यन्त संवेदनशील, लघु प्राइमरों (8 से 12 न्यूक्लियोटाइड) का उपयोग कर आनुवंशिक रूप से विशिष्ट व्यक्तियों के बीच अंतर करने में सक्षम हैं।

सामग्री और तरीके :

पादप सामग्री :

चौबीस जीनोटाइप के जर्मप्लाज्म (सी.पी.टी.एस.-आकृति विज्ञान के आधार पर बेहतर वृक्ष) झारखण्ड के तीन कृषि-जलवायुवीय क्षेत्र (अक्षांश और देशांतर 22° एन 24° 50' एन और 83° 30' ई से 87° ई, क्रमश:) से लाया गया है तथा इसे वन उत्पादकता संस्थान, रांची में लगाया गया है ताकि उनके प्रतिरूपों को परीक्षण में लाया जा सके (तालिका 1)।

तालिका 1: अध्ययन में प्रयोग हुये जीनोटाइपस का विवरण।

क्र.सं.	कूट	वन क्षेत्र	स्थान/गांव	सीमा	ऊँचाई (M)	कृषि जलवायुवीय क्षेत्र
1.	DIHBGU	हजारीबाग	ग्रामउरवान	बरही	370	JH-1 केन्द्रीय एवं उत्तरी पूर्व पठार क्षेत्र
2.	DIGDPS	गिरिडीह	बंगाबाद	कुर्चुटा	390	
3.	DIHBNK	हजारीबाग	नवाकुटार	हजारीबाग	610	
4.	DIKDBD	कोडरमा	बरीयादी	दोमचांच	380	
5.	DICTUT	चतरा पश्चिम	उत्तसंग्रा	चतरा पश्चिम	640	
6.	DIRCHT	रांची	हूतार	बेरो	790	JH-1 केन्द्रीय एवं पश्चिमी पठार क्षेत्र

7.	DIRCPT	रांची पूर्व	प्लांडू	बेरो	810	
8.	DILDBN	लोहरदगा	बग्रेर, नावाताना	कुरू	640	
9.	DIRCCP	रांची पूर्व	चुटटूपल्लु	ओरमांझी	630	
10.	DIKTIT	खूंटी	ठतेदार टोली	खूंटी	700	
11.	DIGWVP	गढ़वा दक्षिण	विश्राम पुर	रांची पूर्व	410	
12.	DISDPS	सिमडेगा	पिओसोकरा	सिमडेगा	370	
13.	DIGLIG	गुमला	इन्द्रकेला, गिरिजा टोला	गुमला	520	
14.	DILDCN	रांची पश्चिमी लोहरदगा	चेन्नरा, नावाडीह	लोहरदगा	590	
15.	DIRCCH	रांची	चुंड	भुद्दू	790	
16.	DIRCPS	रांची पूर्व	पनसाकाम	रांची पूर्व	500	
17.	DIRCBH	रांची पूर्व	बरहे	बुरमू	610	
18.	DIRCJIT	रांची पूर्व	ज्मुन टोल्ली	बुरमू	650	
19.	DILDKD	रांची पश्चिम, लोहरदगा	कंदरा	लोहरदगा	570	
20.	DIGLBJ	गुमला	बिश्रामपुर, झानी टोली	गुमला	800	
21.	DIGLBB	गुमला	बोमबीबाड़ी	गुमला	500	
22.	DIPHMB	पोराहाट	मुरूमभूरा	सोनगरा	690	JH-3 दक्षिणी पूर्व पठार क्षेत्र
23.	DIDBPM	ढालभूम	ढालभूमगढ़	चकुलिया	350	
24.	DISKHN	सराइकेला	हट्नाडा, तलटोला	सराइकेला	390	

डी.एन.ए. निष्कर्षण :

स्वच्छ और रोजजनकों से अप्रभावित प्रत्येक जीनोटाइप के युवा पत्तों से डी.एन.ए. एकत्र और विश्लेषित किया गया। डी.एन.ए. का निष्कासन (एक्सट्रेक्शन) संशोधित सी.टी.ऐ. बी. विधि से किया गया ताकि पोलीफेनोलिक यौगिकों और अन्य पोलीसैकाराइड को पूरी तरह से हटाया जा सके। ये यौगिक पी.सी.आर. विस्तारण में बाधा उत्पन्न करते हैं। तत्पश्चात निकाले गये डी.एन.ए. का परिमाणन दो तरीके से किया गया– पहला:- यू.वी. स्पेक्ट्रोफोटोमीटर और दूसरा:- 0.8 प्रतिशत अगरोज जेल में। फिर आवश्यकतानुसार उसकी मात्रा को (50 एनजी/माइक्रो लीटर) तनु किया गया।

आर.ए.पी.डी. विश्लेषण :

आर.ए.पी.डी. फिंगरप्रिंटिंग के लिए जीनोमिक डी.एन.ए. की पी.सी.आर. प्रवर्धन, 25 अनियमित डेकामर ओलिगोनयूक्लेओटाइड प्राइमरों (आर.पी.आई. श्रृंखला, बैंगलोर जीनी) के उपयोग से किया गया। इस पी.सी.आर. प्रतिक्रिया मिश्रण में, 50 एनजी/माइको लीटर टेम्पलेट डी.एन.ए., 1x Taq के बफर (Tris 15 मिमी और MgCL2 के साथ), 0.2 मि.मी. प्रत्येक डीओक्सीनयूक्लेओटाइड ट्रायफोस्फेट (बंगलोर, जीनी, भारत) लिया गया। सभी पी.सी.आर. अभिक्रियाए Gene Amp* उष्ण चक्रक अभिक्रियक 9700 में की गयी। इस पी.सी.आर. प्रवर्धन में

शामिल विभिन्न चक्र: 94° C पर 1 मिनट, एनीलिंग तापमान 30-50°C (जो कि तापमान ढाल के आधार पर चुना गया) 1 मिनट 72° C पर विस्तार 2 मिनट तथा अंतिम विस्तार सात मिनट तक 72° C पर किया गया। इस प्रतिक्रिया में जो अम्प्लिकोंस प्राप्त हुये उन्हें 1x TAE बफर में 1.5 प्रतिशत एगरोस जेल (5 माइक्रोग्राम प्रति मिलीग्राम, एथीडीयम ब्रोमाइड युक्त) पर अलग कर लिया गया। प्रवर्धित का आकार, 100 बी.पी. डी.एन.ए. मार्कर से तुलना द्वारा अनुमान लगाया गया था। जेल का चित्र, जेल प्रलेखन प्रणाली (Syngene) द्वारा लिया गया।

आंकड़ों का विश्लेषण :

प्रत्येक स्पष्ट बैंड को उसके जनक का प्रतिनिधि माना गया और उसके प्रत्येक नमूने के लिए 1 (उपस्थित) या 0 (अनुपस्थित) के रूप में लिय गया। सिर्फ उसी पट्टी को आकड़ों के विश्लेषण में लिया गया जो स्पष्ट रूप से जेल में देखा गया। बहुरूपी और एकरूपी उत्पादों की संख्या, 24 जीनोटाईप के लिए प्रत्येक प्राइमर के लिए निर्धारित किया गया था। कम तीव्रता वाली पट्टी को इस आकडों के विश्लेषण में उपयोग में नहीं लिया गया।

अनुवांशिक विविधता को मापने के लिये निम्नलिखित मापदंडों : पी. मान (प्रवर्धित उत्पाद की बहुरूपता), एलील संख्या (एन.ए.), प्रभावी एलील का औसत संख्या (अन इ), नी का औसत जीन विविधता सूचकांक (एच), शैनन सूचकांक (आई) और जीन प्रवाह (एन.एम.) के स्तर का अनुमान का उपयोग किया गया। इन आकड़ों को पोंपजनि सॉफ्टवेयर (ये एवं सहयोगी, 1999) की सहायता से आबादी के भीतर विविधता, कुल जीन विविधता और अंतर आबादी विविधता (जी.एस.टी.) को ज्ञात करने के लिए प्रयुक्त किया गया।

परिणाम तथा विमर्श :

वर्तमान अध्ययन में, आर.ए.पी.डी. (रैंडम प्रवर्धित बहुरूपी डी.एन.ए.) मार्कर के द्वारा उच्च कोटि के जर्मप्लास्म जिसमें कि ज्यादा तेल पाया जाता है, उसके जर्मप्लास्म का फिंगरप्रिंट खोजने का प्रयास किया गया है तथा उसे उसके दूसरे स्वरूपों के साथ सह-सम्बन्ध स्थापित करने का भी प्रयास किया गया है। अनुवांशिक सुधार उस पौधे के उपयोगिता पर निर्भर करता है। यह सुधार उस पौधे के जैवभार को बढ़ाने के लिए, तेल उपज और तनाव सहिष्णुता के चयन के लिए किया जाता है। यह सभी सुधार उसके चयन, रखरखाव तथा इस्तेमाल पर निर्भर करता हैं।

आणविक लक्षणों का वर्णन :

वंशवृक्ष में प्रयुक्त अनुवांशिक दूरी के आधार पर विभिन्न जोड़ों में उसके बीज के तेल के साथ सहसंयोजन स्थापित किया गया। इस वंशवृक्ष में जेनोटाइप को दो अलग अलग समूहों में बांटा गया। एक समूह में केवल एक जर्मप्लास्म को पाया गया अर्थात PPGDPS जोकि मूल रूप से गिरिडीह का है तथा शेष 2.3 जेनोटाइप को दूसरे समूह में पाया गया। बाद में द्वितीय समूह को पांच उप-समूहों में विभाजित किया गया। तीन उप-समूहों में 7-7 जेनोटाइप तथा दो जीनोटाइप को अलग-अलग समूह में पाया गया। पहले उप-समूह में जिसमें सात सदस्यों को शामिल किया गया है वे सभी मध्य और पश्चिमी पठार से इकट्ठा किये गये है (JH-2) उन सभी का गुण (तेल सामग्री अनुपात) अलग अलग है पर वे समान कृषि-जलवायुवीय क्षेत्र से हैं। इस आधार पर वे सभी एक समूह में है।

वे जर्मप्लाज्म अत्यधिक समान पाए गए और प्रतीत होता है ये बहुत हाल ही में एक दूसरे से अलग हुये है। इसी समूह में, वह आनुवंशिक रूप (जे.एच.-2; झारखण्ड का कृषि-जलवायुवीय क्षेत्र) से लिया गया है, सबसे कम तेल उपज करने वाले आनुवंशिक रूप PPGDPS जिसे की गुगला (जे.एच.-2) से इकट्ठा किया गया है, के साथ युग्मित है। दो विभिन्न आबादी होने के बावजूद ये एक ही कृषि-जलवायुवीय क्षेत्र से है पर उनके तेल उपज के स्तर में अत्यधिक विभिन्नता देखी गई है।

अगले उप समूह में फिर सात सदस्यों को शामिल किया गया है। इस समूह की आबादी दो विभिन्न कृषि-जलवायुवीय क्षेत्र से सम्बन्धित है (मध्य और पश्चिमी पठार(जे.एच.-2 और जे.एच.-3)। इसी समूह में दो आनुवंशिक रूप PPPHMB और PPSKHM जो एक दूसरे से ज्यादा आनुवंशिक रूप से करीब है और एक ही कृषि-जलवायुवीय क्षेत्र से है। (जे.एच.-3(दक्षिण पूर्वी झारखण्ड के पठार) और हाल ही में एक दूसरे से अलग हुये

है, वे एक साथ इसी समुह में है। ये दोनों जर्मप्लाज्म, PPRCCP और PPHBGU इस समूह में सबसे अलग है। इस समूह में जर्मप्लाज्म, PPKDBD और PPCTUT जो की मध्य और उत्तर पूर्वी पठार (जे.एच.-1) और पश्चिमी पठार (जे.एच.-2) से सम्बन्धित है अन्य सदस्यों के साथ रखा गया है।

करंज भारत के लिए स्वदेशी है, इस बात को ध्यान में रखते हुये ऐसी उम्मीद की जाती है की भारत के भीतर इस प्रजाति का आनुवंशिक विविधता का स्तर उच्च होगा। करंज के बीज तथा तेल के गुणों में विस्तृत विविधता पाई गई है।

इस प्रजाति में बड़े प्ररूपी विविधता का मौजूद होना आनुवंशिक सुधार के लिए एक बड़ा अवसर प्रदान करता है। भारत और ऑस्ट्रेलिया से एकत्र पौधे में डी.एन.ए. फिंगर प्रिंटिंग के आधार पर उनके आनुवंशिकी विविधता (आबादी के मध्य और भीतर) करंज में पाई गई है।

झारखंड को तीन कृषि-जलवायुवीय क्षेत्र यानी मध्य और उत्तर पूर्वी पठार, पश्चिमी और दक्षिणी पूर्वी पठार में बांटा गया है। वंशवृक्ष के अनुसार वे आनुवंशिक रूप (जीनोटाइप) जो की ज्यादा तेल उपज करने की क्षमता रखते है वे झारखंड के दूसरे कृषि-जलवायुवीय क्षेत्र से सम्बन्ध रखते है, जहां की 33 प्रतिशत प्राकृतिक वन पाया जाता है। देखा गया है की इस क्षेत्र में बारिश पहले और कम मात्रा में होती है तथा मिट्टी में पानी हालांकि, जब तेल उपज के गुण की समग्र मूल्यांकन किया गया तब पाया गया है की व्यक्तिगत आनुवंशिक कारक पर्यावरणीय कारकों प्रभावी होते हैं।

करंज एक महत्वपूर्ण वृक्ष जनित तिलहन (TBO-वृक्ष से प्राप्त तेल) फसल का मुख्य उदाहरण है जिसका स्वदेशी समुदायों के लोग और किसान इसके औषधीय गुणों तथा बीज के तेल के लिए इसका लगातार प्रयोग करते रहे हैं। वर्तमान जांच यह दर्शाती है कि किसान के बीच इस जर्मप्लाज्म का आंशिक रूप से विनिमय हुआ है।

दुनिया भर में, जर्मप्लाज्म संग्रह और विकास, आकृति विज्ञान, बीज विशेषताओं और उपज लक्षण के मूल्यांकन पर व्यापक काम हुआ है पर करंज के आनुवंशिक परिवर्तनशीलता और विचलन पर बहुत कम रिपोर्ट दर्ज है। पौधों की प्रजातियों में आनुवंशिक विविधता के प्राकृतिक वितरण, उसके पृथक्करण (विलगता), जलवायु परिवर्तन के कारण निवास स्थान में परिवर्तन, पारिस्थितिकी, भूगोलीक कारक है और यह अत्यधिक मात्रा में मानव प्रजनन गतिविधियों पर निर्भर करता है। कुल मिलाकर कुछ प्रजातियां के बीज आनुवंशिक दूरी और भौगोलिक दूरी के साथ सम्बन्ध स्थापित नहीं हो सकता है। ऐसा पाया गया है की कुछ प्रजातियों में कृत्रिम और प्राकृतिक कारक, प्रजातियों की आबादी को आनुवंशिक संरचना को आकार देते है। वर्तमान अध्ययन के परिणाम से पता चलता है की पूर्वी भारत के भीतर करंज जर्मप्लाज्म व्यापक आनुवंशिक विविधता पाई गई है। यह भी पता चलता है की आर.ए.पी.डी. मार्कर प्रणाली इस पौधे के आनुवंशिक विविधता के विश्लेषण में काफी हद तक उपयुक्त है।

हमारी जिन्दगी का इस तरह हर साल कटता है
कभी गाड़ी पलटती है, कभी तिरपाल कटता है।
दिखाते हैं पड़ोसी मुल्क आँखें, तो दिखाने दो
कभी बच्चों के बोसे से भी माँ का गाल कटता है।

- मुनव्वर राना

बांस का कायिक प्रवर्धन

श्री संजय सिंह, श्री रवि शंकर प्रसाद, श्री शंकर लाल, श्री जीशान दानिश
वन उत्पादकता संस्थान, रांची

भूमिका :

बांस एक महत्वपूर्ण अकाष्ठीय उपज है, जिसका औद्योगिक और घरेलू दोनों क्षेत्रों में भारी मांग है। बांसों की खपत कागज निर्माण उद्योग में बहुत ज्यादा है जबकि बांसों की स्थानीय मांग मुख्यत: गृह निर्माण कार्यों और हस्त उद्योग में है। अत: बांस का रोपवन लगाना आर्थिक दृष्टि से ही नहीं वरन बड़ी संख्या में लोगों की जीविका उपलब्ध कराने का महत्वपूर्ण संसाधन है। विश्व में प्रकाष्ठ आपूर्ति का निरंतर ह्रास हो रहा है। बांस काष्ठ सदृश विशेष गुण रखने के कारण काष्ठ का उत्तम प्रतिस्थापक सिद्ध हो सकता है। बांस पुष्पन की अवधि/अंतराल निश्चित नहीं है। एकल पुष्पन में जिन बांसों पर फूल आते है वे मर जाते है। सामूहिक पुष्पन अधिकतर लम्बे समय बाद हुआ करता है और इसकी अवधि प्रजाति के अनुसार भिन्न भिन्न (30-80 वर्ष तक) पायी जाती है। सामान्यत: बांस मोनोकार्पिक होता है अर्थात बांस अपने जीवन चक्र के अंत में केवल एक बार ही पुष्पित होकर बीज उत्पादन करता है, तत्पश्चात मर जाता है। बांस के बीज की अंकुरण क्षमता कम तथा चक्र बहुत लम्बा होने के कारण बीजों की उपलब्धता अनिश्चित होती है। अतएव, इन परिस्थितियों में वर्धी या कायिक प्रवर्धन का उपयोग किया जाता है। बांस प्रजातियों में बीज द्वारा तैयार किए पौधों में अलग-अलग पैतृक गुण होते हैं, जबकि कायिक प्रवर्धन द्वारा तैयार सभी पौधों में सम्पूर्ण पैतृक गुण स्वत: ही आ जाते है। अत: कायिक प्रवर्धन से बनाए गए पौधे एक समान अच्छी किस्म का होना निश्चित किया जा सकता है, यदि मातृ पौधे का चुनाव उचित हो।

कायिक प्रवर्धन की विधिया :

कायिक प्रवर्धन की मुख्य पांच विधियां निम्न है :

(क) बहुगुणक/प्रगुणक विधि (मेक्रोप्रोलिफेरेशन) :

इस विधि से पौधे तैयार करने के लिए बांस बीज की आवश्यकता मात्र प्रथम वर्ष में ही होती हैं। यदि बीजों की उपलब्धता सीमित हो और पौधों की वांछित संख्या अधिक हो तो इस विधि द्वारा पौध उत्पादन में कई गुना वृद्धि की जा सकती है। इस विधि में जड़ सहित प्रकन्द और संधिस्तम्भ को अलग करते हुये बहुत बड़ी संख्या में प्रवर्ध्य तैयार किए जा सकते है, जिसका वर्णन निम्न है:

(क) प्रकृति में स्वत: बीज तैयार होने अथवा जुलाई में, पौध उगाने के लिए अंकुरण कक्ष में बांस के बीजों को बोया जाता है।

(ख) अगस्त में, 3-5 पत्तियों वाले किशोर पौधों को अंकुरण क्यारी या अंकुरण बक्से अथवा वन क्षेत्र से निकाल कर उन्हें पोली बैग में रोपा जाता है।

(ग) किशोर बांस की पौध को पौली बैग में रोपण उपरांत 3-4 दिनों तक छाया में रखा जाता है। जब पौली बैग में रोपित पौध ठीक से स्थापित हो जाती है तो उसे खुले स्थानों में सूर्य की धूप में स्थानांतरित किया जाता है।

(घ) सितम्बर में 30 मि.ली. पानी में यूरिया -0.05 ग्राम और म्यूरेट ऑफ पोटाश -0.12 ग्राम को मिलकर उर्वरक की दूसरी मात्रा प्रत्येक पौली बैग में डाली जाती है।

(ड) अगस्त से मार्च तक, बांस के पौधों को नियमित रूप से पानी देकर, निराई और मिट्टी की गुड़ाई करके रखरखाव किया जाता है। इस मध्य प्रत्येक पॉली बैग में 3 से 14 तक की संख्या में तल शाखाएं विकसित हो जाती हैं। यह संख्या विभिन्न प्रजातियों में भिन्न-भिन्न हो सकती हैं।

(च) अप्रैल के प्रथम सप्ताह में पौधों को पॉली बैग से सावधानी पूर्वक हटा देते है। प्रत्येक प्रचुरोदभवी तल शाखा के कुछ प्रकन्द तथा कुछ जड़ों के साथ कलम-कैंची (सिकेटियर) से प्रकन्द कतरन द्वारा अलग कर लिया जाता है। ये प्रवर्ध्य के रूप में कार्य करते हैं। 20 से.मी. X 15 से.मी. आकार के प्रत्येक

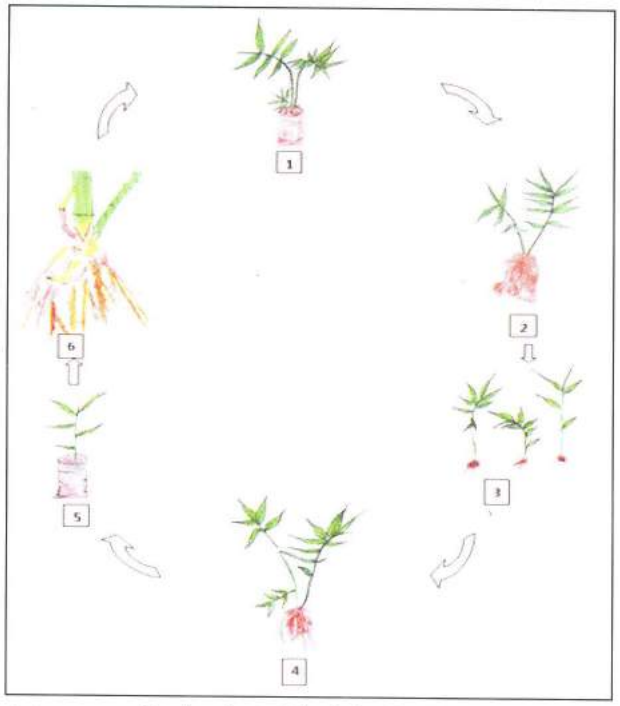

(1) जड़युक्त बांस पौध को पॉली बैग से मिट्टी सहित बाहर निकालना (2) जडयुक्त बांस पौध की मिट्टी को सावधानीपूर्वक हटाना (3) बांस पौधों को अच्छी तरह पानी में धोकर अतिरिक्त जड़ों को हटाना (4) बांस पौधा में आए नए प्रवर्ध्यों को सावधानीपूर्वक कैंची द्वारा अलग अलग करना (5) मिश्रण से भरे पौली बैग में अलग किए गए प्रवर्ध्य को लगाना (6) प्रकन्द विभाजन द्वारा रोपण योग्य पौध

पॉली बैग में एक-एक प्रवर्ध्य को अलग-अलग रोपा जाता है।

(छ) पौली बैग में रोपित प्रवर्ध्य को 3 से 4 दिनों तक छाया में रखते हैं। जब सभी प्रवर्ध्य ठीक से स्थापित हो जाते है, तब इन्हें सूर्य के प्रकाश में खुले स्थानों पर स्थानांतरित किया जाता है।

(ज) मई में, चरण घ के अनुसार एन.पी.के. की दूसरी मात्रा प्रयुक्त की जाती है।

(झ) अप्रैल से जून तक पौधों को नियमित रूप से पानी, निराई और मिट्टी की गुडाई करके रखरखाव किया जाता है।

(ञ) जुलाई के प्रथम सप्ताह तक अप्रैल में रोपित पौधे वन क्षेत्र में लगाने योग्य हो जाते हैं। इस प्रकार प्रत्येक पौली बैग में 3 से 14 तक की संख्या में तल शाखायें विकसित हो जाती है। इन पौधों में से कुछ पौधे भविष्य में बहुगुणन/प्रगुणन के लिए पौधशाला में रख लिए जाते हैं तथा शेष पौधे क्षेत्र रोपण हेतु भेजे दिये जाते है। यह प्रक्रिया बारम्बार दोहराई जा सकती है।

(ख) प्रकन्द रोपण :

प्रकन्द रोपण में जीवित प्रकन्द का लगभग 30 से.मी. लम्बा भाग जिसमे एक दो आंखें हो, 40-50 से.मी. आकार के गड्ढे, जिसमे गोबर की खाद तथा मिट्टी का मिश्रण भरा हो, में रोपित कर दिया जाता है। शुष्क मौसम में सिंचाई अवश्य करनी चाहिए। प्रकन्द का प्रयोग कल्म ना बनाने वाली प्रजाति के पौधों में भी होता है।

(ग) प्रशाखायें (आफसेट) रोपण :

ऑफसेट रोपण बांस प्रवर्धन का सबसे पारम्परिक तरीका है। प्रशाखायें (आफसेट) उस रोपण सामग्री को कहते है जिस में प्रकन्द भाग के साथ एक या दो वर्षीय नाल (कल्म) का भी लगभग 1.0 मीटर भाग जुडा हो। इसे तैयार करने के लिए एक वर्षीय या अधिक से अधिक दो वर्षीय कल्म को लगभग एक मीटर लम्बाई पर तीर्यक रूप से काट देते है और जिस प्रकन्द से वह पैदा हुआ हो उसे जड़ों सहित इतनी लम्बाई से निकाल लेते है कि उसमें कम से कम एक आंख हों। ऐसी प्रशाखाओं को वर्षा ऋतु के आरम्भ में पर्याप्त आकार के बड़े गड्ढों में इस प्रकार रोपित कर देते है कि 2 से 3 अंतगाठें मिट्टी में दब जाये और आंख को कोई क्षति न पहुंचे।

(घ) नाल (कल्म) रोपण :

एक से तीन वर्ष पुरानी नाल की सामान्यत: एक से दो गांठों वाली कलमों को तिरछा या क्षैतिजाकार स्थिति में रोपा जाता है। सामान्यत: रोपण के लिए अप्रैल-मई के माह उपयुक्त माने जाते हैं। क्षैतिजाकार स्थिति से अच्छे परिणाम प्राप्त होते है। उच्च आर्द्रता वाले स्थानों में इस विधि के कई प्रजातियों की आसानी से रोपण सामग्री तैयार की जा सकती है। कुछ प्रजातियों में जड़ीत सफलता प्राप्त करने के लिए जड़ीय हार्मोन तथा अन्य रसायनों जैसे इंडोल ऐसीटिक एसिड (आई.ए.ए.), इंडोल ब्यूटिरीक एसिड (आई.बी.ए.) नैप्थलीन एसीटिक एसिड (एन.ए.ए.) कुमारिन और बोरिक एसिड के साथ उपचारित किया जाता है। नाल कलम के लिए उन नालों का चयन किया जाता है जो 1-2 वर्ष पुराने हों और जिनमे स्वस्थय कलिकायें उपस्थित होती हैं। टुकड़ो का

चुनाव कल्म के निचले व मध्य भागों से करना चाहिए। मध्य मार्च से मई का समय कटिंग के लिए उत्तम है। गांठें जितनी ज्यादा होंगी कल्म में सफलता की संभावनाएं भी उतनी अधिक होगी। कल्म खंडों में रोपण के एक सप्ताह में अंकुर तथा 45-90 दिनों में जड़ों का निर्माण हो जाता है।

(ड) शाखा कटिंग :

शाखा कटिंग, प्रवर्धन में आसानी के कारण प्रयोग होने वाली व्यवहारिक एवं प्रचलित पद्धतियों में से एक है। नाल की भांति, शाखायें भी तने का भाग है। कांटा बांस और लाठी बांस में मोटी भित्ति तथा मोटी शाखाओं वाली प्रजातियों आदर्श उदाहरण है। शाखाओं का चयन 1-2 वर्ष पुराने कल्मों से करना चाहिए। कटिंग की छटनी सीकेटर द्वारा पत्तियों, छोटी शाखाओं तथा शाखाओं के सिरे एवं शाखाओं की छटनी 2-6 गांठ वाले स्वस्थ कलिकाओं से करनी चाहिए। कल्मों का रोपण बेड़ में 2-3 से.मी. की दूरी पर तथा आधार को 7 - 10 से.मी. गहराई पर करना चाहिए। अंकुरण सामान्यत: 7 से 10 दिनों पश्चात् दिखाई देता है परन्तु जड़ो के प्रेरण की अवधि 14 से 20 दिन तथा जड़ों का भलीभांति विकास 30 से 60 दिनों में दिखाई देता है। कलम के आधार से नवीन कलम का विकास 30 से 60 दिन की समयावधि में होता हैं। कल्म शाखा कटिंग का चुनाव तीन स्थितियों पर आधारित हैं - (1) कम औद्योगिक महत्व वाला भाग (2) आवश्यक संख्याओं की उपलब्धता पर (3) इसके छोटे भाग तथा कम वजन होने के कारण नियंत्रित करने में सुगमता।

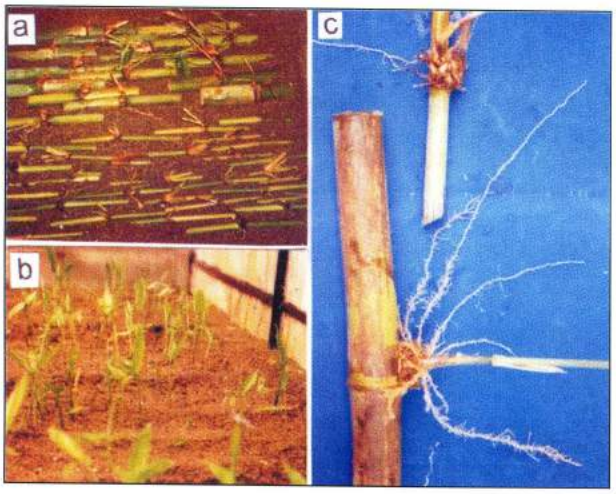

नाल और शाखा कटिंग द्वारा प्रवर्धन विधि

मौसम :

बांस के दीर्घ प्रवर्धन के तरीके तथा वृद्धि के प्रकार पर जलवायु का प्रभाव पड़ता है। बांस विभिन्न जलवायु में वृद्धि के तरीकों में भिन्नता दिखाता है जो प्रवर्धन की प्रक्रिया को प्रभावित करती है। सामान्यत: पर्णपाती वार्षिक सुषुप्त अवस्था में चले जाते हैं और शीतकाल में पत्तियां गिरा देते हैं। ग्रीष्म ऋतु आते ही पुन: वृद्धि के साथ नई कलिकाओं/शाखाओं आदि का विकास होता है। तेजी से वृद्धि वर्षा ऋतु के दौरान होती है। वृद्धि के साथ ही संचित भोजन का उपापचय और नियंत्रित अणुओं का संश्लेषण जैसे वृद्धि हार्मोन जो कि नए अंगों जैसे जड़, तनों आदि का निर्माण करते हैं। इस कारण से ही फरवरी से मई महीने में अपस्थानिक जड़ों की उत्पति और त्वरित वृद्धि होती है जो कि दीर्घ प्रवर्धन के लिए आवश्यक है। विभिन्न अध्ययन इस तथ्य को सत्यापित करते हैं।

मातृ बांस की परिपक्वता एंव संरचना :

कायिक प्रवर्धन के द्वारा मातृ परिपक्व बांस का वांछनीय गुण यथासम्भव बना रहता है। बांस में कायिक प्रवर्धन के लिए सुगमता का क्रम-राईजोम → नाल (राईजोम) → कल्म शाखा इस प्रकार देखा गया है। इसी प्रकार पतली भिति वाला बांस दीर्घ प्रवर्धन के उत्कृष्ट लेकिन मोटी भित्ति का ठोस बांस (कांटा बांस, लाठी बांस) दीर्घ-प्रवर्धन के लिए अनुपयुक्त पाया गया।

वृद्धि कारक :

प्रवर्धन में सफलता के लिए पादप हार्मोन तथा उनके सहयोगी उत्प्रेरक का उपयोग आवश्यक है। ऑक्सिन की कम सांद्रता का उपयोग जड़ गठन की प्रक्रिया को नियंत्रित करता है। कायिक प्रवर्धन के लिए सामान्यत: प्ररोह पर जड़ों के प्रेरण के लिए ऑक्सिन जैसे IAA, IBA, NAA तथा इनके सहयोगी जैसे थाइमिन, बोरिक एसिड इत्यादि का प्रयोग करते हैं।

प्रवर्धन वातावरण :

कायिक प्रवर्धन के लिए उचित वातावरणीय अवस्था जैसे सापेक्ष आर्द्रता 70-80% तथा 30-35 °C तापमान का होना आवश्यक है। इन अवस्थाओं को स्वनियंत्रित धुंध कक्ष में बनाए रखा जा सकता है। साथ ही वृद्धि के लिए के लिए

रोग जनक व सूक्ष्म जीव मुक्त वातावरण आवश्यक है। अत: आवश्यकतानुसार, धुंध कक्ष की रेत को सुखायें तथा 50% फारमल्डीहाईड (HCHO) से धूमिल करें। अन्य विकल्पों जैसे कम लागत में बने पॉली-टनल और पौली-ग्लोब्यूल है, जिनको आसानी से एक स्थान से दूसरे स्थान पर लाया जा सकता है।

जड़ित अंकुरों का कठोरीकरण :

रेत:मिट्टी:FYM (1:1:1) में उपयुक्त कवक प्रतिरोधी सांद्रता से बनी पौली बैग में, अंकुरो को सावधानीपूर्वक प्ररोपित बेड़ से हटाकर स्थानांतरित किया जाना चाहिए। जड़ित अंकुरों को उनकी उत्तरजीविता के लिए कठोरता आवश्यक है। 30-50% प्रकाश की तीव्रता एवं छाया, जड़ित अंकुरों के लिए आवश्यक है। स्प्रिंकल प्रणाली के माध्यम से अंतराल में सिंचाई प्रारम्भिक कठोरता के लिए लाभप्रद है। 10-15 दिनों के बाद सिंचाई धीरे-धीरे कम की जा सकती है। अधिक सिंचाई से बचना चाहिए। नई प्ररोह 20-50 दिनों में स्फुटित हो जाती है जो कि प्रजातियों पर निर्भर करती है। एक माह पश्चात पौधों को खुले वातावरण में स्थानांतरित किया जा सकता है।

बांस पौधों का रोपण :

बांस का रोपण, घरों के आस पास, खेतों की मेड़ों एवं खेतों में सघन रूप से किया जा सकता है। यद्यपि रोपण में बांस से बांस की दूरी उपलब्ध स्थान, उपयोग एवं लगाई जाने वाली प्रजाति पर निर्भर करती है, फिर भी सधन रोपण हेतु कतार से कतार एवं गड्ढे की दूरी 6 मी. X 6 मी. या 5 मी. X 5 मी. होनी चाहिए। मार्च महीने में, 60 से.मी. X 60 से.मी. आकार के गड्ढे तैयार कर लें। यदि सिंचाई की सुविधा हो तो बरसात शुरू होने से लगभग एक माह पूर्व रोपण करें अन्यथा रोपण बरसात शुरू होने पर ही करें। रोपण के पूर्व सूखी हुई मिट्टी में गोबर खाद तथा दीमक नाशक दवा (डसबान 20-25 ग्राम प्रति गड्ढा) मिलाकरण मिश्रण तैयार करें तथा बांस के पौधे को लगाकर उसके चारो और मिश्रित मिट्टी अच्छी तरह भर दें। यदि बांस पौधे पॉली बैग में तैयार की गयी हो तो लगाने से पहले पॉली बैग को ब्लेड की सहायता से हटा ले तथा पौधा को पॉली बैग की मिट्टी सहित गड्ढे में लगाकर सिंचाई करें। रोपण के प्रथम वर्ष में कम से कम तीन बार तथा दूसरे वर्ष में दो बार निराई गुड़ाई करें तथा आवश्यतानुसार सिंचाई करें। मृत पौधों के स्थान पर नए पौधों का रोपण, आगामी वर्ष मानसून के आगमन से पूर्व उपयोगी होता है।

चयन के द्वारा बांस सुधार :

पुष्पण तथा बीज की अवस्था को प्राप्त करने के लिए लगभग 40-110 वर्ष का समय लगता है। बांस का विशिष्ट पुष्प व्यवहार और बीजकाल तथा आनुवांशिक सुधार की पारम्परिक विधियों को कठिन बना देती है। गुणवत्ता वाले बांस संकुल का चयन निम्न लक्षणों के आधार पर होता है जैसे - त्वरित वृद्धि, कल्म उत्पादन क्षमता (कल्म की संख्या, परिपक्व एवं नवोदभिद, कल्म की संख्या), कल्म की मोटाई, भित्ति का व्यास, गांठों के मध्य दूरी, संकुल की ऊँचाई, आयु एवं परिधि, रोगों तथा कीटों के प्रति प्रतिरोधक क्षमता आदि। रेशों की लम्बाई भी बांस प्रजातियों के चयन में विशेष बिन्दु है जिसका पल्प तथा कागज उद्योग में कच्चे माल के रूप में इस्तेमाल होता है। आरम्भिक चयनित बखार का चयन परिपक्व जंगली जनसंख्या और वृक्षारोपित क्षेत्रों में भी कर सकते हैं।

मियाँ ! मैं शेर हूँ, शेरों की गुर्राहट नहीं जाती,
मैं लहजा नर्म भी कर लूँ तो झुँझलाहट नहीं जाती ।
किसी दिन बेखयाली में कहीं सच बोल बैठा था,
मैं कोशिश कर चुका हूँ मुँह की कड़वाहट नहीं जाती ।।

- मुनव्वर राना

प्रदूषण नियन्त्रण के लिए पेड़ों का महत्व

डॉ. अरून्धती बरूवा
वर्षा वन अनुसन्धान संस्थान, जोरहाट

मनुष्य जीवन के आस-पास प्रकृति ने अनेक रुपों में अपना जाल बिछा रखा है, उन सबके स्थूल-सूक्ष्म रुप को पर्यावरण कहा जाता है। अपने मूल रुप और स्वभाव से प्रकृति अत्यंत निर्मल, स्वच्छ एवं पवित्र मानी गई है। जब तक वह वैसी बनी रहती है, पर्यावरण भी स्वच्छ एवं प्राणी जगत के लिए सुरक्षित बना रहता है।

जैसे-जैसे आधुनिक सभ्यता का विकास होता गया, आदमी की इच्छाएं और लोभ-लालच भी विस्तार पाते गये। इसका परिणाम पर्यावरण को झेलना पड़ा है और प्रकृति का संतुलन बिगड़ गया है।

प्राचीनकाल में पर्यावरण को सुरक्षित रखने के लिए अनेक विशाल वन संरक्षित किए जाते थे। यदि कहीं से एक पेड़ अथवा पौधा काटा जाता था तो उसके स्थान पर नया उगाया जाता था। इस प्रकार वन सुरक्षित रहते थे और उगने वाली वनस्पतियां जड़ी-बूटियां, औषधीय पौधें, पशु-पक्षी, कीड़े-मकोड़ और उनकी जाति-प्रजातियां आदि सभी प्रकार के वन्य संपदा सुरक्षित रहा करते थे। उनकी सुरक्षा के कारण पर्यावरण की रक्षा तो होती ही थी, उसका आवश्यक संतुलन भी बना रहता था।

नगर महानगरों में कल-कारखाने, उनसे निकलने वाला धुआँ, गैसों, कचरा, विषैला पानी, तरह तरह के वाहन से निकलते ध्वनियां, सफाई की कमी आदि पर्यावरण प्रदूषण के मुख्य कारण है। पर्यावरण को इन प्रदूषणों से एकमात्र पेड़-पौधें ही बचा सकते है।

प्रदूषण कई प्रकार के होते हैं। प्रमुख प्रदूषण हैं - वायु प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण और जल प्रदूषण।

महानीम (*Azadirahata indica*) का पेड़ औषधीय गुण से भरा प्रदूषण नियंत्रक है। यह वायु प्रदूषण रोकने के साथ-साथ ध्वनि प्रदूषण भी रोक सकते है। औषधीय गुण से भरा नीम के पत्ते जीवाणु, कीटाणु एवं कीड़ा-मकोड़ा भी नियंत्रित करके धरती की रक्षा करती है।

वाशिंगटन में नेवास्का विश्वविद्यालय के वैज्ञानिकों ने एक अनुसंधान पत्र में प्रकाशित किया था -"हरी पत्तियों से 10-15 डेसिबेल (Decibel) तक ध्वनि नियंत्रित होते है"।

तुलसी (*Ocimum sanctum*) पर्यावरण संतुलित रखने में अहम भूमिका निभाती है। इस प्रकार के पौधे वायुमंडल स्वच्छ रखते हुए शुद्ध हवा हमें देते है।

बेल (*Aegel marmelos*) औषधीय गुण संपन्न होते है और पर्यावरण को संतुलित करने में मदद करते है। इस पेड़ में वायु प्रदूषण रोकने की क्षमता होती है। प्रदूषण नियंत्रण के साथ-साथ इस पेड़ से अनेक बीमारी का इलाज भी होता है।

ध्वनि प्रदूषण रोकने के लिए इमली (*Tamarindus indica*) का महत्व अधिक है। इमली के पत्ते 8 - 10 डेसिबेल तक ध्वनि नियंत्रित कर सकते है। इस पेड़ का साथ वायु प्रदूषण से मुक्त वातावरण तैयार करने में सहायक है। कल-कारखानों का धुआँ, मोटर वाहनों का काला धुआँ, ध्वनि प्रदूषण आदि नियंत्रित करके यह पेड़ वातावरण को सुरक्षित रखता है।

शाल (*Shorea robusta*), पीपल (*Ficus religiosa*) ऐसे पौधे हैं जो वायु एवं ध्वनि नियंत्रित करके संतुलित वातावरण तैयार करने में मदद करते हैं। इनके पत्ते में रेजिन (Resin) मिलते हैं, जो कीटाणु-जीवाणु नियंत्रित करके मानव जाति के लिए संतुलित वातावरण देते हैं।

पर्यावरण संतुलित करने के लिए अनेक पेड़ जैसे आँवला (Amla) एकेसिया (Acacia), कंचन (Kanchan), आम (Mango), जवा (China rose), करच (Karoch) आदि अनेक वनस्पतियां वायुप्रदूषण नियंत्रण के लिए विशेष महत्वपूर्ण है।

तरह-तरह के पेड़-पौधों, वनौषधियों, जीव-जंतुओं आदि से मिलकर हमारे पर्यावरण की रचना होती है। कल-कारखाना, पथ, रेलपथ आदि निर्माण करते समय

अनेक पेड़ काटे जाते हैं। विभिन्न प्रकार के प्रदूषणों से बचने के लिए हमें चाहिए कि अधिकाधिक वृक्ष लगाये जाएं, हरियाली की मात्रा अधिक हो। पर्यावरण को बचाने के लिए सड़कों के किनारे वृक्षारोपण करना चाहिए, कारखानों को आबादी से दूर रखना चाहिए और उनसे निकले प्रदूषित कचरे को नष्ट करने के उपाय सोचने चाहिए।

इस प्रकार के रोक-थाम के लिए वृक्षारोपण अत्यंत आवश्यक है, इसके लिए सभी मानवजाति को जागरुक होना चाहिए। यह प्रसन्नता की बात है कि अब वैज्ञानिकों, संयुक्त राष्ट्र संघ और अनेक देशों के सरकारी संगठन का ध्यान इस ओर जाने लगा है। रक्षा के उपाय भी कुछ-कुछ निकाले जाने लगे है।

अत: आशा है कि हालात और बिगड़ने से पहले ही उन पर काबू पा लिया जायेगा तो भविष्य की पीढ़ी के लिए हम एक सुरक्षित पर्यावरण छोड़ सकेंगे।

तो हम अक्सर चुप रहते हैं

नींव के पत्थर चुप रहते हैं
हम तो अक्सर चुप रहते हैं।

खिड़की दरवाजे दीवारें
देखें खिंची हुई तलवारें,
डोला करती हैं छायाएँ
घर में घर चुप रहते हैं।

अबाबील सी हर सच्चाई
दिखकर छुप जाती ऊँचाई,
खुद हैरत में हैं तकरीरें
बाहर भीतर चुप रहते हैं।

रेतघड़ी सुनसान सजाए
सिर्फ रात का समय बजाए,
खाते हैं धोखे पर धोखा
आँसू पीकर चुप रहते हैं।

सड़क पहाड़ों की ज्यों टूटे
सपने पड़ जाते हैं झूठे,
ये कैसा मौसम आया है
मस्त कलंदर चुप रहते हैं।

पानी का खारापन चखते
साहिल मुँह पर ऊँगली रखते,
लहरों की सीना जोरी पर
नदी समंदर चुप रहते हैं।

पर्वत सागर नदियों झीलों
चलते जाते मीलों मीलों,
सबसे जीते खुद से हारे
कई समंदर चुप रहते हैं।

जलती बुझती हैं कंदीलें
चुभती सन्नाटे की कीलें,
मन कुछ कहता नहीं कि मन में
उठे बवंडर चुप रहते हैं।

- यश मालवीय

जलवायु परिवर्तन: कृषि और हमारे वन

श्री शैलेश पाण्डेय, श्री आर. राजाऋषि एवं श्री राजेश कुमार
वर्षा वन अनुसन्धान संस्थान, जोरहाट

पृथ्वी के वायुमंडल की गैसीय संरचना एक अहम् बदलाव के दौर से गुजर रही है। ग्रीन हाऊस गैसों के काफी हद तक बढ़े उत्सर्जन, बड़े पैमाने पर वनों की कटाई, भूमि उपयोग और भूमि प्रबंधन प्रथाओं में आई तेजी से परिवर्तन जैसी घटनाओं ने समस्त विश्व का ध्यान जलवायु परिवर्तन की ओर आकर्षित किया है। जलवायु परिवर्तन का सबसे ज्यादा प्रभाव कृषि क्षेत्र पर पड़ रहा है। भारत के संदर्भ में यह इसलिए भी ज्यादा महत्वपूर्ण है क्योंकि भारतीय अर्थव्यवस्था की आधारशिला कृषि है। शोधकर्ताओं के अनुसार, वर्ष 2070 तक खरीफ (जुलाई से अक्टूबर) के मौसम के औसत तापमान में 1-7°C की वृद्धि, रबी (नवम्बर से मार्च) के मौसम 3-2°C की वृद्धि अनुमानित है। अध्ययन में यह भी पाया गया है कि तापमान में 2°C बढ़ोत्तरी से चावल और गेंहूँ की संभावित अन्न पैदावार में भारी कमी आ सकती है। जलवायु परिवर्तन से मौसम के चरम परिवर्तन की घटनाओं में वृद्धि जैसे बाढ़, सूखा, चक्रवात का प्रतिकूल प्रभाव कृषि उत्पादकता को प्रभावित करेगा। फलों, सब्जियों, चाय, कॉफी, सुगन्धित और औषधीय पौधों की उत्पादकता ही प्रभावित नहीं होगी वरन् उनकी गुणवत्ता पर भी नकारात्मक प्रभाव पड़ने की संभावना है। निकट भविष्य में फसलों के विभिन्न रोगों के कारण भारी नुकसान होने की संभावनाएं भी बढ़ गयी हैं। तापमान में वृद्धि के साथ, सिंचाई के पानी के लिए मांग में वृद्धि होगी। इसका यह परिणाम हो सकता है कि कुछ स्थानों पर भूमिगत जल स्तर में कमी आ जाए।

वर्ष 2009 में वर्षा में 23 से 24 प्रतिशत तक आई कमी से देश के बहुत से भागों में खड़ी फसलें सूख गई और खाद्यान्नों का उत्पादन में कमी के साथ-साथ उनकी कीमतों में भी भारी वृद्धि हुई। एक अनुमान के अनुसार सूखे की वजह से 20000 करोड़ रूपये के खाद्यान्नों का नुकसान हुआ है।

वनों का कार्बन सिंक के रूप में प्रमुख योगदान द्वारा वैश्विक जलवायु परिवर्तन को कम करने की क्षमता है। जंगलों का पारिस्थितिक कार्यों के साथ-साथ मनुष्य की आर्थिक, सौंदर्य और आध्यात्मिक स्वास्थ्य के लिए महत्वपूर्ण योगदान रहा है। जलवायु ने हमेशा पृथ्वी के जंगलों को आकार दिया है लेकिन मानव गतिविधियों ने पिछले 200 - 300 वर्षों में दुनिया की जलवायु में अभूतपूर्व परिवर्तन करने के लिए प्रमुख भूमिका निभाई है। वनस्पति मॉडलिंग अध्ययनों की एक श्रृंखला के आधार पर आईपीसीसी 2007, इस सदी के अंत तक उष्णकटिबंधीय, उत्तरी और पहाड़ी क्षेत्रों में विशेष रूप से वन गिरावट को दर्शाती है। जलवायु परिवर्तन वनों की प्रमुख बाधाओं, जैसे रोगजनकों, कीड़े और आग को प्रभावित कर, विश्व के वन वृक्ष प्रजातियों के भौगोलिक वितरण, विकास एवं स्थिरता को तेजी से प्रभावित करेंगे। विभिन्न शोधों से ऐसा पूर्वानुमान लगाया गया है की जलवायु परिवर्तन से सूखे और अन्य अजैविक तनाव के तहत, वृक्षों की बीमारियों में तीव्रता और अधिकता आएगी। आने वाले वर्षों में, वृक्षों की संचयी मृत्यु दर एवं वृक्ष मृत्यु, जो की संभवत: पूरी तरह जलवायु चालकों पर निर्भर है, वन विशेषज्ञों और नीति निर्माताओं के लिए एक गंभीर समस्या का सामना है।

जंगलों पर जलवायु परिवर्तन के प्रभावों के गंभीर निहितार्थ उन लोगों पर है, जो अपनी आजीविका के लिए वन संसाधनों पर निर्भर है। भारत में लगभग 173,000 गाँव वन गाँवों के रूप में वर्गीकृत है, जहाँ वन संसाधनों पर समुदाय निर्भरशील है। भारत में वन पहले से ही निष्कर्षण, कीट प्रकोप, पशुधन के खाद्य, जंगल की आग और अन्य मानवजनित दबावों को झेल रहे हैं। जलवायु परिवर्तन एक अतिरिक्त समस्या हो जाएगी।

भारत के मध्य भाग में वन, विशेष रूप से उत्तरी-पश्चिमी भाग, पंजाब, जम्मू और कश्मीर तथा हिमाचल प्रदेश के साथ साथ हिमालय जैव विविधता हॉटस्पॉट का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है जो कि उत्तर-पश्चिमी भाग के साथ फैला है, के अत्यधिक संवेदनशील होने का अनुमान है। भारत के उत्तर-पूर्वी भाग में अपेक्षाकृत कम क्षेत्र अत्यधिक संवेदनशीलता

की श्रेणी में आते है क्योंकि गरम एवं आर्द्र जलवायु यहाँ की मौजूदा वनस्पति प्रकारों के लिए अनुकूल है। पश्चिमी घाट के उत्तरी भागों में खुले जंगल जलवायु परिवर्तन के लिए संवेदनशील बताए गए हैं। दक्षिणी-पश्चिमी घाट में वन कम खंडित, और अधिक विविध होने से स्थिर रहने की संभावना हैं।

वन क्षेत्रों में अनुमानित जलवायु परिवर्तन के अवांछनीय प्रभावों को कम से कम करने के लिए प्रबंधित किया जा सकता है। इस महत्वपूर्ण कार्य को सक्रिय करने के लिए वन प्रबंधन के दृष्टिकोण में एक 'नई' सोच' की आवश्यकता होगी। पूर्वोत्तर भारत, दक्षिणी-पश्चिमी घाट और पूर्वी भारत के वनों पर जलवायु परिवर्तन का कम असर देखने को मिलेगा, जिसका मूल भूत कारण उनकी उच्च जैव विविधता, कम विखंडन, उच्च वृक्ष घनत्व के साथ साथ वनस्पति परिवर्तन की दर में कमी है। जिसके परिणामस्वरूप इन क्षेत्रों को खासकर 'कम वनों की कटाई' और वन संरक्षण परियोजनाओं जैसे कि आर-ई-डी-डी-[+] के लिए उपयुक्त बनाता है। उदाहरण के लिए, उत्तर पूर्वी भारत में 80% से अधिक भूमि क्षेत्र, जो कि वनों के रूप में वर्गीत क्षेत्र है, वर्तमान में वनों की कटाई के गंभीर दबाव के तहत है। मुख्य रूप से अतिक्रमण और झूम खेती (स्थानांतरी जुताई) के कारण यह क्षेत्र भारत में सबसे अधिक वनों की कटाई दर का गवाह है। इस क्षेत्र में पारिस्थितिकी तंत्र बदलते जलवायु परिवर्तन के तहत मजबूत दिखाई देता है। वनों की कटाई के परिणामस्वरूप वनस्पतियों के नुकसान का मुकाबला करने के लिए यह क्षेत्र आर-ई-डी-डी-[+] परियोजनाएं बनाने के लिए वांछनीय है। पश्चिमी और मध्य भारत के वनों में, हार्डी प्रजातियाँ जो बढ़ते तापमान और सूखे के लिए प्रतिरोधक्षमतापूर्ण है का रोपण, मिश्रित प्रजाति रोपण, प्रभावी कीट और आग प्रबंधन रणनीति तैयार करने की आवश्यकताएँ हैं।

भारत में प्रतिवर्ष 1.32 मिलियन हेक्टेयर जमीन पर वनरोपण कार्यक्रम प्रगति में है, और अधिक क्षेत्र 'ग्रीन इंडिया मिशन' और 'प्रतिपूरक वनीकरण कोष प्रबंधन और नियोजन प्राधिकरण' जैसे कार्यक्रमों के अंतर्गत वनरोपण हो जाने की संभावना है। बदलती जलवायु के तहत वनों के प्रबंधन की चार श्रेणियाँ बनाई जा सकती हैं: निगरानी, भविष्यवाणी, योजना और रणनीति। वैश्विक जलवायु परिवर्तन के चेहरे में सफलता का सबसे अच्छा संभव प्रयास हो तो, प्रत्येक चार प्रबंधन श्रेणियाँ में आवश्यकता होगी; तकनीक और उपकरणों का विकास; अनुसंधान की जरूरत और शोध के परिणामों का एकीकरण (integration); जोखिम विश्लेषण की जरूरत का उपयोग कर अनुसंधान के प्राथमिकीकरण और वन नीति में स्पष्ट और ठोस कड़ियों का विकास।

सबके कहने से इरादा नहीं बदला जाता,
हर सहेली से दुपट्टा नहीं बदला जाता।
उम्र एक तल्ख हकीकत है 'मुनव्वर' फिर भी
जितना तुम बदले हो उतना नहीं बदला जाता।

- मुनव्वर राना

पूर्वोत्तर भारत में झूम खेती और कार्बन डाइऑक्साइड उत्सर्जन

डॉ. कृष्णा गिरी, डॉ. शैलेश पांडेय, डॉ. गौरव मिश्रा और श्री शंकर शर्मा
वर्षा वन अनुसन्धान संस्थान, जोरहाट

स्थानांतरण (झूम) खेती :

स्थानांतरण (झूम) खेती पूर्वोत्तर भारत के पहाड़ी क्षेत्र में प्रमुख भूमि उपयोग की व्यवस्था है, जिसे उष्णकटिबंधीय पहाड़ी क्षेत्रों में कृषि के लिए एक पारंपरिक तरीके के रूप में अपनाया जाता है। इस प्रक्रिया को स्लैश एवं बर्न, स्वीडेन कृषि आदि नामों से भी जाना जाता है। पूर्वोत्तर भारत में यह झूम खेती नाम से जाना जाता है और सभी सात राज्यों, अरुणाचल प्रदेश, असम, मणिपुर, मेघालय, मिजोरम, नगालैंड एवं त्रिपुरा में प्रचलित है। झूम खेती में वनों को काटकर उसी स्थान पर जला दिया जाता है वहाँ पर जमीन को

मिजोरम में झूम खेती के लिए तैयार की गई भूमि

कृषि योग्य बनाकर विभिन्न प्रकार के फसलें उगाई जाती है। लगभग दो-तीन वर्षों तक खेती करने के बाद भूमि की उर्वरक क्षमता कम हो जाती है, जिस कारण उस भूमि को खाली छोड़कर आस-पास के वनों को काटकर खेती योग्य बनाया जाता है। प्राचीन समय से झूम खेती करने वाली जनजातियां परती भूमि को लगभग 15-20 वर्षों के लिए खाली छोड़ते आ रहे थें जिससे इस भूमि की उर्वरा शक्ति पुन: बढ़ जाती थी। हाल के दशक में बढ़ती आबादी और घटती भूमि उपलब्धता के कारण यह झूम चक्र 15-20 वर्षों से घटकर लगभग 3-5 वर्ष हो गया है। इस कारण से मृदा की उर्वरता में लगातार कमी आ रही है तथा मृदा अपक्षरण में वृद्धि, फसल उत्पादकता में कमी परिलक्षित हो रही है। वर्षों से प्रचलित झूम खेती के वजह से पूर्वोत्तर भारत की जैवविविधता में भी लगातार गिरावट आ रही है।

झूम खेती से कार्बन डाइऑक्साइड उत्सर्जन :

झूम खेती के लिए जंगलों को काटने से वन कार्बन स्टॉक में कमी और वायुमंडल में कार्बन डाइऑक्साइड उत्सर्जन में लगातार वृद्धि हो रही है। झूम खेती का एक महत्वपूर्ण पहलू यह है कि वनों के कटाई और जलाने से कार्बन डाइऑक्साइड एवं अन्य ग्रीन हाउस गैसों का भारी मात्रा में उत्सर्जन हो रहा है।

कार्बन डाइऑक्साइड एक प्रमुख ग्रीन हाउस गैस है। औद्योगिकरण के पश्चात बढ़ते मानवजनित क्रियाकलापों के फलस्वरुप वर्तमान में इसकी मात्रा वायुमंडल में 400 पीपीएम तक पहुँच चुकी है। पूर्वोत्तर भारत के हिमालयी क्षेत्रों में की जाने वाली झूम खेती भी बढ़ते कार्बन डाइऑक्साइड उत्सर्जन के कारणों में से एक प्रमुख कारण है। बढ़ते उत्सर्जन के कारण वायुमंडल में कार्बन डाइऑक्साइड की मोटी परत बन चुकी है। यह परत पृथ्वी से बाह्य वायुमंडल में जाने वाली लंबे तरंगदैर्घ्य वाले अवरक्त विकिरणों को रोक देती है, जिसके परिणामस्वरुप पृथ्वी का तापमान लगातार बढ़ रहा है।

कार्बन डाइऑक्साइड एवं अन्य ग्रीन हाउस गैसों के इस प्रभाव को ग्रीन हाउस प्रभाव कहते है। नासा के वैज्ञानिकों द्वारा किए गये तापमान विश्लेषण के आंकड़ों के अनुसार पृथ्वी का औसत वैश्विक तापमान 1880 से अब तक लगभग 0-8°C बढ़ चुका है। ग्रीन हाउस गैसों के प्रभाव से इस प्रकार बढ़ते तापमान की घटना को ग्लोबल वार्मिंग या वैश्विक तपन कहा जाता है।

पृथ्वी के बढ़ते तापमान के कारण आज सम्पूर्ण विश्व जलवायु परिवर्तन जैसी भीषण समस्या से जूझ रहा है। लगातार होते जलवायु परिवर्तन से ध्रुवों तथा हिमालयों की बर्फ पिघल रही है और समुद्र के जलस्तर में वृद्धि हो रही है। विश्व के कुछ भाग अत्यधिक वर्षा से तो कुछ भाग सुखे की स्थिति से गुजर रहे है। जलवायु परिवर्तन से पर्यावरण के जैविक एवं अजैविक घटकों पर भी बहुत अधिक नकारात्मक प्रभाव पड़ा है।

पूर्वोत्तर भारत में की जाने वाली पारम्परिक झूम खेती को नियंत्रण करना वैज्ञानिकों के लिए एक कठिन चूनौती है, क्योंकि झूम खेती यहाँ के पहाड़ी क्षेत्रों में निवास करने वाले जनजातियों का एकमात्र आजीविका का साधन है। झूम खेती को नियंत्रित करने के लिए वैकल्पिक कृषि पद्धतियों, उत्तम एवं उत्पादक कृषि-वानिकी मॉडलों का विकास करना एवं इन जनजातियों तक पहुँचाना समय की मांग है। वन एवं जैवविविधता कार्बन पृथक्करण तथा कार्बन के संचयन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। अत: वायुमंडल में बढ़ते कार्बन की मात्रा को कम करने के लिए झूम खेती को नियंत्रित करना एवं जैवविविधता का संरक्षण करना अति आवश्यक है। जैवविविधता के संरक्षण से न केवल कार्बन संचयन को ही बढ़ाया जा सकता है बल्कि वायुमंडलीय कार्बन डाई आक्साइड गैस की मात्रा में सार्थक रुप से कमी लाई जा सकती है। यह प्रयास वैश्विक ताप वृद्धि एवं जलवायु परिवर्तन जैसे समस्याओं में कमी लाने में अवश्य ही सहायक हो सकता है।

भगवान के डाकिए

पक्षी और बादल,
ये भगवान के डाकिए हैं
जो एक महादेश से
दूसरे महादेश को जाते हैं।
हम तो समझ नहीं पाते हैं
मगर उनकी लाई चिट्ठियाँ
पेड़, पौधे, पानी और पहाड़
बाँचते हैं।

हम तो केवल यह आँकते हैं
कि एक देश की धरती
दूसरे देश को सुगंध भेजती है।
और वह सौरभ हवा में तैरते हुए
पक्षियों की पाँखों पर तिरता है।
और एक देश का भाप
दूसरे देश में पानी
बनकर गिरता है।

- राष्ट्रकवि रामधारी सिंह 'दिनकर'

घटते वन, बढ़ती आपदायें*

श्री दीपक सिंह सचान
डील, देहरादून

26 दिसम्बर 2004 की सुबह एक विलक्षण एवं दु:खद घटना जिसमे लगभग तीन लाख लोग काल कालवित हुये और अनगिनत अकथनीय मानवीय पीड़ा और अनेक अनुत्तरित प्रश्न पीछे छोड़ गए। भारतीय महासागर की इस सुनामी का तांडव कई दशकों तक महसूस किया जाएगा। इस दुर्घटना से एक बार फिर अंतर्राष्ट्रीय मंचो एवं संगठनों पर घटते वन एवं बढ़ती आपदाएं का मुद्दा वाद-विवाद का विषय बन गया और क्या निर्वनीकरण प्राकृतिक आपदाओं की तीव्रता बढ़ाने में सहायक सिद्ध हो रहे है? इसका परिमाणात्मक आकलन किया जाने लगा। घटते वन बढ़ती आपदाएं एक ही सिक्के के दो पहलू जैसे ही है, एक कारण है दूसरा प्रभाव। वनों में विकास की सम्भावनाएँ खोजते-खोजते हम आपदाओं की दहलीज तक पहुंच जाते हैं।

घटते वन: एक नज़र

संसार के देश जिस तीव्र गति से विकास - पथ पर दौड़ रहे हैं उससे उनकी बढ़ती हुई आवश्कताओं को पूर्ण करना एक चिंता का विषय बन गया है। कृषि योग्य भूमि की चाहत, शहरीकरण, औद्योगिकीकरण आदि कारक हमें वनोन्मूलन की ओर धकेलते हैं। विश्व के सम्पूर्ण स्थल भू-भाग का लगभग 31 प्रतिशत वनों से आच्छादित है। संयुक्त राष्ट्र खाद्य एवं कृषि संगठन के नीचे सारिणी में दिये गये आँकड़ों के

वन - भूभाग (1990 - 2010) मिलियन हेक्टेयर में

भू-भाग	1990	2000	2010
अफ्रीका	749	709	674
एशिया	576	570	593
यूरोप	989	998	1005
उ. एवं. म. अमेरिका	708	705	705
ओसेनिया	199	198	191
द. अमेरिका	946	904	864
कुल	**4168**	**4085**	**4033**

*प्रस्तुत निबन्ध ने नराकास के तत्वाधान में भा.वा.अ.शि.प., देहरादून द्वारा आयोजित अखिल जनपद स्तरीय निबन्ध प्रतियोगिता में प्रथम स्थान प्राप्त किया।

अनुसार 90 के दशक में वनोन्मूलन की दर सबसे अधिक थी। यद्यपि इस शताब्दी के पहले दशक में वनोन्मूलन की दर अपेक्षाकृत कम है फिर भी 5.2 मिलियन हेक्टेयर प्रति वर्ष की दर से वनों में कमी हो रही है।

वनोन्मूलन के मुख्य कारक :

(1) जनसंख्या एवं मवेशी संख्या में विस्फोट के कारण वनों का प्रचुर मात्रा में चारा, ईंधन के लिए अनियमित, अनियंत्रित संदोहन करना। ब्राजील, जो कि विश्व में सोवियत रूस के बाद वन सम्पदा में दूसरे स्थान पर है और विश्व की 13 प्रतिशत वनों का दावेदार है, में प्रति वर्ष 2.6 मिलियन हेक्टेयर वनों की कटाई खेती एवं पशु - फार्मों के निर्माण के लिए की जाती है।

(2) मानवीय महत्वाकांक्षी गतिविधियां जैसे बहुद्देशीय परियोजनायें, शहरीकरण, औद्योगिकीकरण, कृषि योग्य भूमि (झूमिंग कृषि) इत्यादि। औद्योगिकीकरण के लिए वनोन्मूलन का जीता जागता उदाहरण इन्डोनेशिया का पाम तेल उद्योग हैं। ग्रीन पीस के अनुसार इसकी वजह से प्रतिदिन 51 वर्ग कि.मी. वनों का सफाया हो रहा है।

(3) प्राकृतिक आपदाएं जैसे तूफान, दावानल, भूस्खलन आदि। 7 फरवरी 2009 आस्ट्रेलिया के लिए काला शनिवार था। इस दिन लगी भयंकर आग ने 4 लाख हेक्टेयर वनों को राख में तब्दील कर दिया था।

बढ़ती आपदाएं : एक नजर

आपदा प्राय: एक अनपेक्षित घटना होती है जो ऐसी ताकतों द्वारा घटित होती है जो मानव के नियंत्रण में नहीं हैं। यह थोड़े समय के लिए और बिना चेतवानी के घटित होती है जिसकी वजह से मानव जीवन के क्रिया-कलाप अवरूद्ध होते हैं एवं बड़े पैमाने पर जान-माल का नुकसान होता है। विश्व भर के लोग विभिन्न प्रकार की आपदाओं को अनुभव करते हैं और उनका सामना करते हुये सहन करते है।

प्राकृतिक आपदाओं का वर्गीकरण निम्नवत किया जा सकता है:

प्राकृतिक आपदाओ का वर्गीकरण :

जलमौसमीय (Hydrometrological)		भूभौतिकी (Geophysical)	
वायुमंडलीय	जलीय	भौमिक	जैविक
बर्फानी तूफान	बाढ़	भूकम्प	पौधे और जानवर उपनिवेशक के रूप में (टिड्डी)। कीट ग्रासन - फफूँद, बैक्टीरिया एवं विषाणु संक्रमण बर्ड फ्लू डेंगू आदि।
तड़ितझंझा	ज्वार	मृदा अपरदन	
टारनेडो	महासागरीय धाराये	भूस्खलन	
उष्ण कटिबन्धीय चक्रवात	सुनामी	अवतलन	
सूखा	तूफान महोर्मि	ज्वालामुखी	
पाला, शीत लहर, लू		हिमघाव	

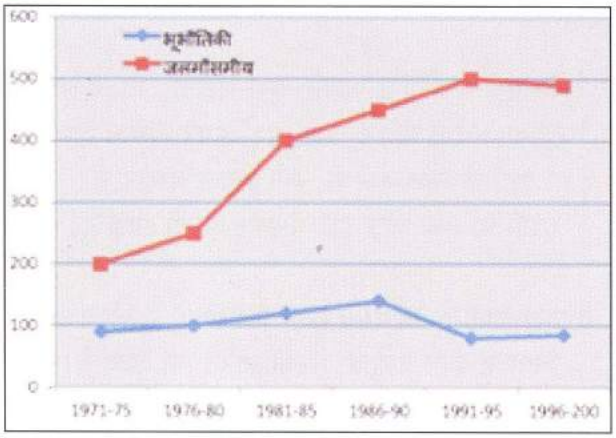

घटते वन, बढ़ती आपदाएं : पारस्परिक सम्बन्ध

ग्राफ में दिये गए आंकड़े दर्शाते हैं कि भूभौतिकी आपदाओं कि आवृत्ति लगभग कई दशकों से समान है जबकि जलमौसमीय आपदाओं की बारंबारता लगातार आरोहित हो रही है। विश्व आपदा रिपोर्ट के अनुसार, प्राकृतिक आपदाओं में पिछले दशक से 68 प्रतिशत बढ़ोत्तरी हुई है तथा 90 के दशक में मारे गए कुल लोगों में 90 प्रतिशत लोग जलमौसमीय आपदाओं के शिकार थे। जलमौसमीय आपदाओं का प्रमुख कारण जलवायु परिवर्तन है और जलवायु परिवर्तन का सीधा सम्बन्ध निर्वनीकरण से है।

सामान्यत: आपदा और विशेष रूप से प्राकृतिक आपदा से मानव हमेशा ही भयभीत रहा है। लम्बे समय तक भौगोलिक साहित्य में आपदाओं को प्राकृतिक बलो का परिणाम माना जाता रहा और मानव उसका अबोध एवं असहाय शिकार। परन्तु प्राकृतिक बल ही आपदाओं के एक मात्र कारक नहीं है। आपदाओं की उत्पत्ति का सम्बन्ध मानव क्रिया-कलापों से भी है। कुछ मानव गतिविधियां तो प्रत्यक्ष रूप से इन आपदाओं के लिए उत्तरदायी हैं जैसे भोपाल गैस त्रासदी, चेरिनबल नाभिकीय आपदा। कुछ मानव गतिविधियाँ परोक्ष रूप से आपदाओं को बढ़ावा देती हैं। वनोन्मूलन या निर्वनीकरण, भंगुर जमीन पर निर्माण, अवैज्ञानिक भूमि उपयोग इसके कुछ दृष्टांत हैं।

वन एवं आपदा सुभेद्यता :

शोध एवं अनुभव से पता चलता है कि वन पारितंत्र आपदाओं की मानव जाति के प्रति सुभेद्यता कम करने में अहम भूमिका अदा करते है। सम्पूर्ण विश्व से निम्नलिखित कुछ उदाहरण वनों एवं आपदा के पारस्परिक सम्बन्धों को दर्शाते हैं और यह स्पष्ट करते हैं कि वनों में कमी किस तरह से आपदाओं की आवृत्ति एवं आकार को तीव्रगामी कर रही है :

- सन् 2004, भारतीय महासागर की सुनामी के अलावा निर्वनीकरण जनित आपदाओं का गवाह रहा है। हैती में जून में आई बाढ़ और सितम्बर में आया तूफान जेनी जिस ने 5000 लोगों को अपना शिकार बनाया। वैज्ञानिको ने इसके लिए उच्च दर से होने वाली वनों की कटाई को उत्तरदायी ठहराया।
- फिलीपींस में नवम्बर 2004 में आई बाढ़ और भूस्खलन में लगभग 2000 लोग मारे गए। तत्कालीन राष्ट्रपति गिलोरिया ने इसका दोषारोपण वनों की हो रही अंधाधुंध कटाई को किया जिसने देश का 6 प्रतिशत वन क्षेत्रफल कम कर दिया।
- 1998 में मध्य अमेरिका में तूफान (हरीकेन) *मिच* ने 18000 लोगों को अपना शिकार बनाया। इसके बाद होंडुरस, निकारागुआ और ग्वाटेमाला में अध्ययन से पता

चला की खेती के लिए जंगलों का सफाया इसका प्रमुख कारण है।

- 1999 में भारत के पूर्वी तट उड़ीसा ने आया चक्रवात, वनोन्मूलन जानित आपदा का एक और उदाहरण है। इस चक्रवात से सबसे अधिक प्रभावित उड़ीसा का एरास्मा खंड हुआ। अध्ययन से पता चला की बांग्लादेश से भारी मात्रा में आए प्रवासी लोगों ने अपनी जरूरतों के लिए अनियंत्रित रूप से मैनग्रोव वनों और रेत के टीलों को नष्ट किया जो कि पारम्परिक रूप से तेज हवाओं, आंधियों और ज्वारीय धाराओं के सुरक्षा कवच हैं।

उपर्युक्त उदाहरणों के अतिरिक्त अन्य अनेक वनोन्मूलन जनित आपदाओं की विभीषिका को व्यक्त करते हैं। स्पष्ट है की निर्वनीकरण प्राकृतिक आपदाएँ को बढ़ाने में बहुत हद तक सहायक सिद्ध होते है। वनों का नष्ट होना मतलब हमारे संसाधनों का नष्ट होना, जैविक विविधता नष्ट होना, जलवायु परिवर्तन में अनियमितता, मृदा अपरदन इत्यादि है।

आपदाओं विशेषकर प्राकृतिक आपदाओं पर नियंत्रण मुश्किल है। इसका बेहतर उपाय है इसके निवारण की तैयारी करना है। भारत जैसे देश में जहां दो तिहाई क्षेत्रफल और जनसंख्या आपदा सुभेद्य है, इन उपायों का विशेष महत्व है। आपदा प्रबन्धन अधिनियम 2005 के तहत आपदा प्रबन्धन संस्थानों की स्थापना इस दिशा में भारत सरकार द्वारा उठाए गए सकारात्मक कदम के उदाहरण है। विश्व स्तर पर आपदाओं के सामाजिक, आर्थिक एवं पर्यावरणीय दुष्प्रभाव को कम करने के लिए संयुक्त राष्ट्र द्वारा इंटरनेशनल स्ट्रेटेजी फॉर डिजास्टर रिडक्शन (ISDR) की स्थापना की गई है। इसके अतिरिक्त क्षेत्रीय एवं व्यक्तिगत स्तर पर जागरूकता बढ़ाने की जरूरत है। कागज का कम से कम उपयोग, पुनर्चक्रण, ईधन के अन्य विकल्प खोजना, परिवार नियोजन को प्रोत्साहित करके जनसंख्या वृद्धि पर अंकुश लगाना, वृक्षारोपण आदि उपायो द्वारा वनों को संरक्षित किया जा सकता है और आपदाओं के कोप-भाजन से बचा जा सकता है। इससे पहले की भविष्य में आने वाली आपदा हमे वनों के महत्व का पाठ पढ़ाये, हमे मानव सुरक्षा नीतियों में वन-संरक्षण और वृक्षारोपण की केन्द्रीय भूमिका देनी होगी। अन्त में -

"सुनो-सुनो क्या नानी कहती, हवा सुहानी अब ना बहती।
चिड़िया अब न गीत सुनाती, घर आंगन अब न आती।
पेड़ों के कट जाने से, रूठे बादल बरसने से।
धरती मां अब बांझ हुई, घनघोर अंधेरी सांझ हुई।

पशु-पक्षी का रैन बसेरा छूटा, मीठा था जो वो ख्वाब टूटा।
विषाक्त होती वायु है, घटती मानव की आयु है।
पेड़ों से मानव तुम प्यार करो, मित्रों सा व्यवहार करो।
पेड़ लगाकर हे मानव! तुम खुद अपना उपकार करो।"

गिरधर की कुंडलियां

पानी बाढ़ो नाव में, घर में बाढ़ो दाम
दोऊ हाथ उलीचिए, यही सयानो काम
यही सयानो काम, राम को सुमिरन कीजै
परस्वारथ के काज, शीश आगे धर दीजै
कह गिरिधर कविराय, बड़ेन की याही बानी
चलिए चाल सुचाल, राखिए अपनो पानी।

बीती ताहि बिसारि दे, आगे की सुधि लेय
जो बनि आवै सहज में, ताही में चित देय
ताही में चित देय, बात जोई बनि आवै
दुर्जन हंसे न कोइ, चित में खता न पावै
कह गिरिधर कविराय, यहै करू मन परतीती
आगे को सुख समुझि, होई बीती सो बीती।

विविधा

माता-पिता

उसके ऐसा है नहीं अपनापन में आन,
पिता आप ही अवनि में है अपना उपमान।

मिले न खोजे भी कहीं खोजा सकल जहान,
माता सी ममतामयी पाता पिता समान।

जो न पालता पिता क्यों पलना सकता पाल,
माता के लालन बिना लाल न बनते लाल।

कौन बरसता खेह पर निशि दिन मेंह-सनेह,
बिना पिता पालन किये पलती किस की देह।

छाती से कढ़ता न क्यों तब बन पय की धार,
जब माता उर में उमग नहीं समाता प्यार।

सुत पाता है पूत पद पाप पुंज को भूँज,
माता पद-पंकज परस पिता कमल पग पूज।

वे जन लोचन के लिए सके न बन शशि दूज,
पूजन जोग न जो बने माता के पग पूज।

जो होते भू में नहीं पिता प्यार के भौन,
ललक बिठाता पूत को नयन पलक पर कौन।

जो होवे ममतामयी प्रीति पिता की मौन,
प्यारा क्या सुत को कहे तो दृग तारा कौन।

ललक ललक होता न जो पिता लालसा लीन,
बनता सुत बरजोर तो कोर कलेजे कीन।

– अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध'

रंगों के उपचारात्मक प्रभाव एवं चिकित्सीय महत्व

डॉ. वाई.सी. त्रिपाठी, डॉ. राकेश कुमार एवं सुश्री अनिता पाल
वन अनुसंधान संस्थान, देहरादून

रंग एवं मानव स्वास्थ्य :

रंगों से हमारा जीवन काफी गहराई से जुड़ा हुआ है। मानवीय चेतना, भावनाओं, संवेदनाओं, अनुभवों से अत्यंत गहराई से सम्बद्ध होने के कारण रंगों का स्वास्थ्य से भी गहरा संबंध है। वैज्ञानिक स्तर पर रंगों के प्रभाव से स्वास्थ्य लाभ पर लंबे समय से अनुसंधान हो रहे हैं। विदित है कि विभिन्न रंग दृश्य प्रकाश की अलग-अलग तरंगदैर्ध्य वाली विद्युत-चुम्बकीय ऊर्जाएँ हैं, जो मानव शरीर में ऊर्जा की मात्रा एवं संचार को प्रभवित करती हैं। इस प्रकार रंग मानव की ग्रहण शक्ति व अनुभूति को प्रभावित करते हैं। प्रत्येक रंग का एक सांकेतिक अर्थ होता है जिसे अवचेतन मस्तिष्क द्वारा ग्रहण किया जाता है। अनुसंधान के अनुसार, प्रकाश हमारे शरीर को आंखों के द्वारा बेधकर पीयूष ग्रंथि (पिट्यूटरी ग्लैंड) को उत्तेजित करता है, जिसके परिणामस्वरूप कुछ विशेष हारमोंस का स्राव होता है। यह शरीर द्वारा रंगों के प्रति होने वाली प्रतिक्रिया होती है। सूरज की किरणों का मानव शरीर पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है, जैसे धूप मानव शरीर के लिए पोषक होती है। अनुसंधानों द्वारा सिद्ध हो गया है कि सौर किरणों के पूरे स्पैक्ट्रम का शरीर पर अत्यंत लाभकारी प्रभाव होता है। इससे हमारे शरीर का एंडोक्राइन तंत्र सक्रिय होता है तथा इलेक्ट्रोमैग्नेटिक क्षेत्र का निर्माण भी होता है। प्राणियों का संपूर्ण शरीर रंगीन है। शरीर के समस्त अवयवों का रंग अलग-अलग है। शरीर की समस्त कोशिकाएँ भी रंगीन हैं। जब शरीर का कोई अंग बीमार होता है तो उसके रासायनिक द्रव्यों के साथ-साथ रंगों का भी असंतुलन हो जाता है। रंग चिकित्सा उन रंगों को संतुलित कर देती है जिससे रोग का निवारण हो जाता है। शरीर में जहाँ भी विजातीय द्रव्य एकत्रित होकर रोग उत्पन्न करता है, रंग चिकित्सा उसे दबाती नहीं अपितु शरीर के बाहर निकाल देती है।

रंग चिकित्सा-एक परिचय :

रंग चिकित्सा जिसे कलरथेरेपी या क्रोमाथेरेपी कहा जाता है, एक वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति है, जिसके अंतर्गत शरीर के प्रभावित अंगों या समस्या के कारणों को सम्बन्धित रंगों का अतिरिक्त एक्सपोजर करके दूर किया जाता है। उदाहरण के लिए, स्पैक्ट्रम का आखिरी रंग लाल उत्तेजित करता है, तो नीला रंग गहन शांति देता है। मानसिक रोगियों में लाल अथवा नारंगी रंग का प्रयोग कष्ट उत्पन्न करने वाला, लेकिन नीला रंग शांति देने वाला पाया गया है। रंग चिकित्सक रंगीन प्रकाश का प्रयोग कर शारीरिक, भावनात्मक, आध्यात्मिक या मानसिक स्तर पर व्यक्ति के शरीर में उत्पन्न ऊर्जा असंतुलन को ठीक करने का दावा करते हैं। रंग चिकित्सा, उपचार की एक अन्य पद्धति प्रकाश चिकित्सा (जैसे पराबैंगनी रक्त विकिरण) से अलग है जो वैज्ञानिक रूप से मान्य फोटो बायोलॉजी (जीवों पर प्रकाश के प्रभाव का वैज्ञानिक अध्ययन) पर आधारित होती है। वस्तुत:, शरीर का वाह्य स्वरूप मस्तिष्क, चेतन एवं अवचेतन मन के अंतर्गत निरंतर होने वाली क्रियाओं-प्रतिक्रियाओं का ही परिलक्षण होता है। रंग चिकित्सा के अंतर्गत इन्ही क्रियाओं-प्रतिक्रियाओं को ऊर्जा संतुलन के द्वारा नियंत्रित कर विभिन्न प्रकार के शरीरिक व्यतिक्रमों एवं व्याधियों को उपचार किया जाता है।

सर्वप्रथम एविसेना (980-1037) ने अपनी पुस्तक क्रोमाथेरेपी में रोगों की पहचान एवं निदान में रंगों के महत्व का वर्णन किया। उन्होंने मानव शरीर के तापक्रम व स्थिति के साथ रंगों का तुलनात्मक समावेशन करते हुये एक चार्ट तैयार किया जिसकी सहायता से लक्षणों के आधार पर रोगों की पहचान आसान हुई। अमेरिका के जरनल आगस्टस प्लिएसनटन (1801-1894) ने इस दिशा में कुछ नये प्रयोग किये और बताया कि किस प्रकार नीला रंग रोगों की चिकित्सा के साथ ही साथ पौधों की वृद्धि में भी अहम्

भूमिका निभा सकता है। इन अनुसंधानों की बदौलत प्रकाशीय रंगों के सिद्धांत एवं आधुनिक रंग चिकित्सा का प्रार्दुभाव हुआ। सन् 1933 में भारतीय मूल के अमरीकी वैज्ञानिक दिनशाह पी घदियाली ने रंगीन प्रकाशीय किरणों के चिकित्सीय प्रभावों के वैज्ञानिक सिद्धांतों कों उद्घाटित करने का दावा किया। उनका ऐसा मानना था कि प्रत्येक रंग एक विशिष्ट प्रकार की जैव-रासायनिक सक्षमता को प्रदर्शित करता है तथा मानव शरीर के अंतर्गत कोई विशिष्ट रंग किसी शरीर के विशिष्ट अंग या भाग को उत्तेजित या शांत करता है। इस आधार पर उन्होंने बताया कि शरीर के विभिन्न अंगों पर अलग-अलग रंगों के प्रभाव का अध्ययन द्वारा सही रंग का चुनाव व प्रयोग करके किसी अंग की क्रियाशीलता को प्रभावित किया जा सकता है तथा उसमें उत्पन्न व्यतिक्रम को दूर किया जा सकता है।

19वीं शताब्दी के दौरान रंग चिकित्सकों ने रंगीन काँच के फिल्टरों का प्रयोग करके अनेक रोगों जैसे कोष्ठबद्धता, मेनिनजाइटीस, आदि के इलाज का दावा किया। आयुर्वेदिक चिकित्सक ऐसा मानते रहे हैं कि मानव शरीर में मेरूदंड के विभिन्न स्तरों पर सात चक्र होते हैं, जिन्हें आध्यात्मिक केंद्र के रूप में मान्यता दी जाती है। आधुनिक मतानुसार, इनमें से प्रत्येक चक्र दृश्य प्रकाश वर्णक्रम के किसी न किसी रंग एवं तद्नुसार शरीर के किसी न किसी भाग एवं क्रियात्मक प्रणाली से सम्बन्धित है। इन चक्रों में किसी प्रकार का व्यतिक्रम एवं असंतुलन ही शारीरिक व्याधियों का कारण माना जाता है। ऐसे चक्रों का समुचित रंगों से उपचारित कर ऐसे व्यतिक्रम एवं असंतुलन को नियंत्रित किया जा सकता है। प्रकृति सम्मत एवं स्वाभाविक होने के कारण रंग चिकित्सा न्यूनतम प्रतिक्रिया वाली प्रभावशाली चिकित्सा पद्धति है।

रंगों की प्रकृति एवं अभिलाक्षणिक विशेषताएँ :

लाल रंग हमारी इंद्रियों तथा भाव-भंगिमाओं को उत्तेजित करता है। यह शक्ति, ऊर्जा तथा जीवन के प्रति उत्साह को दर्शाता है। सकारात्मक स्तर पर यह जीवन में ताकत, खुशी-सुख एवं प्रेम को देने वाला होता है, अग्नि का प्रमुख गहरा लाल रंग, मनुष्य की आदिम भावनाओं को जाग्रत कर देता है। गहरा लाल एक ओर खतरा दिखाता है, वहीं सौम्य गुलाबी रंग मातृत्व की भावना जगाता है। इस रंग का नकारात्मक पक्ष यह है कि यह दुस्साहस पैदा करते अनियंत्रित उन्माद एवं क्रोध को जन्म देता है। लाल रंग पसंद करने वाले लोग बहिर्मुखी होते हैं। इनका मिजाज परिवर्तनशील, आक्रामक एवं आवेगपूर्ण होता है। ये आशावादी होने के साथ शिकायती भी होते हैं तथा निरंतर आवाज उठाते रहते हैं। पुरुष पीले मिश्रित लाल रंग की ओर सहज आकृष्ट होते हैं। वहीं महिलाओं को नीला मिश्रित लाल रंग अपनी ओर खींचता है।

नारंगी रंग की प्रकृति गर्म, खुशमिजाजी व स्वछन्दात्मक मानी गई है। यह आकर्षण, प्रसन्नता, दयालुता, प्रोत्साहन, आशावाद, सफलता, प्रचुरता, सम्पन्नता और सफलता का द्योतक है। वे इस रंग से प्रभावित व्यक्ति अपने को कुछ भी करने के लिए स्वयं को समर्पित कर देते है। इसे सौभाग्य का प्रतीक माना जाता है। यह जीवन में नई संभावनाओं और विकल्पों की ओर प्रेरित करता है तथा रचनात्मक सोच और उत्साह का संचार करने के साथ-साथ नये विचारों को आत्मसात करने में मदद करता है।

पीला रंग वायु से सम्बन्धित है एवं व्यापार, भ्रमण, ज्ञान, आत्मविश्वास, एकाग्रता, वाकशक्ति, स्मरणशक्ति, दूरदृष्टि एवं दृढ़ निश्चय का प्रतीक है। इस रंग के प्रति अनासक्ति प्रत्येक व्यक्ति को भावनात्मक रूप से निराश एवं बेचैन बना देती है तथा उनमे आत्मविश्वास, एकाग्रता एवं वैचारिक निश्चयात्मकता की कमी उत्पन्न करती है।

हरा रंग प्रकृति के रंग और पृथ्वी का प्रतिनिधित्व करता है। यह हरीतिमा, विकास, कायाकल्प, समृद्धि, सद्भाव, संतुलन, शांति, आशा और प्रतिक्रियात्मकता का कारक है। प्राकृतिक तौर पर संतुलन एवं लयबद्धता का कारक होने के कारण यह मन एवं शरीर के बीच एकरूपता स्थापित करता है। मन की शांति को बढ़ाता है। प्रभाव में यह न तो शिथिलकारक है न ही बाध्यकारी, अतएव किसी भी अवस्था में उपचारात्मक आवश्यकता की पूर्ति कर सकता है। शरीर के हृदय चक्र से सम्बन्धित होने के कारण यह हृदय की क्रियाओं को नियंत्रित करता है।

नीला रंग ग्रीवा चक्र से सम्बन्धित है जो शक्ति का केंद्र भी माना जाता है। यह जल एवं वायु तत्वों का प्रतिनिधित्व करता है तथा सच्चाई, बौद्धिकता, आदर्शवादिता, शान्ति, न्याय, आत्म-सम्मान, धैर्य, आदि का कारक है। यह शरीर

का एक महत्वपूर्ण केंद्र है जो वाणी द्वारा अभिव्यक्ति की क्षमता को प्रभावित करता है। गहरा नीला रंग आज्ञा चक्र एवं आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि को नियंत्रित करता है।

बैगनी रंग मूल रूप से दैविकता, आत्मा, प्रति-नकारात्मकता, मनोभावनात्मक शक्ति, रहस्यवाद, प्रेरणा व सहानुभूति का कारक होता है। लियोनार्डो द विंची के अनुसार, हल्के नीले रंग का प्रकाश एकाग्रता एवं ध्यान करने की शक्ति को दस गुणा बढ़ा देता है।

सभी रंगों को समाविष्ट करने वाला सफेद एक संपूर्ण रंग कहा जाता है, जो सामन्जस्य एवं संतुलन का प्रतिनिधित्व करता है। श्वेत रंग को परिपूर्णता, ब्रह्मांडीय चेतना, दिव्यता एवं पवित्रता का प्रकाश कहा जाता है। इसी प्रकार मैजेंटा रंग चुम्बकीयता, आकर्षण, अतिरिक्त शक्ति, साहस और जोश का प्रतीक कहा जाता है। गुलाबी रंग कोमलता, भावुकता, दयालुता, स्त्रित्व, नजाकत, प्यार, रोमांस, मित्रता, यौवन और शान्ति का प्रतिनिधित्व करता है तथा इन्ही मनोभावों को प्रभावित करता है। फिरोजी रंग अन्तर्ज्ञान, बौद्धिकता, तकनिकी क्षमता, अन्वेशक प्रवृति, मौलिकता, भाईचारा एवं मानवीयता को प्रेरित करता हैं। भूरा (ब्राउन) रंग पृथ्वी तत्व का द्योतक होता है तथा स्थायित्व, संरक्षण, सुरक्षा, निर्णय क्षमता, एकाग्रता, सामाजिक सम्बन्ध, आपदा एवं वित्तिय प्रबंधन को प्रदर्शित करता है। काला रंग पृथ्वी तत्व का संकेतक है, जो भूमिगत या अदृश्य दैविक या पारलौकिक शक्तियों का प्रतिनिधित्व करता है। यह नकारात्मकता एवं बुराई को दूर करता है तथा ऐसी शक्तियों एवं प्रवृत्तियों से बचाव करता है। स्वर्णिम रंग असीम आधिपत्य, आत्मविश्वास, निपुणता, पौरूष ऊर्जा, ऐश्वर्य-वैभव, विलासिता, विजय, जादुई शक्ति और व्यसनो पर विजय का प्रतीक है। चाँदी सा चमकीला रंग भवनात्मक स्थिरता, अन्तर्ज्ञान, स्वप्न, भावनात्मक क्षमता, स्त्रियोचित ऊर्जा को प्रदर्शित करता है। यह सकारात्मक सम्बन्ध, मैत्री, व्यापार, जीवन क्रिया और आपसी सहमति का कारक होता है।

रंगों के उपचारात्मक प्रभाव :

लाल रंग : इस रंग का प्रयोग जीवन शक्ति के कमजोर होने, रक्त संचार धीमा होने की स्थिति से किया जा सकता है। लाल रंग मानसिक रूप से परेशान तथा स्नायुविक तकलीफ वाले व्यक्तियों को ज्यादा परेशान कर देता है। अत: इस रंग का प्रयोग ऐसे व्यक्ति के आसपास बहुतायत से नहीं करना चाहिए। यह सभी रंगों में सबसे धीमी वाइब्रेशन वाला रंग है, जो भावनाओं को अन्य रंगों की अपेक्षा जल्दी प्रभावित करता है। शोध के दौरान पाया गया कि जब कोई व्यक्ति लाल रंग के संपर्क में आता है, तब अत्यल्प समय में ही एंडोक्राइन पिट्यूटरी ग्लैंड सक्रिय हो जाती है। पिट्यूटरी ग्लैंड से एडरीनलिन का स्राव बढ़ जाता है तथा स्राव रक्त में मिलकर अपना प्रभाव अनेक स्तर पर दर्शाता है। रक्त का बहाव तीव्र हो जाता है, रक्तचाप बढ़ जाता है एवं श्वास की गति भी बढ़ जाती है। स्वाद कलिका अतिसंवेदनशील हो जाती है तथा भूख भी बढ़ जाती है। सूंघने की शक्ति भी बढ़ जाती है। लाल रंग की किरणें हीमोग्लोबिन बनाने में सहायक होती हैं तथा लीवर को ताकत देती हैं। लाल रंग ऊर्जावान होने से थकान, सर्दी, और निष्क्रियता की स्थिति को दूर करने में सहायक है। लाल रंग हृदय को शक्ति देता है और रक्त परिसंचरण को ठीक करता है। यह रक्त बनाता है और रक्तचाप को बढ़ाता है, अत: निम्न रक्तचाप में लाभदायक है। लाल रंग रीढ़ के नीचले भाग में स्थित आधार चक्र से सम्बन्धित है, जों अधिवृक्क ग्रंथियों को उत्तेजित कर एड्रेनेलीन का स्राव बढा देता है, जिससे शरीर को त्वरित शक्ति प्राप्त होती है। यह रंग शरीर में जमा फालतू खनिज तत्वों को निष्कासित करता है। खून की कमी, अस्थमा, ब्रोंकाइटिस, कब्ज, लकवा, तपेदिक में लाल रंग प्रभावी होता है।

नारंगी रंग : यह रंग त्रिक चक्र से सम्बंधित है जो लाल से कम परंतु पीले से अधिक ऊर्जावान होता है। नारंगी रंग शरीर और मन को दबाव से राहत का अहसास कराता है। यह अग्नि की उष्णता का प्रतिनिधित्व करता है। नारंगी रंग फेफड़ों, श्वसन और पाचन तंत्र को उत्तेजित करता है, थायराइड की गतिविधि को बढता है तथा मांसपेशियों में ऐंठन से राहत देता है।

पीला रंग : पीला रंग नाडी तंत्र एवं मनोदैहिक केंद्रों को उत्तेजित करता है तथा नसों और दिमाग को मजबूत बनाने में मदद करता है। इसका प्रयोग मानसिक व्यतिक्रमों या अन्य मानसिक बीमारियों के इलाज के लिए किया जाता है। अवसादग्रस्त रोगियों में तथा निराशा जनित दैहिक समस्यायों में पीले रंग का प्रयोग प्रभावी देखा गया है। यह मानसिक प्रेरणा जगाने में मदद करता है एवं जीवन के प्रति आनन्द व

उत्साह जगाता है। इस प्रकार, यह तंत्रिका या तंत्रिका संबंधी बीमारियों के लिए एक उत्कृष्ट रंग है। गहरा पीला रंग मांसपेशियों व नसों में ऊर्जा का संचार कर दर्द का शमन करता है। यह पेट, जिगर, और आंतों की तकलीफों के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है।

हरा रंग : हरा रंग हृदय की क्रियाशीलता को बढ़ाता है तथा रक्तचाप और दिल की सभी स्थितियों को प्रभावित करता है। यह हार्मोनल असंतुलन का इलाज को ठीक करता है तथा वृद्धिकारक हार्मोन और नवजीवनीकरण की प्रक्रिया को उत्तेजित करता है। शुद्धिकारक होने के कारण यह रोगाणुओं, बैक्टीरिया और अपशिष्ट पदार्थों को शरीर से बाहर निकालता है। यह पाचन एवं पेट, जिगर, पित्ताशय की क्रियाओं को ठीक करता है। गुर्दे पर भी इसका एक चिकित्सात्मक प्रभाव पड़ता है। यह शरीर की प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाता है तथा मांसपेशियों, हड्डियों और ऊतकों को मजबूत बनाता है।

नीला रंग : नीले रंग की प्रकृति ठंडी है। प्रकाश और रंग के सिद्धांतानुसार, नीली किरणों को सर्वोत्तम रोगाणुनाशक माना गया है। यह सूजन, बुखार, उच्च रक्तचाप का शमन करता है, रक्त श्राव को रोकता है, शांत होता है, सिर दर्द से राहत देता है तथा उत्तेजक मनोभावो जैसे क्रोध, आक्रामकता, हिस्टीरिया, आदि को शांत करता है। त्वचा की परेशानियों जैसे खुजली व जलन में लाभकारी है एवं तनाव को शांत करता है। नीले रंग का प्रयोग गले की समस्याओं जैसे सुजन, हकलाहट, लेरींगजाइटीस, आदि के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है। गहरा नीला रंग पीनियल ग्रंथि को नियंत्रित करता है तथा आँखों और कान की बीमारियों के इलाज में प्रभावी होता है। यह दिल की अतिसक्रियता को धीमा करता है, मानसिक और भावनात्मक तनाव को शांत करता है, दर्द के प्रति संवेदनशीलता को कम करता है तथा तिल्ली और सफेद रक्त कोशिकाओं पर सकारात्मक प्रभाव डालता है। यह शरीर से अपशिष्टों को बाहर निकाल कर शोधन करता है।

बैंगनी रंग : बैगनी को परिवर्तनकारी रंग माना जाता है। यह निराशा, उदासी, भ्रम, नशे की आदत को दूर करने में सहायक होता है तथा पवित्र, नवीनीकृत एवं दिव्य अन्तर्दृष्टि का संचार करता हैं। बैंगनी रंग हृदय की अतिसक्रियता को धीमा करता है तथा तिल्ली और सफेद रक्त कोशिकाओं की क्रियाशीलता एवं शरीर की प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाता है। यह मानसिक एवं भावनात्मक उद्वेग को शांत करता है एवं नींद लाने में सहायक होता है। यह हृदय की अतिसक्रियता को धीमा करता है, तिल्ली और सफेद रक्त कोशिकाओं की क्रियाशीलता को बढ़ाता है तथा शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता में वृद्धि करता है। यह मानसिक और भावनात्मक तनाव को शांत करता है, दर्द के प्रति संवेदनशीलता को कम करता है तथा अपशिष्टों को बाहर निकाल कर सम्पूर्ण शरीर का शोधन करता है।

सफ़ेद रंग : सफेद रंग का प्रकाश मानव शरीर और उसकी चेतना शक्ति को झँकृत कर जीवन के सभी पहलुओं में सामंजस्य स्थापित करता है। शरीर के उस भाग को जिसके उपचार की आवश्यकता है, सफेद प्रकाश के प्रभाव के अंतर्गत उचित समय तक रखने से लाभ होता है। रंग चिकित्सा के अंतर्गत यह उपचार के सबसे त्वरित तरीकों में से एक है।

मैजेंटा रंग : यह व्यक्ति को उसके जीवन के उद्देश्यों के साथ मजबूती से जोड़ता है। यह मनोभावनाओं पर समुचित नियंत्रण के द्वारा मानसिक विकृतियों का समाधान करता है। यह एडरनेलीन एवं हृदय की क्रियाशीलता को उत्तेजित करता है।

गुलाबी रंग: कोमलता, भावुकता, दयालुता और शान्ति का कारक होने से गुलाबी रंग उदासी एवं शोकग्रस्तता को दूर करने में सहायक होता है। नवयौवन को पुनर्स्थापित करता है तथा वैचारिक परिष्करण में सहायक होता है।

फ़िरोजी रंग: यह अंतर्ज्ञान और संवेदनशीलता को बढ़ाता है तथा तनाव-जन्य उत्तेजना की स्थिति में राहत दिलाता है। यह रोगाणुनाशक एवं ऐंटीसेप्टीक के रूप में भी कार्य करता है। यह क्षतिग्रस्त त्वचा का निर्माण करने के साथ-साथ त्वचा की सेहत एवं संवेदनशीलता में सुधार लाता है।

भूरा (ब्राउन) रंग: मानसिक शिथिलता को दूर कर वैचारिक दृढ़ता का संचार करता है। यह जीवन के प्रति सकारात्मकता को प्रेरित करता है। काला रंग बुरी आदतों, व्यसनों एवं नकारात्मक मनोभावों से मुक्त करता है। स्वर्णिम रंग आत्मविश्वास, रचनात्मकता, आदि जैस विचारों को प्रेरित करता है। चांदी सा चमकीला रंग हॉर्मोन असंतुलन का निदान करता है तथा ताँबा (कॉपर) रंग मानसिक क्षमताओं में सुधार कर भावनात्मक स्थिरता लाता है।

सौर किरणों के रंगों का उपचारात्मक प्रयोग :

सूर्य की रश्मियों में सात रंग पाए जाते हैं - लाल, पीला, नारंगी, हरा, नीला, आसमानी, बैंगनी। उपचार के दृष्टिकोण से इन रंगों के तीन समूह बनाए गए हैं :

1. लाल, पीला और नारंगी
2. हरा
3. नीला, आसमानी और बैंगनी

विभिन्न रंगों से तैयार जलौषधि

पहले समूह में से केवल नारंगी रंग का, दूसरे में हरे रंग का और तीसरे समूह में से केवल नीले रंग का चिकित्सीय प्रयोग किया जाता है। इस प्रक्रिया में शुद्ध जल को वांछित रंग की काँच के पात्र में रख कर सूर्य की किरणों से निश्चित समय तक उपचारित कर जलौषधि तैयार की जाती है। वांछित रंग की दवाएँ के लिये सम्बन्धित रंग की काँच की बोतल में शुद्ध पानी भरकर 8 घंटे धूप में रखने से दवा तैयार हो जाती है। बोतल थोड़ी खाली होनी चाहिए व ढक्कन बंद होना चाहिए। इस प्रकार बनी हुई दवा को चार या पाँच दिन सेवन कर सकते हैं। नारंगी रंग की दवा भोजन करने के बाद 15 से 30 मिनट के अंदर तथा हरे व नीले रंग की दवाएँ खाली पेट या भोजन से एक घंटा पहले दी जाती हैं।

नारंगी रंग की दवा के प्रयोग कफजनित खाँसी, बुखार, निमोनिया आदि में लाभदायक होता है। श्वास प्रकोप, क्षय रोग, एसिडीटी, फेफड़े संबंधी रोग, स्नायु दुर्बलता, हृदय रोग, गठिया, पक्षाघात (लकवा) आदि में भी गुणकारी है। पाचन तंत्र को ठीक रखती है एवं भूख बढ़ाती है। हरे रंग की दवा के प्रयोग खासतौर पर चर्म रोग जैसे, चेचक, फोड़ा-फुंसी, दाद, खुजली के साथ ही नेत्र रोगियों के लिए (दवा आँखों में डालना) मधुमेह, रक्तचाप सिरदर्द आदि में लाभदायक होती है। नीले रंग की दवा के प्रयोग शरीर में जलन होने पर, लू लगने पर, आंतरिक रक्तस्राव में आराम पहुँचाता है। तेज बुखार, सिरदर्द को कम करता है। नींद की कमी, उच्च रक्तचाप, हिस्टीरिया, मानसिक विक्षिप्तता में बहुत लाभदायक है। टांसिल, गले की बीमारियाँ, मसूड़े फूलना, दाँत दर्द, मुँह में छाले, पायरिया घाव आदि चर्म रोगों में अत्यंत प्रभावकारी होता है। डायरिया, डिसेन्टरी, वमन, जी मचलाना, हैजा आदि रोगों में आराम पहुँचाता है। जहरीले जीव-जंतु के काटने पर या फूड पॉयजनिंग में लाभ पहुँचाता है। इनके अतिरिक्त, सफेद बोतल में पीने का पानी 4-6 घंटे धूप में रखने से वह पानी कीटाणुमुक्त तथा कैल्शियमयुक्त हो जाता है जिसे बच्चों के दाँत निकलते समय पिलाने से दाँत निकलने में आसानी होती है। प्रत्येक रंग की दवा की साधारण खुराक 12 वर्ष से ऊपर की उम्र वाले व्यक्ति के लिए 2 औस यानी 5 तोला होती है। कम आयु वाले बच्चों को कम मात्रा देनी चाहिए। आमतौर पर रोगी को एक दिन में तीन खुराक देना लाभदायक होता है।

उपसंहार :

रंग चिकित्सा के विषय में उल्लेखनीय है कि इस पूरी चिकित्सा पद्धति में आम तौर आंतरिक परिवर्तन पर बल दिया जाता है। प्राय: अधिकांश शारीरिक व्याधियाँ तनाव एवं मानसिक व्यतिक्रमों का परिणाम होती हैं। इसमें मन एवं मनोभावों के विकारों को दूर कर तथा उनके साथ शरीर का समुचित सामंजस्य स्थापित कर रोगों का निदान व इलाज किया जाता है। यह चिकित्सा जितनी सरल है उतनी ही कम खर्चीली भी है। मनोदैहिक निदान और सूक्ष्म ऊर्जा जैसे चिकित्सा के उभरते हुए क्षेत्रों में रंग चिकित्सा की महत्वपूर्ण भूमिका है।

तुलसी–बहुआयामी औषधीय गुणों से युक्त एक पूजनीय पौधा

श्री देवेश तिवारी, सुश्री निशात अंजुम, श्री विकास तथा डॉ वाई.सी. त्रिपाठी
वन अनुसंधान संस्थान, देहरादून

प्रस्तावना :

तुलसी (*ऑसीमम सैंक्टम*) लेमिएसी कुल का एक शाकीय झाड़ीनुमा 1–3 फुट ऊँचा पौधा है, जिसकी पत्तियां बैंगनी आभा वाली हल्के रोएँ से ढकी होती है। पुष्प मंजरी अति कोमल और बहुरंगी छटाओं वाली होती है, जिस पर बैंगनी और गुलाबी आभा वाले बहुत छोटे हृदयाकार पुष्प चक्रों में लगते हैं। बीज चपटे पीतवर्ण के छोटे काले चिहनों से युक्त अंडाकार होते हैं। नए पौधे मुख्य रूप से वर्षा ऋतु में उगते है और शीतकाल में फूल हैं। पौधा सामान्य रूप से 2–3 वर्षों तक हरा बना रहता है। सम्पूर्ण विश्व में तुलसी की लगभग 150 प्रजातियाँ पाई जाती हैं। इन सभी प्रजातियों में *ऑसीमम सैंक्टम* को प्रधान या पवित्र तुलसी माना जाता है। इसकी भी दो प्रधान प्रजातियाँ हैं, श्री तुलसी जिसकी पत्तियां हरी होती हैं तथा कृष्णा तुलसी जिसकी पत्तियां निलाभ–बैंगनी रंग की होती है। गुण–धर्म की दृष्टि से काली तुलसी को श्रेष्ठ माना गया है, परन्तु अधिकांश विद्वानों का मत है कि दोनों की गुणों में समान हैं। तुलसी का पौधा हिंदू धर्म में पवित्र माना जाता है और लोग इसे अपने घरों में लगाते है। भारतीय संस्कृति के चिर पुरातन ग्रंथ वेदों में भी तुलसी के गुणों एवं उसकी उपयोगिता का वर्णन मिलता है। स्वनामधन्य तुलसी जिसका शाब्दिक अर्थ है ''अतुल्य'' अर्थात जिसकी तुलना न की जा सके, स्वयं इसकी चारित्रिक विशेषताओं को दर्शाता है। अंग्रेजी में तुलसी को बेसिल कहा जाता है। भारतीय संस्कृति और पुरातन धार्मिक व वैद्यक ग्रंथों में तुलसी को उसके महान गुणों के कारण ही सर्वश्रेष्ठ स्थान दिया गया है। वैज्ञानिक दृष्ठिकोण से भी तुलसी का सर्वोच्च स्थान प्राप्त है तथा इसे वनस्पतियों की रानी (क्वीन ऑफ हर्बस) का कहा जाता है। धार्मिक महत्व के साथ–साथ इसके औषधीय गुण भी तुलसी के पौधे को अति महत्वपूर्ण बनाते है। तुलसी भारतीय मूल की ऐसी औषधि है, जिसका सांस्कृतिक महत्व हैं। भारतीय संस्कृति में तुलसी के पौधे को पूज्य माना गया है। तुलसी की पत्तियां, मंजरी, तना, जड़ तथा इसके नीचे की मिट्टी भी पवित्र मानी जाती है। देश के हर घर में इसके पौधे

श्री तुलसी एवं कृष्णा तुलसी

की उपस्थिति को दैवीय उपहार और सौभाग्यशाली समझा जाता है। इसके प्रभाव से मानसिक शांति, घर में सुख समृद्धि और जीवन में अपार सफलताओं का द्वार खुलता है। तुलसी को शरीर, मन और आत्मा की पीड़ा हरने वाला बताया गया। भारत में पाई जाने वाली यह अब तक की सबसे महत्वपूर्ण और चमत्कारिक औषधि है। भारत सरकार द्वारा इस पौधे के सम्मान में एक डाक टिकट भी जारी किया गया है।

पारम्परिक महत्व :

तुलसी का धार्मिक महत्व तो है ही लेकिन विज्ञान के दृष्टिकोण से तुलसी एक औषधि है। तुलसी को हजारों वर्षो से विभिन्न रोगों के इलाज के लिए औषधि के रूप में प्रयोग किया जा रहा है। आयुर्वेद में तुलसी तथा उसके विभिन्न औषधीय प्रयोगों का विशेष स्थान है। घर के आंगन में लगा छोटा सा तुलसी का पौध अनेक बीमारियों का इलाज करने के आश्चर्यजनक गुण लिए हुए होता है। तुलसी में कई ऐसे गुण होते हैं जो जटिल बीमारियों को दूर करने और उनकी रोकथाम करने में सहायक हैं। हृदय रोग हो या सर्दी जुकाम, भारत में सदियों से तुलसी का इस्तेमाल होता चला आ रहा है। औषधीय गुणों से परिपूर्ण पौराणिक काल से प्रसिद्ध पावन तुलसी के पत्तों का विधिपूर्वक नियमित औषधि तुल्य सेवन करने से अनेकानेक बीमारियां ठीक हो जाती है। तुलसी वर्षा ऋतु के दौरान उगने एवं पल्लवित–पुष्पित होने वाला पौधा है।

उल्लेखनीय है कि वर्षा काल में ज्वर, जुकाम आदि विशेष रूप से स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याओं को उत्पन्न करते हैं। तुलसी की पत्तियां इस प्रकार ज्वर तथा जुकाम में विशेष रूप से लाभकारी हैं। इसकी पत्तियों से निर्मित औषधीय चाय का सेवन करने से ज्वर तथा जुकाम में लाभ प्राप्त होता है। तीव्र ज्वर की स्थिति में तुलसी की पत्तियों तथा इलाइची पाउडर को आधे लीटर पानी में उबालकर दूध तथा चीनी मिलाकर पीने से ज्वर कम होता है। यह बच्चों में होने वाले ज्वर में भी अत्यन्त लाभकर है। यह ऐसी रामबाण औषधि है, जो हर प्रकार की बीमारियों में काम आती है। स्मरण शक्ति, हृदय रोग, कफ, श्वास के रोग, खून की कमी, दंत रोग, धवल रोग, आदि में तुलसी के प्रयोग से चमत्कारी लाभ मिलता है। तुलसी एक प्रकार से सारे शरीर का शोधन करने वाली जीवन शक्ति संवर्धक औषधि है। यह वातावरण का भी शोधन करती है तथा पर्यावरण संतुलन बनाती है। तुलसी के पौधे को घर के बाहर लगाने पर इसकी सुगन्ध वातावरण को शुद्ध करती है तथा यह रात्रि के समय भी कुछ मात्रा में प्राणवायु ऑक्सीजन प्रदान करती है। इसकी जीवाणुरोधक क्षमता संक्रमण से बचाती है तथा मच्छरों को दूर रखती है।

विभिन्न चिकित्सा पद्धतियों में तुलसी :

हिन्दू धर्म संस्कृति के चिर पुरातन ग्रंथ अथर्ववेद के अनुसार, श्यामा तुलसी मानव के स्वरूप को बनाती है, शरीर के ऊपर के सफेद धब्बे अथवा अन्य प्रकार के त्वचा सम्बन्धी रोगों को नष्ट करने वाली अत्युत्तम महौषधि है। आयुर्वेद में तुलसी को संजीवनी बूटी के समान माना जाता है। आयुर्वेदिक ग्रंथ चरक संहिता एवं सुश्रुत संहिता में तुलसी को हिचकी, खांसी, श्वास रोग और पार्श्व शूल को नष्ट करने वाला बताया गया है। चरक संहिता में तुलसी को दमा की औषधि बताया गया हैं। भाव प्रकाश निधंटु में तुलसी को पित्तनाशक, वात-कृमि तथा दुर्गन्ध नाशक कहा गया है। इसी ग्रंथ के अनुसार तुलसी पसली का दर्द, अरूचि, खांसी, श्वास, हिचकी आदि विकारों को जीतने वाली है। यह हृदय के लिए हितकर, उष्ण तथा अग्निदीपक है एवं कुष्ट, मूत्र विकार, रक्त विकार, पार्श्वशूल को नष्ट करने वाली है। श्वेत तथा कृष्णा तुलसी दोनों ही गुणों में समान है। होम्योपैथिक मतानुसार, तुलसी को अमृत तुल्य माना जाता है। तुलसी अनेकानेक लक्षणों में लाभकारी औषधि है। सिर में दर्द, स्मरण शक्ति में कमी, बच्चों का चिड़चिड़ापन, आंखों की लाली, एलर्जी के कारण छीकें आना, नाक बहना, मुँह में छाले, गले में दर्द, पेशाब में जलन, दमा तथा जीर्ण ज्वर जैसे बहुत प्रकार के लक्षणों में तुलसी को होम्योपैथी में स्थान दिया गया है। यूनानी मत अनुसार, तुलसी हृदयोत्तेजक, बलवर्धक तथा यकृत आमाशय बलदायक है। यह हृदय को बल देने वाली होने के कारण अनेक प्रकार के शोथ-विकारजन्य रोगों में आराम देती है। यह शिर:शूल की श्रेष्ठ औषधि है। पत्ते सूंघने से मूर्छा दूर होती है तथा चबाने से दुर्गन्ध। रस कान में टपकाने से कर्णशूल शान्त होता है। इसके अतिरिक्त ऐलोपैथी, होमियोपैथी और यूनानी दवाओं में भी तुलसी का किसी न किसी रूप में प्रयोग किया जाता है। यूनानी चिकित्सा पद्धति के मुताबिक तुलसी में बीमारियों को ठीक करने की जबर्दस्त क्षमता है। यह सर्दी-जुकाम के प्रभाव को कम कर देती है और बुखार कम करने साथ मलेरिया, चिकन पॉक्स, मीसल्स, एन्फ्लूएंजा और अस्थमा जैसी बीमारियों को भी ठीक कर देती है। तुलसी खासतौर पर दिल की रक्त वाहिकाओं, लीवर, फेफड़े, उच्च रक्तचाप तथा रक्त शर्करा को भी कम करने में मददगार साबित होती है। शरीर के वजन को नियंत्रित रखने हेतु भी तुलसी अत्यंत गुणकारी है। इसके नियमित सेवन से भारी व्यक्ति का वजन घटता है एवं पतले व्यक्ति का वजन बढ़ता है यानी तुलसी शरीर का वजन आनुपातिक रूप से नियंत्रित करती है। तुलसी में दाह को कम करने, जीवाणुनाशक तथा मूत्रवर्धक गुण होते हैं, जो संक्रमण को दूर करने के साथ-साथ तनाव और अन्य बीमारियों के खिलाफ प्राकृतिक प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत करती है। ब्राजील में तुलसी की ऑसीमम कैनन नामक जाति पायी जाती है। यह प्रजनन तथा मूत्रवाही संस्थान रोगों की श्रेष्ठ औषधि है।

रासायनिक संगठन :

तुलसी की विभिन्न प्रजातियों से एक प्रकार का पीला उड़नशील सगन्ध तेल जिसकी मात्रा एवं संघट्टन, स्थान व समय के अनुसार बदलते रहते हैं। तेल की मात्रा 0.1 से 0.3 प्रतिशत तक पायी गई है। इस तेल में लगभग 71 प्रतिशत यूजीनॉल, बीस प्रतिशत मिथाइल ईथर तथा तीन प्रतिशत चॉविकाल होता है। इससे कपूर, ओसिमिन तथा लिनालून आदि रसायन प्राप्त होते हैं। इसके अतिरिक्त इसमें विटामिन-ए, विटामिन-सी, पोटेशियम आदि भी प्राप्त होते हैं। तुलसी में अनेकों जैव सक्रिय रसायन पाए गए हैं, जिनमें ट्रैनिन, सैवोनिन, ग्लाइकोसाइड और एल्केलाइड्स प्रमुख हैं।

अभी भी पूरी तरह से इनका विश्लेषण नहीं हो पाया है। श्री तुलसी में श्यामा की अपेक्षा कुछ अधिक तेल होता है तथा इस तेल का सापेक्षिक घनत्व भी कुछ अधिक होता है। तेल के अतिरिक्त पत्रों में लगभग 83 मिलीग्राम प्रतिशत विटामिन सी एवं 2.5 मिलीग्राम प्रतिशत कैरोटीन होता है। तुलसी में हरे पीले रंग का तेल लगभग 17.8 प्रतिशत की मात्रा में पाया जाता है। इसके घटक है कुछ सीटोस्टेरॉल, अनेक वसा अम्ल मुख्यत: पामिटिक, स्टीयरिक, ओलिक, लिनोलक और लिनोलिक अम्ल। तेल के अलावा बीजों में श्लेष्मक प्रचुर मात्रा में होता है। इस म्युसिलेज के प्रमुख घटकों में पेन्टोस, हेक्जा यूरोनिक अम्ल और राख (लगभग 0.2 प्रतिशत) है।

आधुनिक भेषजीय अध्ययन :

तुलसी के विभिन्न घटकों का विशद् भेषजीय अध्ययन किया गया है जिसके द्वारा न केवल पारम्परिक औषधीय गुणों की पुष्टि की गई है बल्कि पौधे के कुछ नवीन औषधीय गुण भी उद्घाटित किये गये हैं। तुलसी में विद्यमान रसायन वस्तुत: उतने ही गुणकारी हैं, जितना वर्णन शास्त्रों में किया गया है। तुलसी को कीटनाशक, कीट प्रतिकारक तथा प्रचण्ड जीवाणुनाशक पाया गया है। विशेषकर, एनाफिलिस जाति के मच्छरों के विरूद्ध इसका कीटनाशी प्रभाव उल्लेखनीय है। एक अन्य खोजपूर्ण लेख में विस्तार से विश्व में चल रहे प्रयासों की जानकारी दी गई है। विगत वर्षों में वैज्ञानिक परीक्षणों ने यह सिद्ध किया है कि तुलसी की कुछ प्रजातियों को सफलता पूर्वक चर्म रोगों की रोकथाम में प्रयोग किया जा सकता है। अनुसन्धान के अनुसार, तुलसी का ईथर सार टी.बी. के जीवाणु *माइकोबैक्टीरियम ट्यूबरकुलोसिस* का बढ़ना रोक देता है। सभी आधुनिकतम औषधियों की तुलना में यह निष्कर्ष अधिक सान्द्रता में श्रेष्ठ पाया गया है। शोध परिणामों के अनुसार, तुलसी की टी.बी. नाशक क्षमता विलक्षण है। इस जीवाणु के ह्यूमन स्ट्रेन की वृद्धि को भी यह औषधि रोकती है। तुलसी का स्वरस तथा निष्कर्ष कई अन्य जीवाणुओं के विरूद्ध भी सक्रिय पाया गया है। इनमें प्रमुख है - *स्टेफिलोकोकस आरियस, साल्मोनेला टाइफोसा* और *एक्केरेशिया कोलाई*। इसकी जीवाणुनाशी क्षमता कार्बोलिक अम्ल से 6 गुना अधिक है। नवीनतम शोधों में तुलसी की जीवाणुनाशी सक्रियता अन्य जीवाणुओं के विरूद्ध भी सिद्ध की गई है। तुलसी का तेल *कल्वेसिला न्यूमोनी, प्रोटिस बलेगरिस, केन्डीडा एल्बीकेन्स* जैसे घातक रोगाणुओं के विरूद्ध भी सक्रिय पाया गया है। तुलसी के बीजों में एण्टीकोएगुलेस संघटक होता है, जो स्टेफिलोकोएगुलेस के रक्त में प्रभाव को निरस्त करता है।

इनके अतिरिक्त तुलसी के मधुमेह प्रतिरोधी, गर्भ निरोधी तथा ज्वरनाशी प्रभावों पर भी विस्तार से वैज्ञानिक अध्ययन किया गया है। वर्तमान समय में बदलती जीवनशैली के कारण समूचे विश्व में मुख्य रूप से भारत में मधुमेह के रोगियों की संख्या व्यापक रूप से बढ़ रही है। तुलसी की पत्तियों में तनाव रोधी गुण भी पाए जाते हैं। हाल में हुए शोधों से पता चला है कि तुलसी तनाव से बचाती है। मधुमेह की रोकथाम के लिए किये गये अनेक प्रयोगों में यह सिद्ध हुआ है कि तुलसी का सेवन करने से पैनक्रियास में उपस्थित बीटा-कोशिकाएं सुदृढ़ होती हैं, जो इन्सुलिन का उत्पादन करती हैं। तुलसी का प्रयोग कैंसर जैसी लाइलाज बीमारी की रोकथाम हेतु भी किया जा सकता है। वैज्ञानिक प्रयोगों में कैंसर के विरूद्ध प्रतिरोधक क्षमता के परीक्षण हेतु विभिन्न कैंसर उत्पन्न करने वाले रसायनों (कारसीनोजेंस) द्वारा प्रयोगशाला चूहों में कैंसर उत्पन्न कराया जाता है, फिलिपीन्स में हुए परीक्षणों में तुलसी के ताजे रस को कैंसर उत्पन्न करने वाले रसायनों के साथ चूहों की त्वचा में लगाया तथा आश्चर्यजनक परिणामों में यह प्राप्त हुआ कि तुलसी दिये गये समूहों में 20 सप्ताह तक कोई ट्यूमर उत्पन्न नहीं हुआ।

तुलसी शरीर की प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने में विशेष योगदान करती है। एड्स का जनक एच.आई.वी. विषाणु मानव शरीर की प्रतिरोधक क्षमता को क्षीण करता है। अनुसन्धानों में यह पाया गया कि एड्स के मुख्य घटक एक एंजाइम के प्रति तुलसी, अश्वगंधा तथा शिलाजीत अत्यन्त प्रभावशाली है। कुष्ट की रोकथाम के लिए मुख्यत: प्रयोग की जाने वाली एजाइडोथाइमिडीन (एजेडटी) से तुलना करने पर पाया गया कि तुलसी तथा शिलाजीत के परिणाम एजेडटी से अधिक प्रभावशाली पाये गये हैं। कई अनुसन्धानों में यह दावा किया गया है कि तुलसी न केवल प्राणघातक स्वाइन फ्लू को दूर कर सकती है, वरन् इससे पीड़ित व्यक्ति की स्वस्थ होने की दर बढ़ी है। सम्भावना है कि आने वाले दिनों में तुलसी के सभी शास्त्रोक्त प्रभावों को प्रयोगशाला में सिद्ध किया जा सकेगा।

विकिरण जनित समस्यायों में तुलसी :

तुलसी का प्रयोग सफेद दाग तथा विकिरण जनित त्वचा विकारों को दूर करने में भी प्रभावी पाया गया है। तुलसी का यह विशेष गुण है कि यह कोशिकाओं में पाये जाने वाले डी. एन.ए. को घातक उत्परिवर्तकों से सुरक्षा प्रदान करती है। यह सूर्य, टी.वी. कम्प्यूटर, माईक्रोवेव तथा एक्स-रे से उत्पन्न होने वाले विकिरण से भी कोशिकाओं तथा उतकों की रक्षा करती है। तुलसी की एक प्रजाति ऑसीमम बेसिलिकम (काली तुलसी) को कुछ समय पूर्व 'रक्षा अनुसन्धान एवं विकास संगठन, भारत सरकार द्वारा रेडियेशन के विरूद्ध कारगर कैप्सूल के निर्माण में प्रयोग किया गया है, जिसे रेडियेशन की मार झेल रहे जापान में मानव जाति की सुरक्षा के लिए भेजे जाने की योजना पर कार्य किया जा रहा है।

तुलसी के औषधीय अनुप्रयोग :

तुलसी की पत्तियां मुंह में होने वाले छालों तथा अन्य संक्रमण को दूर रखने में भी सहायता प्रदान करती है। दो बूंद तुलसी के रस को सोने से पहले आंखों में डालने से आंखों में ठंडक तथा रतौधी में लाभ प्राप्त होता हैं तुलसी की पत्तियां नर्व टॉनिक है तथा स्मरण-शक्ति को बढ़ाती है। प्रतिदिन खाली पेट चार से छः पत्तियां तुलसी की चबाने से उच्च रक्तचाप, कॉलेस्ट्रोल की मात्रा को कम करती है। तुलसी अन्य हृदय सम्बन्धी विकार जैसे हृदयाघात से भी रक्षा करती है। यह एक प्रमुख कार्डियोटॉनिक है तथा तुलसी, अर्जुन तथा घिंघारू एक प्रमुख त्रिदोषक औषधि है, जो हृदय को बल प्रदान करती है। तुलसी की पत्तियों को सुखाकर उससे दांत साफ करने से पायरिया, श्वांस से दुर्गन्ध दूर होती है तथा मसूड़ों को मजबूती प्रदान होती है। तुलसी में अनेक कीटनाशक तत्व उपस्थित रहते है तथा यह मधुमक्खी, सर्प आदि कीटों द्वारा काटे जाने पर सम्भावित विष के प्रतिरोधक का कार्य करती है तथा तुलसी के रस सेवन करने तथा सम्बंधित स्थान पर लगाने से विशेष लाभ प्राप्त होता है। तुलसी के रस की कुछ बूंदों में थोड़ा-सा नमक मिलाकर बेहोश व्यक्ति की नाक में डालने से उसे शीघ्र होश में आ जाता है। 10 ग्राम तुलसी के रस को 5 ग्राम शहद के साथ सेवन करने से हिचकी एवं अस्थमा के रोगी को ठीक किया जा सकता है। तुलसी के काढ़े में थोड़ा-सा सेंधा नमक एवं पीसी सौंठ मिलाकर सेवन करने से कब्ज दूर होती है। दोपहर के भोजन के पश्चात तुलसी की पत्तियां चबाने से पाचन शक्ति मजबूत होती है। 10 ग्राम तुलसी के रस के साथ 5 ग्राम शहद एवं 5 ग्राम पिसी कालीमिर्च का सेवन करने से पाचन शक्ति की कमजोरी समाप्त हो जाती है। दूषित पानी में तुलसी की कुछ ताजी पत्तियां डालने से पानी का शुद्धिकरण किया जा सकता है। रोजाना सुबह पानी के साथ पुलसी की 5 पत्तियां निगलने से कई प्रकार की संक्रामक बीमारियों एवं दिमाग की कमजोरी से बचा जा सकता है। इससे स्मरण शक्ति को भी मजबूत किया जा सकता है।

श्वास रोगों में तुलसी के पत्ते काले नमक के साथ सुपारी की तरह मुंह में रखने से आराम मिलता है। तुलसी की हरी पत्तियों को आगपर सेंक कर नमक के साथ खाने से खांसी तथा गला बैठना ठीक जो जाता है। तुलसी के कोमल पत्तों को चबाने से खांसी और नजले से राहत मिलती है। फेफड़ों में खरखराहट की आवाज आने व खांसी होने पर तुलसी की सूखी पत्तियां 4 ग्राम मिश्री के साथ देते हैं। तुलसी दमा, टी.बी. में अत्यंत लाभकारी हैं। तुलसी के नियमित सेवन से दमा एवं टी.बी. नहीं होती हैं, क्योंकि यह बीमारी के जिम्मेदार कारक जीवाणु को बढ़ने से रोकती हैं। फ्लू रोग तुलसी के पत्तों का काढ़ा, सेंधा नमक मिलाकरण पीने से ठीक होता है।

विषम ज्वर में तुलसी पत्र का क्वाथ अथवा शहद के साथ स्वरस सेवन करने का विधान है। तुलसी की जड़ का काढ़ा भी आधे औंस की मात्रा में दो बार लेने से ज्वर में लाभ पहुंचाता है। तुलसी का सेवन सौंठ के साथ करने से लगातार आने वाला बुखार ठीक होता है। तुलसी के रस में थाइमोल तत्व पाया जाता है, जिससे त्वचा के रोगों में लाभ होता है। इसकी पत्तियों का रस बराबर मात्रा में नींबू का रस मिलाकर रात को चेहरे पर लगाने से झाइयां नहीं रहती, फुंसियां ठीक होती है और चेहरे की रंगत में निखार आता है। दाद, खुजली और त्वचा की अन्य समस्याओं में तुलसी के अर्क को प्रभावित जगह पर लगाने से कुछ ही दिनों में रोग दूर हो जाता है। नैचुरोपैथी द्वारा ल्यूकोडर्मा का इलाज करने में तुलसी के पत्तों को सफलता पूर्वक इस्तेमाल किया किया जाता है। कुष्ठ रोग में तुलसी पत्र स्वरस प्रतिदिन प्रातः पीने से लाभ होता है। तुलसी के पत्तों का रस एक्जिमा पर लगाने से एक्जिमा में लाभ मिलता है। चेहरे में मुंहासों में तुलसी पत्र एवं संतरे का रस मिलाकर रात्रि को चेहरा धोकर अच्छी तरह से लेप करते है। व्रणों को शीघ्र भरने तथा संक्रमण ग्रस्त जख्मों को धोने के

लिए तुलसी के पत्तों का क्वाथ बनाकर उसका ठण्डा लेप करते है। रक्त विकारों में तुलसी व गिलोय का तीन-तीन माशे की मात्रा में क्वाथ बनाकर दो बार मिश्री के साथ लेते है। तुलसी पत्रों को पीसकर चेहरे पर उबटन करने से चेहरे की आभा बढ़ती है।

वमन की स्थिति में तुलसी पत्र स्वरस मधु के साथ प्रात:काल व जब आवश्यकता हो पिलाते हैं। पाचन शक्ति बढ़ाने के लिए, अपच रोगों के लिए तथा बालकों के यकृत प्लीहा सम्बन्धी रोगों के लिए तुलसी के पत्रों का स्वरस पिलाते हैं। तुलसी के पत्तों को चाय की तरह पानी में उबाल कर पीने से आंव (पेचिश) ठीक होती है। अपच में मंजरी को काले नमक के साथ देते हैं। बवासीर रोग में तुलसी पत्र स्वरस मुंह से लेने पर तथा स्थानीय लेप रूप में तुरन्त लाभ करता है। कृमि रोगों में तुलसी के पत्रों का सेवन करने से कृमिजन्य सभी उपद्रव शान्त हो जाते हैं। उदर शूल में तुलसी दलों का मिश्री के साथ देते हैं तथा संग्रहणी में बीज चूर्ण 3 ग्राम सुबह-शाम मिश्री के साथ। बच्चों में बुखार, खांसी और उल्टी जैसी सामान्य समस्याओं में तुलसी बहुत फायदेमंद है। तुलसी का रस आंखों के दर्द, रात्रि अंधता जो सामान्यत: विटामिन-ए की कमी से होता है के लिए अत्यंत लाभदायक है। आंखों की जलन में तुलसी का अर्क बहुत कारगर साबित होता है। रात में रोजाना श्यामा तुलसी के अर्क की दो बूंद आंखों में डालनी चाहिए। श्याम तुलसी (काली तुलसी) पत्तों का दो-दो बूंद रस आंखों में डालने से रतौंधी ठीक होती है। आंखों का पीलापन ठीक होता है। आंखों की लाली दूर करता है। तुलसी के पत्तों का रस काजल की तरह आंख में लगाने से आंख की रोशनी बढ़ती है। अल्सर और मुंह के अन्य संक्रमण में तुलसी की पत्तियां फायदेमंद साबित होती है। रोजाना तुलसी की कुछ पत्तियों को चबाने से मुंह का संक्रमण दूर हो जाता है। तुलसी की सूखी पत्तियों को सरसों के तेल में मिलाकर दांत साफ करने से सांसों की दुर्गन्ध चली जाती है। पायरिया जैसी समस्या में भी यह खासा कारगर साबित होती है। मुख रोगों व छालों में तुलसी क्वाथ से कुल्ला करें एवं दंतशूल में तुलसी की जड़ का क्वाथ बनाकर उसका कुल्ला करें।

मूत्र कृच्छ (डिसयूरिया-पेशाब में जलन एवं कठिनाई) में तुलसी बीज 6 ग्राम रात्रि 150 ग्राम जल में भिगोकर इस जल का प्रात: प्रयोग करते हैं। किडनी की पथरी में तुलसी की पत्तियों को उबालकर बनाया गया जूस (तुलसी के अर्क) शहद के साथ नियमित 6 माह सेवन करने से पथरी मूत्र मार्ग से बाहर निकल जाता है। तुलसी के रस में शहद मिलाकर नियमित थोड़े दिनों तक लेते रहने से मेधा शक्ति बढ़ती है। यह एक प्रकार का टॉनिक भी है। तुलसी के पत्तों का दो तीन चम्मच रस प्रात: खाली पेट लेने से स्मरण शक्ति बढ़ती है। खाना बनाते समय सब्जी पुलाव आदि में तुलसी के रस का छींटा देने से खाने की पौष्टिकता व महक दस गुना बढ़ जाती है। तुलसी रक्त अल्पता के लिए रामबाण दवा है, नियमित सेवन से हीमोग्लोबीन तेजी से बढ़ता है स्फूर्ति बनी रहती है।

पर्यावरणीय महत्व :

तुलसी वातावरण को भी स्वच्छ बनने में भी मदद करती है। तुलसी के रस में प्रोटोजोआ और मच्छर को नष्ट करने की शक्ति पाई जाती हैं। हमें अपने घर के आगे तुलसी का एक पौधा अवश्य लगाने चाहिए। ताकि वहां मच्छर न हो और हमें रोगों का सामना न करना पड़े। जिस घर में तुलसी का पौधा लहलहा रहा हो वहां आकाशीय बिजली का प्रकोप नहीं होता। तुलसी का पौधा जहां लगा हो वहां आसपास सांप-बिच्छू जैसे जहरीले जीव नहीं आते। तुलसी का पौधा दिन-रात आक्सीजन देता है, प्रदूषण दूर करता है। तुलसी के पौधे का वातावरण में अनुकूल प्रभाव पड़ता है।

तुलसी उत्पादन से आजीविका :

तुलसी एक रामबाण औषधि है। यह प्रकृति की अनूठी देन है। इसकी जड़, तना, पत्तियां तथा बीज उपयोगी होते हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन के द्वारा प्रेषित तथ्यों के अनुसार, आज भी विश्व की 80 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या स्वास्थ्य लाभ के लिए पारम्परिक चिकित्सा पद्धति पर निर्भर है। तुलसी तथा इस प्रकार के अन्य औषधीय एवं सगन्ध पौधे मुख्य रूप से ग्रामीण क्षेत्रों के व्यक्तियों के लिए महत्वपूर्ण आजीविका के साधन के रूप में प्रयुक्त किये जा सकते हैं। भारत सरकार के द्वारा इस प्रकार के पौधों की कृषि को प्रोत्साहन देने के लिए अनेक संस्थान स्थापित किए गए हैं तथा विशेष मदों में धन प्रदान किया जाता है। इस पौधों से प्राप्त सुगन्धित तेल का भी व्यापार किया जा सकता है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि तुलसी न केवल धार्मिक बल्कि वैज्ञानिक व व्यावसायिक रूप से भी अति महत्वपूर्ण है।

प्राकृतिक प्रतिआक्सीकारकों की चिकित्सीय एवं पोषण-भेषजीय उपादेयता

डॉ. वाई. सी. त्रिपाठी, श्री निशात अन्जुम, श्री विकास
वन अनुसन्धान संस्थान, देहरादून

प्रतिऑक्सीकारक :

अनेक यौगिक ऑक्सीजन से अभिक्रिया के परिणामस्वरूप द्वारा स्वत: ऑक्सीकृत हो जाते हैं। इस रासायनिक क्रिया के फलस्वरूप उन पदार्थों में कुछ अवांछनीय गुणधर्म आ जाते हैं, जो उनको साधारण उपयोग के लिये अनुपयुक्त कर देते हैं। स्वत: ऑक्सीकरण की क्रिया चार चरणों में संपन्न होती है। प्रारंभिक चरण यानि पहले तथा दूसरे चरण जो बहुत ही मंद गति से घटित होते हैं, उसे प्रेरण अवधि (इंडक्शन पीरीयड) कहते हैं। तीसरा चरण श्रृंखला अभिक्रिया के आधार पर ऑक्सीकरण अभिक्रिया को त्वरित गति प्रदान करता है। चौथा और अंतिम चरण ह्रासोन्मुखी होता है, जिसमें आक्सीकृत पदार्थो के गुण-धर्म में अवांछनीय परिवर्तन आ जाता है। इस प्रकार के अनेक परिवर्तनों का बोध साधारण इंद्रियों द्वारा हो जाता है। स्वत: ऑक्सीकरण प्रक्रिया में श्रृंखलावाहक का काम मुक्त मूलक (फ्री रेडिकल्स) करते हैं, जो बहुत ही सक्रिय होते हैं। स्वत: ऑक्सीकृत होने वाले अणु में जो सबसे निर्बल कार्बन-हाइड्रोजन बंध होता है उसी के टूटने से ये मूलक बनते हैं। अत: इस प्रकार के पदार्थ में आसानी से निकल जानेवाले एक हाइड्रोजन परमाणु की उपस्थिति आवश्यक है। इसके अतिरिक्त उसमें एक द्विबंध भी होना चाहिए, जिसके साथ मुक्तमूलक संयुक्त हो सके।

प्रतिऑक्सीकारक या प्रतिउपचायक (एंटीआक्सीडेंट्स) वे यौगिक हैं जिनको अल्प मात्रा में दूसरे पदार्थो में मिला देने से वायुमडल के ऑक्सीजन के साथ उनकी अभिक्रिया का निरोध हो जाता है। इन यौगिकों को ऑक्सीकरण निरोधक तथा स्थायीकारी भी कहते हैं। अर्थात प्रति-आक्सीकारक वे अणु हैं, जो अन्य अणुओं को ऑक्सीकरण से बचाते हैं या अन्य अणुओं की आक्सीकरण प्रक्रिया को धीमा कर देते हैं। ऑक्सीकरण एक प्रकार की रासायनिक क्रिया है जिसके द्वारा किसी पदार्थ से इलेक्ट्रॉन या हाइड्रोजन, ऑक्सीकारक एजेंट को स्थानांतरित हो जाते हैं। प्रतिऑक्सीकारक अधिकांश कार्बनिक यौगिक, जैसे ऐरोमेटिक एमीन, फ़िनोल, एमीनो फ़िनोल, प्रतिस्थापित फिनोल, फेनिलेनेडिआमाइन के व्युत्पन्न आदि होते हैं, जो सरलता से हाइड्रोजन परमाणु निकालकर मुक्तमूलक में परिणत हो सकें और श्रृंखलित क्रिया का प्रसारण कर सकें। प्रतिऑक्सीकारक अपना कार्य करते समय स्वत: नष्ट हो जाते हैं या स्वत: ऑक्सीकृत होनेवाले पदार्थ इनको क्रमश: नष्ट कर देते हैं। प्रतिआक्सीकारकों का उपयोग चिकित्सा विज्ञान तथा उद्योगों में व्यापक रूप से होता है।

चिकित्सा विज्ञान में प्रतिआक्सीकारक :

यद्यपि आक्सीकरण अभिक्रियाएँ जीवन के लिए अति महत्वपूर्ण हैं, तथापि वे हानिकारक भी हो सकती हैं। ऑक्सीकरण अभिक्रिया से मुक्तमूलक उत्पन्न हो सकते हैं, जिनके द्वारा कोशिकाओं को क्षति पहुंचानें वाली श्रृंखला अभिक्रिया आरंभ हो जाती है। प्रतिआक्सीकारक पदार्थ स्वयं इन मुक्त मूलकों से ऑक्सीकृत हो जाते हैं, जिससे श्रृंखला अभिक्रिया को रोक कर कोशिकाओं पर होने वाली इन श्रृंखला अभिक्रियाओं को रोक देते हैं। अतएव प्राय: एंटीऑक्सीडेंट जैसे थायोल, एस्कॉर्बिक अम्ल या पॉलीफिनॉल आदि रिड्यूसिंग एजेंट्स होते हैं। पादपों एवं जन्तुओं में विविध प्रकार के प्रतिआक्सीकारकों के निर्माण एवं संग्रह की जटिल व्यवस्था पायी जाती है। इनमें ग्लुटाथिओनए विटामिन-सी, विटामिन-ई, एंजाइम (जैसे कैटालेज, सुपराक्साइड, डिस्मुटेज तथा विविध प्रकार के पेराक्सीडेज) आदि आते हैं। प्रतिआक्सीकारकों की अपर्याप्त मात्रा होने पर या प्रतिआक्सीकारक एंजाइमों के नष्ट होने से आक्सीकर तनाव पैदा होता है, जिससे कोशिकाओं को क्षति हो सकती है या उनकी मृत्यु हो सकती है। ऐसा समझा जा रहा है कि ऑक्सीकर तनाव ही अनेकों रोगों का कारण है। इसलिए भेषजगुण विज्ञान (फार्माकोलोजी) में प्रतिआक्सीकारकों का गहन अध्ययन किया जाता है। विशेषत: आघात तथा तंत्रिका-अपभ्रष्टी (न्यूरोडिजेनेरेटीव) रोगों के लिए यह बहुत महत्वपूर्ण हैं। ऑक्सीकर तनाव रोगों का कारण भी है और परिणाम भी।

पोषण-भेषजीय प्रासंगिकता :

खाद्य अनुसंधानों से प्रमाणित हुआ है कि भोजन के रासायनिक अवयवों और स्वास्थ्य के बीच सीधा सम्बंध है, जिसकी स्वास्थ्यवर्द्धन में अहम् भूमिका हैं। ये रासायनिक अवयव पौधे, भोजन और सूक्ष्मजैविक स्रोतों से प्राप्त होते हैं, और दीर्घकालीन स्वास्थ्य के लिए महत्वपूर्ण औषधीय लाभ प्रदान करते हैं। इन पौष्टिक-औषधीय रसायनों के उदाहरणों में प्रोबायोटिक्स, ऑक्सीकरण रोधी और अन्य फाइटोकेमिकल्स शामिल हैं। प्रतिआक्सीकारकों का पौष्टिक-औषधीय (न्यूट्रास्यूटीकल), पूरक आहार (फूड सप्लीमेंट) एव कार्यात्मक खाद्य (फंकशनल फूड) उत्पादों के औद्योगिक उत्पादन में खूब प्रयोग किया जा रहा है।

पौष्टिक-औषध उत्पाद :

पौष्टिक-औषधीय उत्पादों को कई वर्षों तक वैकल्पिक औषधि माना जाता था। खाद्यों के औषधीय लाभों की खोज का इतिहास काफी पुराना है। आधुनिक अनुसंधानों से ज्ञात हुआ है कि रोगों के उपचार और रोकथाम के लिए खाद्य पदार्थों का उपयोग प्रभावशाली ढंग से औषधि के रूप में किया जा सकता है। पौष्टिक-औषध (न्यूट्रास्युटिकल), उन खाद्यों या खाद्य उत्पादों को कहते है, जो बीमारी की रोकथाम एवं उपचार सहित स्वास्थ्य एवं चिकित्सीय लाभ प्रदान करता हैं। पौष्टिक-औषध (न्यूट्रास्युटिकल) शब्द को वास्तव में न्यू जर्सी के क्रॉफोर्ड स्थित फाउंडेशन ऑफ इन्नोवेशन मेडिसिन (एफ.आई.एम.) के संस्थापक एवं अध्यक्ष डॉ. स्टीफन एल. डीफेलिस ने परिभाषित किया था। एक अन्य अंतर्राष्ट्रीय संस्था 'हेल्थ कनाडा' ने न्यूट्रास्युटिकल को खाद्य पदार्थों से पृथक एक परिष्कृत उत्पाद के रूप में परिभाषित किया है जो शारीरिक लाभ प्रदान करने की क्षमता के साथ ही साथ चिरकालिक बीमारी के विरुद्ध सुरक्षा प्रदान करता है। ऐसे उत्पाद पृथक्त पोषक तत्वों, आहार पूरकों और विशेष आहारों से लेकर आनुवंशिक रूप से तैयार किये गए खाद्य पदार्थ, जड़ी-बूटी संबंधी उत्पाद और प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थ हो सकते हैं। हाल के वर्षों में पौष्टिक-औषधीय पदार्थों के कोशिका-स्तरीय महत्वपूर्ण खोजों के माध्यम से वैकल्पिक चिकित्साओं के संबंध में नैदानिक अध्ययनों से प्राप्त जानकारी को उत्तरदायी चिकित्सा कार्यप्रणाली के रूप में संघटित करने और उसका मूल्यांकन करने के लिए मॉडल विकसित किया गया है।

ऑक्सीकरण-रोधी पादप रसायनों में लाल अंगूर से प्राप्त रेस्विराट्रॉल, नीबू वंश के फलों, चाय और चॉकलेट्स में पाया जाने वाला फ्लैवनॉयड, जामुन में पाए जाने वाले एन्थोसाइनिन्स, आदि शामिल हैं। घुलनशील आहारीय रेशेदार उत्पाद, जैसे कि साइलियम के बीज की भूसी रक्त में कोलेस्ट्रॉल की मात्रा कम करती है। धमनी के बेहतर स्वास्थ्य के लिए सोया (आइसोफ्लैवनॉयड्स) कारगर होता है। सन के बीजों से प्राप्त अल्फा-लाइनोलेनिक अम्ल हृदय और रक्तवाहिनी संबंधी रोग का जोखिम कम करता है। अध्ययन बताते हैं कि ब्रोकोली से कैंसर की रोकथाम में मदद मिल सकती है। इसके अलावा बहुत से वानस्पतिक एवं जड़ी-बूटी संबंधी सार-तत्व जैसे कि जिनसेंग, लहसुन का तेल आदि को पौष्टिक-औषध (न्यूट्रास्युटिकल) के रूप में विकसित किया गया है। पौष्टिक-औषधियों का उपयोग अक्सर पोषक तत्व संबंधी पूर्व मिश्रणों या भोजन में पोषक तत्व संबंधी प्रणालियों और औषधि-निर्माण उद्योगों में किया जाता है। पौष्टिक-औषध आधारित अनुसंधानों से प्रमाणित है कि भोजन में पाए जाने वाले ये रासायनिक पदार्थ प्रभावशाली ढंग से प्रसंस्कृत किये जाने एवं सही ढंग से उपयोग किये जाने पर काफी कारगर सिद्ध होते हैं।

पौष्टिक-औषधीय पदार्थों का वर्गीकरण :

पौष्टिक-औषधीय (न्यूट्रास्युटिकल्स) उत्पाद आम तौर पर बीमारियों की रोकथाम करने, स्वास्थ्य में सुधार करने, उम्र बढ़ने की प्रक्रिया में विलंब करने, और जीवन प्रत्याशा में वृद्धि करने में प्रभावी भूमिका निभाते हैं। औषधीय पदार्थों (फार्मास्यूटिकल्स) के समान ही पौष्टिक-औषधियों (न्यूट्रास्युटिकल्स) की प्रभावकारिता का हिस्सा कूटभेषज प्रभाव का कारण बताया जाता है। इस शब्द का प्रयोग अक्सर बदलती उपयोगिताओं और प्रभावकारिता वाले उत्पादों के विपणन हेतु किया जाता है। पौष्टिक-औषध और संबंधित उत्पादों कों उनके श्रोत एवं प्रभावकारिता के आधार पर पारिभाषित एवं वर्गीकृत किया जाता है। सम्पूर्ण एशिया में सदियों से लोक परंपरागत औषधि के रूप में प्रयोग की जा रही प्राकृतिक जड़ी-बूटियों और मसालों के विपरीत,

आधुनिक प्रौद्योगिकी के प्रादुर्भाव के साथ-साथ पौष्टिक-औषध उद्योग का विकास हुआ। सन् 1980 के दशक के दौरान सर्वप्रथम जापान में आधुनिक पौष्टिक-औषध बाज़ार विकसित हुआ। पौष्टिक-औषध की श्रेणी में विविध प्रकार के कई उत्पाद आते हैं।

आहार पूरक :

आहार पूरक, एक ऐसा उत्पाद है जिसमें खाद्य उत्पादों से प्राप्त पोषक तत्व होते हैं, जो द्रव या कैप्सूल के रूप में संकेंद्रित होते हैं। आहार पूरक स्वास्थ्य और शिक्षा अधिनियम (डी एस एच ई ए) 1994 के अनुसार, आहार पूरक मुंह से लिया जाने वाला एक उत्पाद है, जिसमें एक ''आहारीय घटक'' होता है, जिसका उद्देश्य आहार को पूरा करना है। इन उत्पादों के ''आहारीय घटकों'' में विटामिन, खनिज लवण, जड़ी-बूटियां या अन्य वानस्पतिक पदार्थ, अमीनो अम्ल, और एन्जाइम्स, अंग ऊतक, ग्रंथियां, चयापचयी पदार्थ जैसे अवयवो के साथ-साथ आहार-संबंधी पूरक सार तत्व या संकेंद्रित पदार्थ भी हो सकते हैं। आहार पूरकों के अंतर्गत अभिकर्मक, सर्पोट न्यूट्रीशन, तथा वजन में कमी एवं आहार प्रतिस्थापक जैसे विशिष्ट गुणों से युक्त उत्पाद आते हैं। विभिन्न प्रकार की बीमारियों के उपचार के लिए अनेक आहारीय पूरक विकसित किये गये हैं। अनुसंधानकर्ताओं ने पाया है कि निम्नतम रूप से परिष्कृत अनाज, मधुमेह के आपतन को कम कर सकते हैं तथा जठरांत्र कैंसर में लाभदायक होते हैं। प्रतिआक्सीकारकों से परिपूर्ण खाद्य पादपों का पूरक आहार के रूप में प्रयोग स्वास्थ्य के लिए लाभकारी पाया गया है। ऐसे उत्पाद् टैबलेट, कैप्सूल, सॉफ्ट जेल, जेल कैप, द्रव पदार्थ, या पाउडर के रूप में उपलब्ध होते हैं। आहारीय पूरकों को बाज़ार में बेचने से पहले अमेरिकी खाद्य एवं औषधि प्रशासन (एफडीए) से अनुमोदन प्राप्त नहीं करना पड़ता है।

कार्यात्मक खाद्य पदार्थ :

कार्यात्मक खाद्य पदार्थ (फंक्शनल फूड) वे सामान्य खाद्य पदार्थ है जिन्हें पूर्ण रूप से पोषण संबंधी प्रभाव के अतिरिक्त चिकित्सीय या शारीरिक लाभ प्रदान करने के लिए उनमें आवश्यक अवयवों या घटकों को मिलाकर समृद्ध या दृढ़ीत किया जाता है। कार्यात्मक खाद्य पदार्थो का उद्देश्य, द्रव या कैप्सूल रूप में निर्मित आहार संबंधी पूरकों के बजाय सामान्य खाद्य पदार्थों को उनकी प्राकृतिक स्थिति के समान अवस्था वाले जैव-सक्रिय अवयवों से समृद्ध करना है। इस प्रक्रिया को पोषणीकरण कहा जाता है, जो प्रसंस्कृत किये जाने से पहले भोजन में समान स्तर वाले पोषक पदार्थ की मात्रा को वापस लौटाती है। ऐसे पोषणीकृत आहार शरीर की जैवक्रियाशीलता को या तो सुधारते हैं या फिर उसकी कुशलता को और बढ़ाते हैं। आधुनिक समय में खाद्य पदार्थों की अन्य फिजियोलॉजिकल उपयोगिता, जैसे एंटीऑक्सीडेंट्स, प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाने, पाचन-तंत्र को सुधारने और कैंसर को रोकने वाले तत्वों पर भी ध्यान दिया जाने लगा है। कभी-कभी अतिरिक्त संपूरक पोषक तत्व (जैसे दूध में विटामिन डी) मिलाये जाते हैं।

लगभग 2500 साल पहले पूर्व के पारंपरिक ज्ञान के क्षेत्र में कहा जाता था कि 'भोजन को औषधि और औषधि का भोजन' होना चाहिए। पूर्व में ये फंक्शनल फूड खाद्य संस्कृति का हिस्सा रहे हैं। पारंपरिक चीनी संस्कृति में खाद्य पदार्थों को औषधि की तरह इस्तेमाल किया जाता रहा है। प्राचीनकाल से ही चीनी भोजन को निरोधात्मक और उपचारात्मक दोनों तरह से उपयोग कर रहे हैं। उपभोक्ताओं की रुचि इस तरह के खाद्यों में 20 वीं शताब्दी के अंत में तब शुरू हुई, जब उनमें अच्छी और स्वस्थ जिंदगी को जीने की अवधारणा ने जन्म लिया। जापान में सभी कार्यात्मक खाद्य पदार्थों को कैप्सूल, टिकिया, या चूर्ण की बजाय अपने प्राकृतिक रूप उपस्थिति, बीमारी की रोकथाम या नियंत्रण करने में एक जैविक प्रक्रिया को नियंत्रित करने की क्षमता तथा आहार के रूप में लगभग प्रतिदिन ग्रहणीय योग्य होने जैसे तीन प्रमुख निर्धारित मानकों पूरा करना आवश्यक होता है।

चिकित्सीय खाद्य पदार्थ :

चिकित्सीय खाद्य पदार्थों का उद्देश्य विशिष्ट बीमारियों से ग्रसित रोगियों का निदान किये जाने के क्रम में कुछ पोषण संबंधी आवश्यकताओं को पूरा करना होता है। इसके लिए चिकित्सीय मूल्यांकन के द्वारा मान्य वैज्ञानिक सिद्धांतों के आधार पर विशिष्ट पोषण संबंधी आवश्यकताएँ स्थापित की जाती हैं। चिकित्सीय खाद्य पदार्थों को मुख या नली संभरण के माध्यम से अंतर्ग्रहण किया जा सकता है। उपभोक्ताओं को

चिकित्सीय खाद्य पदार्थ बिना नुस्खे के प्राप्त नहीं होता है। एफ.डी.ए के अनुसार ऐसे खाद्य पदार्थों को चिकित्सक की देख-रेख में आतंरिक रूप से प्रयोग करने के लिए तैयार किया जाता है, जिसका उद्देश्य किसी बिमारी या स्थिति का विशिष्ट आहार संबंधी प्रबंधन है। ऐसे खाद्य पदार्थों के सेवन से आनुवांशिक तथा उन जैविक कारकों को नियंत्रित किया जा सकता है, जिनकी वजह से गंभीर बीमारियां हो सकती हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार, वर्ष 2008 में हुई मौत के 63 फीसदी मामलों में गैर-संचारी गंभीर बीमारियाँ जैसे कॉडियोवैस्कुलर डिजीज, कैंसर के कुछ प्रकार, टाइप-2 मधुमेह और मोटापा आदि कारण रहा था। इसके लिए जिम्मेवार वह आहार था, जिसमें शरीर के लिए आवश्यक तत्वों की मात्रा बहुत ही कम थी। एक अनुसंधान रिपोर्ट के अनुसार, इन खाद्य पदार्थों में पाए जाने वाले एंटीऑक्सीडेंट एवं अन्य सक्रिय मूल उन कारकों से सीधा मुकाबला करते हैं, जिनकी वजह से कोशिकाओं को नुकसान पहुंचता है। एलर्जी एवं दमा की स्थिति में प्रयुक्त चिकित्सीय खाद्य पदार्थों में मुख्यत: बोरेज पौधे के बीजों से प्राप्त गामा-लिनोलेनिक एसीड (लघु श्रृँखला ओमेगा-6-वसा अम्ल) तथा मछली से प्राप्त इकोसेपेंटेनोइक एसीड (ओमेगा-3-बहुअसंतृप्त वसा अम्ल) होता है, जो प्रतिरक्षी कोशिकाओं द्वारा उत्पन्न सूजन के लिये जिम्मेवार ल्यूकोट्राइन्स को कम करता है। मधुमेह प्रबंधन में प्रयुक्त ऐसे खाद्यों में मंद गति से पचने वाले कार्बोहाइड्रेट्स होते हैं, जो रक्त में शर्करा के स्तर को बढ़ने से रोकते हैं। एमीनो एसीड्स से परिपूर्ण खाद्य पदार्थ पाचन एवं अवशोषण में व्यतिक्रम एवं फूड एलर्जी के प्रबंधन में सहायक होते हैं। इसी प्रकार, चयापचयी क्रियायों में व्यतिक्रम के सुधार हेतु ग्लूटामिन से परिपूर्ण खाद्य पदार्थ उपयोगी होते हैं।

विनियमन :

विभिन्न पौष्टिक-औषधीय उत्पादों या आहारीय पूरक पदार्थों के बीच मानकों, क्रियाशीलता एवं प्रभावकारिता के आधार पर अंतर पाया जाता है, जिससे इन उत्पादों का निरीक्षण व विनियमन की प्रणाली स्पष्ट नहीं है। इस अस्पष्ट विनियामक निरीक्षण के अधीन, पौष्टिक-औषधीय पदार्थों का उत्पादन करने वाली वैध कंपनियाँ अपने निर्माण संबंधी मानकों, उत्पादों और उपभोक्ता संबंधी लाभों को सही साबित करने के लिए और आहारीय पूरक पदार्थों से अपने उत्पादों का भेद बताने के लिए कथित रूप से विश्वसनीय वैज्ञानिक अनुसंधान के निष्कर्षों का सहारा लेती हैं। उद्योगों, व्यावसायिक संगठनों, शिक्षाविदों और स्वास्थ्य नियामक अभिकरणों द्वारा पौष्टिक-औषध की परिभाषा एवं मानकों के लिए कानूनी और वैज्ञानिक मापदंड निर्धारण हेतु विशिष्ट प्रयास किये गये हैं। परंतु, इन अंतर्राष्ट्रीय प्रयासों के बावजूद संयुक्त राज्य अमेरिका में यह शब्द एफडीए द्वारा विनियमित नहीं है। एफडीए द्वारा अभी भी सभी पदार्थों के लिए उनकी प्रभावोत्पादकता, विनिर्माण प्रक्रिया, सहायक वैज्ञानिक अनुसंधान और स्वास्थ्य संबंधी लाभों में भेद किये बिना एक आम शब्द "आहारीय पूरक" का इस्तेमाल किया जाता है। हाँलाकि, उपभोक्ताओं को शिक्षित करने, उत्पादों एवं निर्माताओं के लिए औद्योगिक एवं वैज्ञानिक मानकों को विकसित करने, और अन्य उपभोक्ता संरक्षण संबंधी भूमिकाओं में अमेरिकन न्यूट्रास्युटिकल एसोसिएशन (अमेरिकी पौष्टिक-औषध संघ) फूड एण्ड ड्रग एडमिनिस्ट्रेशन (खाद्य एवं औषधि प्रशासन) के साथ मिलकर काम करता है।

सन् 2005 के दौरान राष्ट्रीय अकादमियों (नेशनल ऐकडमीज़) के इंस्टिट्यूट ऑफ़ मेडिसिन और नेशनल रिसर्च काउंसिल ने आहार संबंधी पूरकों का मूल्यांकन करने के लिए संघीय खाद्य एवं औषधि प्रशासन के लिए बेहतर एवं प्रभावी प्रणाली विकसित करने हेतु एक स्वतन्त्र एवं निष्पक्ष समिति जिसे ब्लू रिबन कमिटी के नाम से जाना जाता है, की स्थापना की। हालांकि, इस कमिटी द्वारा सुझाया संशोधित मापदण्ड भी पौष्टिक-औषधियों और आहार पूरकों के बीच स्पष्ट अंतर करने में पूर्णतया सफल नहीं है।

पौष्टिक-औषधीय खाद्य पदार्थ, औषधीय उत्पादों की तरह एक समान परीक्षण और विनियमों के अधीन नहीं होते हैं। आहारीय पूरकों को बाज़ार में बेचने से पूर्व अमेरिकी खाद्य एवं औषधि प्रशासन (एफ.डी.ए.) का अनुमोदन आवश्यक नहीं है। यद्यपि ये पूरक खाद्य पदार्थ स्वास्थ्य संबंधी लाभों को प्रदान करने का दावा तो करते हैं तथापि इन उत्पादों की पैकिंग के ऊपर आम तौर पर इस आशय का एक लेबल लगा होता है कि इस उत्पाद् की प्रभावकारिता से सम्बंधित कथनों का मूल्यांकन खाद्य एवं औषधि प्रशासन के द्वारा नहीं किया गया है। इस उत्पाद का उद्देश्य रोग की पहचान करना, उपचार

करना, या किसी प्रकार की बीमारी को रोकना नही है।

एक पौष्टिक-औषधीय उत्पाद का अवशोषण दर एवं मान्य जैव उपलब्धता के आधार पर प्रभावकारी उत्पाद चयन में आने वाली मुख्य चुनौतियों में से एक है। पोषक तत्वों की जैव उपलब्धता प्राकृतिक अवस्था में ग्रहण किये जाने वाले खाद्य पदार्थों में अधिक होना चाहिए। अप्रसंस्कृत खाद्य पदार्थों में सभी खाद्य पदार्थों का रासायनिक परिवर्तन नहीं होता है और प्रभावकारिक ढ़ंग से उनका पाचन नहीं होता है। बुरे शोषण दरों वाले पौष्टिक-औषधियों के परिणामस्वरूप पोषक तत्व शरीर को किसी प्रकार का पोषण संबंधी या चिकित्सात्मक लाभ प्रदान किये बिना ही शरीर से बाहर निकल जाते हैं।

विश्व बाज़ार में पौष्टिक-औषधीय उत्पादों की गुणवत्ता से संबंधित कई महत्वपूर्ण विषय हैं। अंतर्राष्ट्रीय बाज़ार में पौष्टिक-औषधियों (न्यूट्रास्युटिकल्स) के उत्पादक कार्बनिक या विदेशज घटकों के उपयोग करने का दावा करते हैं, फिर भी विनियमन की कमी से उत्पादों की प्रभावकारिता और सुरक्षा जोखिम में पड़ सकती है। अंतर्राष्ट्रीय बाज़ार में न्यूट्रास्युटिकल्स के निर्माता द्वारा कार्बनिक या विदेशज घटकों के उपयोग करने का दावा अक्सर किया जाता है। परंतु, विनियमन के मानदंडों के अभाव में उत्पादों की प्रभावकारिता एवं सुरक्षा अनिश्चित होती है। अधिक लाभार्जन के लालच में इन उत्पादों का निर्माण करने वाली कंपनियां कम गुणवत्ता वाले और अप्रभावकारी उत्पादों का निर्माण कर सकती हैं। भारत में पोषण-औषधीय उत्पादों की सीधी बिक्री तथा अन्य सेवा उन्मुख उद्योगों का प्रतिनिधित्व करने के लिए भारतीय स्वास्थ्य एवं आहारीय पूरक संघ (इंडियन हेल्थ एंड डायटरी सप्लीमेंट एसोसिएशन) का सृजन किया गया है। प्रभावी गुणवत्ता-नियंत्रण का अभाव न्यूट्रास्यूटिकल उत्पादों के लिए प्रबल चिंता का विषय है। अतएव, सम्भावनाओं से परिपूर्ण इस क्षेत्र में गुणवत्ता नियंत्रण पर ध्यान अत्यंत आवश्यक है।

बाजार और मांग :

सम्पूर्ण एशियाई देशों में सदियों से लोक परंपरागत औषधि के रूप में प्रयोग की जा रही प्राकृतिक खाद्य वनस्पतियों और मसालों के विपरीत, न्यूट्रास्युटिकल उद्योग का काफी विकास हुआ है। अन्य चिकित्सीय अभिकारकों की तुलना में कम पार्श्व-प्रभाव वाले वांछित चिकित्सीय परिणाम प्राप्त करने के एक प्रयास के रूप में पौष्टिक-औषधीय पदार्थों के उपयोग से अपार आर्थिक सफलता प्राप्त हुई है। सन् 1980-1990 के दौरान जापान में आधुनिक न्यूट्रास्युटिकल उत्पादों का बाजार काफी बढ़ा। लगभग दो-तिहाई अमेरिकी कम से कम एक प्रकार का पौष्टिक-औषधीय स्वास्थ्य उत्पाद तो लेते ही हैं। औषधियों की तुलना में पोषण-भेषजीय पदार्थों की खोज और उत्पादन, औषधि-निर्माण और जैव-प्रौद्योगिकी कंपनियों की प्राथमिकता बन गई है। पौष्टिक-औषधियों की खोज करने के लिए व्यापक संसाधनों का उपयोग करने वाली औषधि-निर्माण और जैव-प्रौद्योगिकी संबंधी कंपनियों में मोनसैंटोख, सेंट लुईस; अमेरिकन होम प्रोडक्ट्स, मैडिसन, न्यू जर्सी; ड्यूपॉन्ट विलल्मग्टन; एबॉट लेबोरेटरीज, वार्नर-लैम्बर्ट, मॉरिस प्लेन्स, न्यू जर्सी; जॉन्सन एण्ड जॉन्सन, न्यू ब्रून्सविक, न्यू जर्सी; नोवार्टिस, बेसल, स्विटज़रलैंड; मेटाबॉलेक्स, हेवार्ड, सीए; जेनज़ाइम ट्रांसजेनिक, पीपीएल; थेराप्यूटिक्सए एण्ड इंटरन्यूरॉन, लेक्सिंगटनए केवाई, आदि। अमेरिका में पौष्टिक-औषध (न्यूट्रास्युटिकल) उद्योग लगभग 86 अरब डॉलर का है। यूरोप में यह आंकड़ा थोड़ा अधिक है तथा जापान में यह देश के 6 बिलियन डॉलर की कुल वार्षिक खाद्य बिक्री के लगभग एक-चौथाई को दर्शाता है। जापान की 47 प्रतिशत जनसंख्या पौष्टिक-औषध (न्यूट्रास्युटिकल) का उपयोग करती हैं।

संयुक्त राज्य अमेरिका में पौष्टिक-औषध के विकास का एक संभावित कारण नागरिकों के औसत उम्र में निरंतर हो रही वृद्धि है, इसलिए जनसंख्या स्वास्थ्य और तंदुरुस्ती पर अपना ध्यान अधिक केंद्रित कर रही है। लगभग 400 मिलियन नागरिकों की अनुमानित जनसंख्या के आधार पर 21 वीं सदी के मध्य तक 50 वर्ष से अधिक की उम्र के अमेरिकी व्यक्तियों की संख्या लगभग 142 मिलियन हो सकती है। पौष्टिक-औषध उत्पादों पर लोगों की निर्भरता और उनकी बढ़ती हुयी उपलब्धता से स्पष्ट है कि बाज़ार का विकास स्थिर बना रहेगा। विशिष्ट वित्तीय आंकड़ों के बिना भी व्यापार संबंधी रिपोर्ट निरंतर दर्शाते हैं कि पौष्टिक-औषधीय उत्पादों के बाज़ार के आकार में निरंतर वृद्धि हो रही है।

पारम्परिक ऊर्जा का पर्यावरण हितैषी विकल्प: पवन ऊर्जा

डॉ. राजेश कुमार मिश्रा
उष्णकटिबन्धीय वन अनुसन्धान संस्थान, जबलपुर

मानव विकास का इतिहास उपलब्ध ऊर्जा संसाधनों एवं उनके विकास का इतिहास रहा है। आज मानव सभ्यता विकास के जिस सोपान पर खड़ी है, वहां तक पहुंचने में जीवाश्म ऊर्जा संसाधनों की निर्णायक भूमिका रही है। परंतु, दुर्भाग्यवश हमारी पृथ्वी पर इन संसाधनों के सीमित भंडार हैं तथा हमारे वर्तमान उपभोग की दर से इन भंडारों के अगले शताब्दी तक समाप्त हो जाने की आशंका है। इसके अलावा, जीवाश्म ईंधन को जलाने के कारण उत्पन्न होने वाले अवशेषों, जिनमें ग्रीन हाउस प्रभाव उत्पन्न करने वाली गैसें शामिल हैं, से हमारे पारिस्थितिक तंत्र को अपूरणीय क्षति हो रही है, जिसके कारण पृथ्वी पर जीवन के अस्तित्व पर ही संकट के बादल मंडराने लगे हैं। इस परिस्थिति से पार पाने हेतु हमारा ध्यान ऊर्जा के ऐसे स्रोतों की ओर आकृष्ट हुआ है जो न केवल स्वच्छ हैं वरन नवीकरणीय तथा कुछ मायनों में अविनाशी भी हैं। इन सारे स्रोतों में पवन ऊर्जा एक विशिष्ट स्थान रखती है। सभ्यता के आरंभ से ही मनुष्य इसका उपयोग ऊर्जा के एक महत्वपूर्ण स्रोत के रूप में करता आ रहा है। पाँच हजार ईसा पूर्व मिस्र सभ्यता में नील नदी पर नावों को चलाने के लिए पवन ऊर्जा का उपयोग होता था। लगभग दो हजार ई॰ पू॰ आते-आते चीन में कुओं से पानी निकालने में तथा मध्य-पूर्व एशिया एवं ईरान में अनाज पीसने के लिए पवनचक्कियों का उपयोग प्रारंभ हो चुका था। 11वीं शताब्दी तक मध्य-पूर्व एशिया में पवन ऊर्जा का उपयोग अन्न उत्पादन तथा अनेक मिलते-जुलते कार्यों में व्यापक रूप से होने लगा था। 11वीं सदी में ही पवन उर्जा के उपयोग का

विचार अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के जरिए यूरोप पहुंचा, जहां डच लोगों ने इसकी तकनीक में व्यापक सुधार किए और तालाबों से पानी के दोहन तथा डेल्टा से कीचड़ की सफाई में पवनचक्कियों का उपयोग किया गया। परवर्ती शताब्दियों में यूरोपीय अन्वेषण दलों के साथ-साथ पवनचक्कियों के द्वारा पवन ऊर्जा के दोहन की तकनीक दुनिया के अनेक हिस्सों में फैल गई। 19वीं सदी में अमेरिका में पवन ऊर्जा का उपयोग अन्न उत्पादन, उद्वहन तथा आरा मशीनों को चलाने में होने लगा था।

थॉमस एल्वा एडिसन द्वारा विद्युत की खोज ने पवन ऊर्जा के उपयोग को एक नया आयाम दे दिया। पवनचक्की से विद्युत उत्पादन की तकनीक के विकास के फलस्वरूप दूर-दराज के गांवों को भी विद्युतीत कर पाना संभव हो गया। बीसवीं सदी के पूर्वार्ध में संयुक्त राज्य अमेरिका पवन ऊर्जा का उपयोग करने वाले अग्रणी देशों में शामिल हो गया। इसी समय केंद्रीय विद्युत ग्रिड से जोडने लायक छोटे पवन ऊर्जा विद्युत संयंत्र भी विकसित कर लिए गए। बीसवीं सदी के उत्तरार्ध में तेल एवं गैस के रूप में ऊर्जा के सस्ते स्रोत उपलब्ध हो जाने के कारण विश्व भर में पवन ऊर्जा सम्बंधी अनुसंधान की गति अत्यंत धीमी पड़ गई। जड़ता की यह स्थिति सातवें दशक में आए विश्व तेल संकट तक बनी रही। इस संकट ने विश्व को ऊर्जा के अन्य स्रोतों को गंभीरता से लेने हेतु विवश कर दिया। अमरीका के नासा ने पवन ऊर्जा का व्यापक व्यावसायिक उपयोग संभव करने के प्रयासों में अग्रणी

भूमिका निभाते हुए कई नई तकनीकें विकसित कीं जिनसे बड़े पैमाने पर विद्युत उत्पादन संभव था। कई देशों द्वारा ऊर्जा के महत्वपूर्ण संसाधन के रूप में इसकी महत्ता स्वीकार करने के कारण परवर्ती दशकों में इसका विकास त्वरित गति से हुआ और वर्तमान शताब्दी के प्रथम दशक के अंत तक यह ऊर्जा के सबसे तेजी से उभरते हुए वैकल्पिक स्रोतों में शामिल हो गया है। भारत में पवन ऊर्जा का विकास नब्बे के दशक में प्रारंभ हुआ। इस क्षेत्र में तुलनात्मक रूप से नवप्रवेशी होने के बावजूद पवन ऊर्जा का उपयोग विद्युत उत्पादन के लिए करने वाले देशों में हमारा स्थान पांचवां है। वर्ष 2013 तक भारत में कुल स्थापित क्षमता 19,051-5 मेगावॉट है जो भारत की कुल क्षमता का 8-5 प्रतिशत भाग है तथा आज हमारे देश के कुल विद्युत उत्पादन का 1-6 प्रतिशत भाग पवन ऊर्जा से प्राप्त होता है। तमिलनाडु पवन ऊर्जा से 7158 मेगावॉट विद्युत उत्पादन कर देश में शीर्ष स्थान पर है तथा उसके बाद गुजरात, महाराष्ट्र का स्थान आता है जिनके उत्पादन क्रमश: 3093 मेगावॉट और 2976 मेगावॉट हैं। भारत सरकार के अपारंपरिक तथा नवीकरणीय ऊर्जा मंत्रालय ने सन् 2017 तक देश में 27,300 मेगावॉट की कुल क्षमता के पवन ऊर्जा आधारित संयंत्रों की स्थापना का महत्वाकांक्षी लक्ष्य रखा है तथा 80 मीटर की ऊंचाई पर 1,02,788 मेगावॉट विद्युत उत्पादन किया जा सकता है। देश के अनेक उपक्रमों ने भी निजी स्तर पर पवन ऊर्जा के दोहन हेतु गंभीर प्रयास किए हैं। तेल एवं प्राकृतिक गैस आयोग ने पवन ऊर्जा का दोहन एक उल्लेखनीय ऊर्जा संसाधन के रूप में करने हेतु सूरजबारी, गुजरात में 51 मेगावॉट का विंड फार्म और पश्चिमी तट से दूर स्थित परिसंपत्तियों के अनेक मानवरहित प्लेटफार्मों की स्थानीय आवश्यकताएं पूरी करने हेतु मध्यम आकार के संयंत्रों की स्थापना करने के साथ-साथ इस महत्वपूर्ण क्षेत्र में अनुसंधान एवं विकास हेतु नई दिल्ली में राजीव गांधी अक्षय ऊर्जा संस्थान की स्थापना भी की है।

पवन ऊर्जा के क्षेत्र में हुए अनुसंधानों के परिणामस्वरूप आज हमारे पास कुछ किलोवॉट क्षमता वाली छोटी पवनचक्कियों से लेकर मेगावॉट क्षमता के विशालकाय संयंत्र उपलब्ध हैं। आज पूरे विश्व में स्थापित संयंत्रों की कुल क्षमता लगभग 282 गिगावॉट है और यह 27 प्रतिशत सालाना की दर से बढ़ रही है। इस उत्पादन में से 4620 मेगावॉट

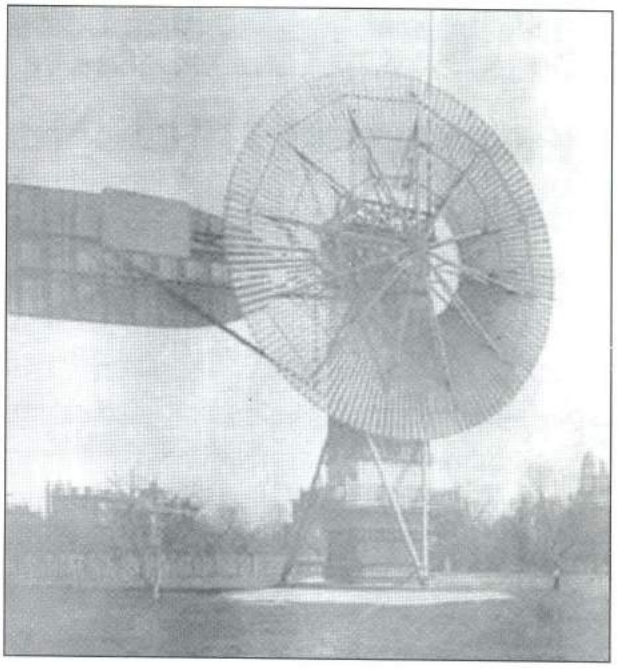

ऑफशोर संयंत्रों से प्राप्त होता है। चीन 75,324 मेगावॉट उत्पादन के साथ विश्व में शीर्ष स्थान पर है तथा संसार के तकरीबन 83 देश विद्युत उत्पादन हेतु पवन ऊर्जा का उपयोग कर रहे हैं। डेनमार्क अपनी आवश्यकता का 25 प्रतिशत पवन ऊर्जा से प्राप्त करता है।

पृथ्वी पर पवन ऊर्जा की व्यापक उपलब्धता तथा पर्यावरण अनुकूलता को देखते हुए वैज्ञानिक इसके दोहन को और सुगम बनाने हेतु गंभीरता से अनुसंधानरत हैं तथा नित नई विधियां खोज रहे हैं। फिलहाल, ऊंचाइयों तथा महासागरों के ऊपर बहने वाली हवा से ऊर्जा का दोहन दुनिया भर में सघन अनुसंधान का विषय है। इसके साथ-साथ पदार्थ विज्ञान एवं तकनीक में हो रही क्रांतिकारी खोजों के परिणामस्वरूप पवनचक्की संयंत्रों की क्षमता में दिन-प्रतिदिन वृद्धि हो रही है। इस तरह पवन ऊर्जा एक विश्वसनीय ऊर्जा संसाधन के रूप में भविष्य में जीवाश्म ऊर्जा का एक भरोसेमंद विकल्प सिद्ध होने की उम्मीद जगाती है।

बहती वायु से उत्पन्न की गई ऊर्जा को पवन ऊर्जा कहते हैं। वायु एक नवीकरणीय ऊर्जा स्रोत है। पवन ऊर्जा बनाने के लिये हवादार जगहों पर पवन चक्कियों को लगाया जाता है, जिनके द्वारा वायु की गतिज ऊर्जा, यान्त्रिक ऊर्जा में परिवर्त्तित हो जाती है। इस यान्त्रिक ऊर्जा को जनित्र की मदद से विद्युत ऊर्जा में परिवर्तित किया जा सकता है। पवन ऊर्जा

का आशय वायु से गतिज ऊर्जा को लेकर उसे उपयोगी यांत्रिकी अथवा विद्युत ऊर्जा के रूप में परिवर्तित करना है।

पवन चक्कियों का इस्तेमाल सदियों से होता आया है, लेकिन बिजली पैदा करने के लिए इसका विकास पिछली सदी में ही हुआ। पवन चक्की कई तरह की होती हैं, लेकिन जो सबसे अधिक प्रचलित हैं उनमें एक विशाल खंभे के ऊपरी भाग पर एक सिलेंडर लगा होता है जिसके मुंह पर 20 से 30 फुट लम्बे और 3 से 4 फुट चौड़े पंखे लगे रहते हैं। जब हवा चलती है तो ये पंखे घूमने लगते हैं। इससे पैदा हुई ऊर्जा को जेनेरेटर द्वारा बिजली में परिवर्तित किया जाता है। हमारे वायुमंडल में इतनी पवन ऊर्जा है जो दुनिया की वर्तमान बिजली खपत से पांच गुना अधिक बिजली पैदा कर सकती है। वर्ष 2008 में दुनिया की कुल बिजली खपत का 1-5 प्रतिशत हिस्सा पवन ऊर्जा से पैदा किया गया। लेकिन इस दिशा में तेज़ी से प्रगति हो रही है और बड़े स्तर पर विंड फ़ार्म बनाए जा रहे हैं।

डेनमार्क में 19 प्रतिशत बिजली इसी तरह पैदा की जाती है। भारत में इस समय पवन ऊर्जा से 9587.14 मेगावॉट बिजली पैदा करने की क्षमता है और 2012 तक इसमें 6000 मेगावॉट की बढ़ोतरी की जाएगी। हवा ऊर्जा का स्वच्छ, प्रदूषण रहित अक्षय स्रोत तो है, लेकिन इससे जुड़ी कुछ समस्याएं भी हैं जैसे ये महंगा है। यह हवा के बहने पर निर्भर है इसलिए हमेशा उपलब्ध नहीं होता। इसके लिए खुले मैदानों, समुद्री किनारों या ऊंचे स्थानों की आवश्यकता होती है जहां हवा का बहाव अधिक हो और ये देखने में अच्छे नहीं लगते।

इसका उपयोग पहली बार स्कॉटलैंड में जुलाई 1887 में किया गया। जिससे विद्युत बनायी गयी। इसके बाद इसका उपयोग वहाँ की एक कंपनी ने 1888 से 1900 तक किया। तब इसे डायनमो के द्वारा विद्युत बनाने के लिए उपयोग किया जाता था। लेकिन यह केवल कुछ ऊर्जा बनाने के ही कार्य में आता था। इसके उपरांत इसे और भी बड़ा बनाया गया और इससे बैटरी को आवेशित कर बाद में उपयोग के लिए बनाया गया था। जिससे रात में इसका उपयोग किया जा सके और विद्युत की अन्य विधि से भी इसमें लागत कम लगने के कारण भी इसका उपयोग किया जाने लगा। परंतु, इसका उपयोग कुछ कम ऊर्जा बनाने के लिए ही किया जा सकता है। इसलिए, उस समय एक निश्चित जगह के लिए इसका उपयोग किया जा रहा था।

सूर्य प्रति सेकंड पचास लाख टन पदार्थ को ऊर्जा में परिवर्तित करता है। इस ऊर्जा का जो थोड़ा सा अंश पृथ्वी पर पहुँचता है। वह यहाँ कई रूपों में प्राप्त होता है। सौर विकिरण सर्वप्रथम पृथ्वी की सतह या भू-पृष्ठ द्वारा अवशोषित की जाती है, तत्पश्चात वह विभिन्न रूपों में आसपास के वायुमंडल में स्थानांतरित हो जाती है। चूँकि पृथ्वी की सतह एक समान या समतल नहीं है, अत: अवशोषित ऊर्जा की मात्रा भी स्थान व समय के अनुसार भिन्न भिन्न होती है। इसके परिणामस्वरूप तापक्रम, घनत्व तथा दबाव संबंधी विभिन्नताएं उत्पन्न होती है- जो फिर ऐसे बलों को उत्पन्न करती हैं, जो वायु को एक स्थान से दूसरे स्थान पर प्रवाहित होने के लिए विवश कर देती हैं। गर्म होने से विस्तारित वायु, जो गर्म होने से हल्की हो जाती है, ऊपर की ओर उठती है तथा ऊपर की ठंडी वायु नीचे आकर उसका स्थान ले लेती है, इसके फलस्वरूप वायुमंडल में अर्द्ध-स्थायी नमूने उत्पन्न हो जाते हैं। वायु का चलन, सतह के असमान गर्म होने के कारण होता है।

वायु का ऊर्जा उत्पादन करने हेतु उपयोग करने में न तो किसी भी प्रकार के प्रदूषण की समस्या, या अम्लीय वर्षा की समस्या, या खानों के अपवाह या विषाक्त प्रदूषक पदार्थो जैसी कोई समस्या है और न ही इसके कारण हेक्टेयरों तक फैली

भूमि क्षतिग्रस्त होती है। वास्तव में मानव की पर्यावरणीय आवश्यकताओं की पूर्ण आपूर्ति पवन ऊर्जा रूपांतरण तंत्रों द्वारा हो जाती है। कार्बन - डाईआक्साइड के उत्सर्जन को कम करने के लिए उपलब्ध कुछ तकनीकी विकल्पों में पवन ऊर्जा भी एक है। चूँकि इसमे गैसीय प्रदूषकों के उत्सर्जन जैसी कोई समस्या नहीं है जो कि ग्रीन हाउस प्रभाव को उत्पन्न करके पर्यावरणीय समस्याओं को बढ़ाए, अत: विद्युत उत्पादन हेतु पवन ऊर्जा ही सबसे अधिक स्वीकृत स्रोतों में से एक है। यह नवीकरण योग्य ऊर्जा ही विश्वव्यापी उष्णता तथा अम्लीय वर्षा से संघर्ष कर सकती है।

पवन अथवा वायु सुगमता से उपलब्ध है तथा कभी न समाप्त होने वाली है, जब कि जीवाश्मीय ईन्धन सीमित है। हालांकि और अधिक जीवाश्मीय ईधनों की खोज की दिशा में सतत कार्य चल रहा है, परन्तु विश्व के औद्योगिक तथा विकासशील देशों की निरंतर बढ़ती ईधन की आवश्यकता निश्चित रूप से भविष्य में इन उच्च श्रेणी के ईधन स्रोतों को समाप्त कर देगी। इस समस्या से निपटने के लिए, पवन ऊर्जा ही एकमात्र संभावित विकल्प है, जो कि नवीकृत भी होता रहता है। सूर्य कीं विकिरित ऊर्जा से पवन ऊर्जा सतत रूप से नवीकृत होती रहती है और इसका दोहन सरलतापूर्वक किया जा सकता है।

पवन नि:शुल्क तथा प्रचुरता में उपलब्ध है, सरलता से प्राप्य है, समाप्त होने वाली नहीं है तथा इसकी आपूर्ति भी निर्बाध है। पवन अथवा वायु पर किसी भी देश या वाणिज्यिक प्रतिष्ठान का एकाधिकार नहीं है, जैसा कि जीवाश्मीय ईधनों, यथा- तेल, गैस, या नाभिक ईधनों- जैसे यूरेनियम आदि के साथ है। चूँकि ऊर्जा की मांग सतत रूप से बढ़ती ही जायेगी, इसलिए कच्चे तेल के बढ़ते हुए मूल्यों के साथ निश्चित रूप से पवन ऊर्जा ही एकमात्र आकर्षक विकल्प प्रस्तुत करती है।

पवन ऊर्जा संयत्रों का परिचालन सुरक्षित है। आधुनिक व उन्नत माइक्रोप्रोसेसर्स के प्रयोग से समस्त संयंत्र पूर्णत: स्वचालित हो गए हैं तथा संयंत्र के परिचालन के लिए अधिक श्रमिकों की आवश्यकता भी नहीं रह गई है। निर्माण तथा रखरखाव की दृष्टि से भी यह पूर्णत: सुरक्षित है। यह बात तापीय ऊर्जा संयंत्रों अथवा नाभकीय ऊर्जा संयंत्रों पर लागू नहीं होती। आधुनिक पवन संयंत्रों में प्रयुक्त प्रभावी सुरक्षा यांत्रिकी से यहाँ तक संभव हो गया है कि इन्हें सार्वजनिक स्थलों पर भी थोड़ी सी क्षति अथवा बिना किसी क्षति के स्थापित किया जा सकता है।

पवन-चालित प्रणाली के लिए तुलनात्मक रूप से कम स्थान की आवश्यकता होती है और इसे हर उस स्थान पर, जहाँ भी वायु की स्थिति अनुकूल हो, लगाया जा सकता है। उदाहरण के लिए इसे पहाड़ी के शिखर पर, समतल सपाट भू - प्रदेश, वनों तथा मरुस्थलों तक में लगाया जा सकता है। संयंत्र को अपतटीय क्षेत्रों तथा छिछले पानी में भी लगाया जा सकता है। यदि पवन संयंत्रों को कृषि भूमि में भी लगाया जाता है तो मीनार के आधार स्थान तक खेती की जा सकती है।

पवन चक्की शृंखलाओं में अनेक अपेक्षात छोटी-छोटी इकाइयां होती हैं। इन्हें सरलता व शीघ्रता से समूहों में बनाया जा सकता है, जिसके परिणामस्वरूप इनकी योजना बनाने में लचीलापन आ जाता है। किसी भी पवन चक्की फ़ार्म के पूरा होने के पहले ही निवेशित पूंजी शीघ्रता से वापस मिलने लगती है। मांग के बढ़ने के साथ-साथ, जब भी आवश्यकता अनुभव हो, नयी इकाइयां जोड़ी जा सकती है। इन्हें एक ही स्थान पर, समूह के रूप में या सम्पूर्ण देश के क्षेत्रों में लगाया जा सकता है। पवन चालित संयंत्र सरल व परिचालन में आसान होते हैं, अत: अन्य विकल्पों की तुलना में इनके रखरखाव की आवश्यकता कम होती है। वायु बिना मूल्य उपलब्ध है, इसलिए इसमें ईधन के मूल्यों में वृद्धि के साथ मुद्रास्फीति का भी कोई जोखम नहीं है। इस प्रकार पवन ऊर्जा

धन तथा ईंधन दोनों ही रूपों में बचत करती है। अत: पवन ऊर्जा मूल्यप्रभावी है। आज विश्व के कई क्षेत्रों में, जहां वायु के स्रोत केन्द्रित है, वहां पवन ऊर्जा तेल चालित तथा नाभकीय-शक्ति से उत्पादित विद्युत को कड़ी चुनौती दे रही है, क्योंकि परम्परागत ऊर्जा स्रोतों के विकास की लागत जहां दिन-प्रतिदिन बढ़ रही है, वहीं पवन ऊर्जा की लागत तीव्रता से गिर रही है। वायु-चालित टरबाइनों की दिनों-दिन बढ़ती हुई विश्वसनीयता से यह सिद्ध हो रहा है कि निकट भविष्य में अधिक से अधिक क्षेत्र ऊर्जा के अन्य रूपों की अपेक्षा पवन ऊर्जा को सबसे कम व्यय वाले आकर्षक विकल्प के रूप में अपनाएंगे।

पवन चालित संयंत्र महंगे है और केवल वहीं लगाए जा सकते है जहां आवश्यकतानुरूप वायु उपलब्ध हो। उच्च पवन गति वाले क्षेत्र पहुँच से बाहर हो सकते हैं अथवा उच्च वोल्ट क्षमता वाली पारेषण लाइनों से दूर स्थित हो सकते हैं, जिससे पवन ऊर्जा के संचार में समस्या हो सकती है। साथ ही विद्युत् की आवश्यकता समय के अनुसार घटती-बढ़ती रहती है तथा विद्युत उत्पादन को मांग चक्र के अनुसार समायोजित करना होता है। चूँकि पवन-शक्ति की मात्रा या गति में अचानक परिवर्तन हो सकते हैं, अत: यह भी संभव है कि मांग या आवश्यकता के समय यह उपलब्ध ही न हो। अत: सतत रूप से एक ही मात्रा में उपलब्ध न होने तथा अविश्वसनीय आपूर्ति के कारण पवन ऊर्जा की व्यवहारिक असुविधा ने इसके उपयोग को, उन्हीं क्षेत्रों तक सीमित कर दिया है जहाँ या तो विद्युत की सतत आपूर्ति की आवश्यकता नहीं है, या आवश्यकतानुरूप आपूर्ति हेतु एक अन्य स्थायी ऊर्जा विकल्प उपलब्ध है। विद्युत ऊर्जा का भंडारण कठिन एवं महँगा भी है, इसलिए पवन ऊर्जा का उपयोग किसी अन्य प्रकार की ऊर्जा के साथ साथ अथवा गैर-वैद्युत भंडारण के साथ किया जा सकता है। पवन ऊर्जा का उपयोग जलविद्युत ऊर्जा जनित्रों के साथ करना अधिक लाभप्रद है, क्योंकि जल का उपयोग ऊर्जा भंडारण के स्रोत के रूप में प्रयुक्त किया जा सकता है और भूमिगत संपीड़ित वायु के भंडारण का उपयोग एक अन्य विकल्प है।

पवन उत्पादक संयंत्र विद्युत चुंबकीय संकेत वातावरण में प्रसारित करते हैं। क्षैतिज अक्ष वाले पवन चालित टर्बाइनों के घूमते हुए फलक (ब्लेड) दूरदर्शन संकेतों के दृश्य अंश विरूपित करके निकटवर्तीय क्षेत्रों में व्यवधान उत्पन्न कर सकते हैं। संयंत्रों से दूरी बढ़ने के साथ-साथ यह व्यतिकरण कम हो सकता है, फिर भी यह परा-उच्च आवृत्ति (यू एच एफ) चैनलों को कई किलोमीटर की दूरी पर भी प्रभावित कर सकता है। अगर ब्लेड स्थिर भी हो तो भी वायु में प्रसारित संकेत 'छद्म बिम्ब' (घोस्ट इमेज) उत्पन्न कर सकते है। इस समस्या को समुचित स्थल-चयन तथा सूक्ष्म तरंग (माइक्रोवेव) संपर्क के बीच 'दृष्टि रेखा' को बदल कर तथा संयंत्रों को प्रसारण केन्द्रों से दूर लगा कर किया जा सकता है।

अनेक विकसित देशों में 'शोर' की समस्या को पवन ऊर्जा विकास के विरुद्ध हथियार के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। पवन चालित संयंत्र से शोर उत्पन्न होने के दो प्रमुख स्त्रोत है : यांत्रिकी शोर जो कि घूमते हुए यांत्रिक एवं वैद्युतिक घटकों से उत्पन्न होता है और जिसे उचित गियर-प्रणाली या ध्वनिरोधक आच्छादन लगाकर कम किया जा सकता है। दूसरा कारण है सीटी जैसी वह आवाज जो फलकों के ऊपर वायु के प्रवाहित होने से उत्पन्न वायुगतिकीय शोर है, जिसकी अलग -अलग आवृत्तियां होती हैं।

अनेक प्रकृति प्रेमियों या क्लबों की यह आशंका है कि पवनचालित संयंत्रों की उपस्थिति प्रवासी पक्षियों तथा सामान्य पक्षियों को भयभीत करती है। परन्तु, आंकड़ों से यह अब सिद्ध हो चुका है कि पक्षी टकराने की घटनाएं निचली उड़ान के स्तर पर ही होती है और ऐसे पक्षियों की संख्या बहुत ही कम होती है।

निस्संदेह, वायु चालित टर्बाइनों का प्राकृतिक दृश्यावली पर निश्चित रूप से कुछ दुष्प्रभाव पड़ता है और यह दृश्य-प्रदूषण को जन्म देता है। जब बड़ी-बड़ी ऊँची मीनारें खड़ी की जाती है तो वे निश्चित रूप से प्राकृतिक दृश्यावली की सुरम्यता को प्रभावित करती हैं। विकसित देश इस दिशा में अधिक जागरुक हैं, जबकि विकासशील देशों में अधिकतर इसे प्रगति का चिन्ह माना जा रहा है। इन सबके अतिरिक्त, कम उंचाई पर वायुयान संचालन, रडार-प्रसारणों तथा संचार के अन्य माध्यमों पर भी इसके दुष्प्रभाव पड़ सकते हैं।

आंवला : दिव्य गुणों से युक्त एक वृक्ष

श्री सोनू भारती
वन उत्पादकता संस्थान, रांची

सामान्य परिचय :

प्रकृति ने मनुष्य को एक स्वस्थ जीवन जीने के लिए अनेकों औषधीय पौधे उपहार स्वरूप दिये हैं। मनुष्य प्राचीन काल से इन औषधीय पौधों का उपयोग विभिन्न रूपों में करता आया है। आयुर्वेद में ऐसे अनेक पौधों का विवरण मिलता है। इन्ही औषधीय पौधों में से एक आंवला पारम्परिक भारतीय चिकित्सा प्रणाली, आयुर्वेद में अपने दिव्य गुणों के कारण अति महत्वपूर्ण औषधीय पौधा माना गया है तथा इसे दिव्य फल की संज्ञा दी गई है। इसके सभी भाग, भिन्न-भिन्न प्रकार की व्याधियों में उपयोग किए जाते हैं, परन्तु इसका फल सबसे महत्वपूर्ण है, जो अकेले तथा संयोजन में अनेकों प्रकार की बीमारियों में उपयोग में लाया जाता है।

आंवला का सम्पूर्ण वृक्ष

आवास व जलवायु : आंवला भारतवर्ष में दक्कन से लेकर कश्मीर तक उष्णकटिबंधीय तथा उप-उष्णकटिबन्धीय भागों में सामान्य रूप से पाया जाता है। भारतवर्ष के अतिरिक्त यह विश्व के अन्य प्रदेशों जैसे लंका, वर्मा, मलाया प्रायद्वीप तथा चीन में सामान्य रूप से मिलता है। श्रीलंका में यह 4000 फीट की ऊँचाई तक के आर्द्र क्षेत्रों में सामान्य रूप से मिलता है। यह क्षारीय, लवणीय तथा अपजनित भूमि में भी भलीभांति वृद्धि करता है। यह बंजर, शुष्क, उष्णशुष्क, लवण प्रभावित तथा तटीय क्षेत्रों के लिए भी अनुकूल है।

वानस्पतिक विवरण : आंवला का वानस्पतिक नाम *एम्बलिका ओफ्फिसीनालिस* या *फाइलन्थस एम्बलिका* है तथा यह यूफ़ोर्बियेसी कुल से सम्बन्ध रखता है। आंवला के अतिरिक्त यह अन्य नामों जैसे आमलज, आमलूकी, अमिया, भारतीय गूजबेरी, आमला, अम्बूल, अमरफल, अमृतफल, शांता, अमृता, बहुफल, धात्री, श्रीफल, वृतफल, इंदुल, नैल्ली आदि नामों से भी जाना जाता है। यह लघु से लेकर मध्यम आकार का लगभग 5.5 मीटर तक की ऊँचाई का पर्णपाती स्वभाव का वृक्ष होता है। इसकी पत्तियां हरे रंग की, एकांतर, सम्पूर्ण, वृंतीय होती हैं। नर तथा मादा पुष्प अलग-अलग होते हैं। नर पुष्प हरे-पीले रंग के पर्णफलक के निचले अक्ष पर बड़ी संख्या में उपस्थित होते हैं, जबकि मादा पुष्प एकान्त, अवृन्तीय तथा बाह्य पुष्प अक्ष पर नर पुष्पों के साथ मिश्रित होते हैं। फल हरे - पीले रंग के गोलाकार, गूदेदार तथा धारीदार होते हैं।

आंवला का फल

रासायनिक अवयव : आंवला विटामिन सी का मुख्य स्रोत है तथा इसमें पाये जाने वाले विटामिन सी की विशेषता होती है कि वह गर्म करने पर भी नष्ट नहीं होता है। इसके 100 ग्राम ताजे फलों में 470-680 मिलीग्राम तथा शुष्क फलों में 2438-3470 मिलीग्राम तक विटामिन सी पाया जाता है।

इसके अतिरिक्त इसके फल पत्तियों तथा छाल में टेनिन भी बहुतायत में मिलता है। इसकी जड़ों में इलेजिक अम्ल, लूपेओल तथा छाल में लूक्रोडेलफिनिडीन मिलता है। इसमें वसीय अम्ल; लिनोलेनिक, लिनोलेक, ओलेक, स्टेयरिक, पोमिटिक तथा म्यरिस्टिक अम्ल होते है। इनके अतिरिक्त इसमें गेलिक अम्ल, चेबुलेजिक अम्ल, चेबूलिक अम्ल फाइलेमबिलिक अम्ल, फाइलईनटिन, पोलीसेकराइड, स्टार्च सूक्रोज, टेर्चेबिन तथा कोरीलेगीन आदि भी पाये जाते है।

उपयोगी भाग : वैसे तो इस पौधे का प्रत्येक भाग : फल, फूल, बीज पत्तियां, छाल तथा जड़ सभी उपयोगी है परन्तु इसका सर्वाधिक उपयोगी भाग फल होता है जो सामान्यत: ताजा और शुष्क दोनों रूपों में उपयोग में लाया जाता है।

कैंडी

आंवला का आयुर्वेदिक वर्णन : आयुर्वेदिक वर्गीकरण के आधार पर आंवला फल निम्न गुणों से युक्त होता है:-

रस (स्वाद) - खट्टा तथा तीखा इसके प्रभावशाली स्वाद है परन्तु इनके साथ ही मीठा, कड़वा तथा बहुत तीखा भी इसी फल के स्वाद है।

मुरब्बा

प्रकृति : शीत।

विपका (पाचन द्वारा उत्पन्न स्वाद) : मीठा।

गुण (विशेषता) : हल्का, शुष्क।

अचार

प्रभाव : वात्त, पित्त, कफ को शांत करने वाला, विशेषतया: पित्त।

औषधीय उपयोग : यह प्रसिद्ध आयुर्वेदिक उत्पाद च्यवनप्राश का मुख्य अवयव है।

- इसकी शीत प्रकृति के कारण शरीर में उत्पन्न वात जनित ज्वलन संवेदना तथा ज्वर के उपचार में उपयोग में लाया जाता है।
- आंवला फल में जीवाणुरोधी, कवकरोधी तथा प्रतिविषाणु गुण पाये जाते हैं।
- इसके फल का उपयोग कब्ज को दूर करने में भी किया जाता है।
- इसकी छाल के रस को हल्दी तथा शहद में मिलकर पीने से गोनोरिया में लाभ होता है।
- इसके फल का लेई बनाकर माथे पर लेप करने से सिर दर्द में लाभ होता है।
- आंवला चूर्ण को रक्त चंदन तथा शहद में मिलकर लेने से मितली तथा उलटी में आराम मिलता है।
- इसके फल के रस को शहद में मिलाकर लेने से पेट के कृमि नष्ट होते है।
- पूर्वी तथा मध्यपूर्वी एशिया देशों में तथा यूरोपीय बाजार में इसका उपयोग कई तरह के उत्पादों में किया जाता है जो त्वचा को सुंदर और गोरा बनाने के लिए प्रयोग किए जाते है।
- इसकी पत्तियों का रस निकाल कर कुछ बूंदें कान में डालने से दांत दर्द में लाभ होता है।
- प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाने में : इसमें पाये जाने वाले विटामिन सी के एंटिऑक्सीडेंट प्रकृति के कारण यह शरीर की प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ता है।
- इसका तेल बालो की वृद्धि में सहायक होता है तथा बालों को असमय सफेद होने से रोकता है तथा कई प्रकार के शैम्पू और तेलों का घटक है।
- इसमें पाये जाने वाले टेनिन के कारण इसके उपयोग चर्म उद्योग में भी होता हैं।

अन्य घरेलू उपयोग : आंवला फल सामान्य रूप से घरों में अचार, चटनी, मुरब्बा टॉफी आदि बनाने में होता है। रस निकालने के बाद बचे भाग से कई प्रकार के अन्य स्वादिष्ट व स्वास्थ्यवर्धक खाद्य पदार्थ जैसे- लड्डू व हलवा आदि भी बनाए जाते है जो भूख को बढ़ाने वाले होते है।

कहीं भी छोड़ के अपनी जमी नहीं जाते
हमें बुलाती है दुनिया हमीं नहीं जाते।
मुहाजरीन से अच्छे तो ये परिन्दे हैं
शिकार होते हैं लेकिन कहीं नहीं जाते।

- मुनव्वर राणा

औषधीय पौधा : मकोय

श्री महेन्द्र सिंह
वन अनुसन्धान संस्थान, देहरादून

वानस्पतिक नाम : *सोलेनम नाइग्रम Solanum nigrum*, Linn. मकोय (काकमाची) कुल- सोलेनेसी।

पर्याय : काकमाची, काकाहवा, वायसी, ध्वांग माची ये मकोय के संस्कृत नाम हैं।

भाषाभेद से नाम भेद : हिन्दी-मकोय, कवैयानी, कवैया, भटकोंवा ब.-काइस्ताषाक, गुडकामाई। म.- लघुकावटठी, कामोनि। गु.-पीलुडी। क. कावईकाको फा.- कावुली-रोवातरीख। इ.- नाइटसीड। लै.- सोलेनम नाइग्रम (*Solanum nigrum* Linn.)

वर्णन : यह पौधा 2-3 फीट ऊँचाई का होता है। शाखाओं पर उभरी हुई रेखायें होती है, सघन होती है। यह वर्षा ऋतु में उग कर सर्दी में खूब हरा-भरा होता है। पत्र चौड़ा मुलायम और अग्र भाग की तरफ पतला होता जाता है पत्र वृन्त 1/2 इंच से 1 इंच तक लम्बा तथा पर्ण फलक का मुल भाग वृन्त ससक्त होता है। पुष्प छोटे, श्वेत वर्ण, बर्हिकक्षीय पुष्प मुन्डों पर 3-8 के गुच्छों में नीचे झुके होते हैं। फल छोटे लगभग 1/4 इंच व्यास के होते हैं। अपक्वावस्था में हरे पकने पर बैंगनी और कभी-कभी पीले या लाल हो जाते हैं।

पदार्थ संगठन : मकोय में "सोलेनिन" नामक एक पदार्थ रहता है जो शर्करा और सोलेनिडाइन का यौगिक है।

औषधीय उपयोग-मकोय, अवसादक, शोथहर तथा कफनाशक है। इसका प्रलेप वेदनाहर है। रसायन होने से यह

विविध चर्म रोगों में तथा फिरंग रोग (Syphilis) में मूत्रप्रद होने से विविध वात, शोथ, सूजाक, कफरोग-प्लीह वृद्धि में लाभप्रद है उदर रोग व हृदय रोग में लाभकारी है। मकोय का शर्बत तथा शीतपानीय (Cooling drink) ज्वर रोग में उपयोगी है। इसके पत्र गर्म करके वेदना स्थान पर तथा शोथ युक्त अण्डकोशों के सूजन पर तथा हाथ पैरों की सूजन पर लगाना फायदेमंद है।

कौन चतुर चालाक है और कौन मासूम,
सब कह देता आपका, अपना ड्राइंगरूम।।

- यश मालवीय

प्रकृति प्रदत, बहुपयोगी औषधीय गुण सम्पन्न आयुर्वेद का सुप्रसिद्ध योग - 'त्रिफला' का एक घटक-बहेड़ा

श्री बाबूलाल शर्मा एवं श्रीमती संतोष गैरोला
वन अनुसन्धान संस्थान, देहरादून

बहेड़ा एक सामान्य परिचय :

यह भारत में, राजस्थान तथा शुष्क स्थानों को छोडकर पाये जाने वाला, 36 मीटर ऊँचाई, 3 मीटर अथवा इससे अधिक गोलाई, किन्तु प्राय: 18 से 27 मीटर ऊँचाई 2.20 मीटर गोलाई, साफ, सीधा तने वाला 9 से 12 मीटर पर्णपाती वृक्ष है।

यह पर्णपाती वनों में टीक (सागौन) साल, लारेल (सैन) वैनटीक आदि वृक्षों के साथ उग जाता है तथा वन में वृद्धि व विकसित होता हुआ, एक सुन्दर महत्वपूर्ण वृक्ष है।

छाल : इसकी छाल हल्के भूरापन युक्त अथवा राख जैसा रंग वाली अनेक सुन्दर देशान्तरीय फटी हुई, 8 मिलीमीटर मोटी होती है। इसकी छाल में खंरोंच से रसहीन गोंद निकलने लगता है। बहेड़ा की छाल का टुकड़ा मुँह में रख कर चूसते रहने से खाँसी दूर होती है।

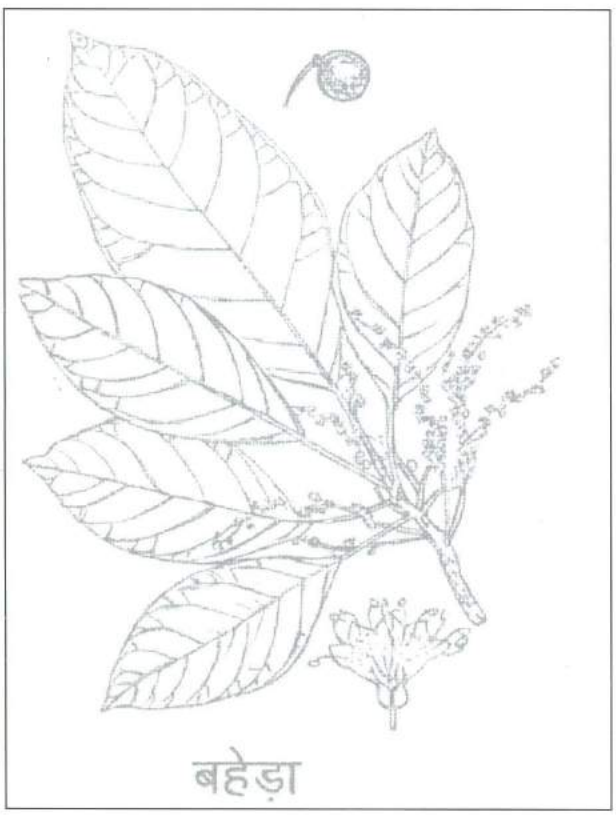
बहेड़ा

पत्र : इस वृक्ष के पत्र फरवरी-मार्च में झड़ जाते है और नये पत्र अप्रैल में उग जाते हैं। ये वट के पत्र के समान आकृति वाले, आकार में छोटे-छोटे होते हैं।

पुष्प : इसके पुष्प छोटे-छोटे, हरेपन लिये, पीले तथा अप्रिय-गन्धयुक्त होते है तथा हरितकी के समान पुष्पोत्पति भी होती हैं। पुष्पकाल→अप्रैल-जून।

फल: इस वृक्ष के फल गोल-गोल, अण्डाकृति प्राय: बड़े-बड़े होते है। इसके फल, वन्य पशु, वानर, हिरन, भेड़, बकरी और दूसरे मवेशियों के प्रिय आहार हैं। ''त्रिफला'' का यह एक घटक, विदेशों में व्यापारिक क्षेत्रों, योरोप, पूर्व में, वस्त्रों, चमडों की रंगाई (Tanning) और क्षार के कार्य में उपयोग हेतु प्रयोग में लाया जाता तथा बालों में भी लगाने हेतु प्रयोग में लाया जाता रहा है। इसके फल की गूदा (सार) खाया जाता है, ऐसा कहा जाता है कि अधिक खा लेने पर यह नशा उत्पन्न करने लगता है।

वृक्ष के प्रादेशिक भाषायी तथा अन्य नाम :

हिन्दी - बहेड़ा, भायरा, बालरा, बहेरा, कुमायुँ - बोहेरा; बंगाल - बहेरा, बहेरी, बेयरा; आसाम - बहेरा, भभोरा, भायस, बोवा, डुबोंग; गुजरात - बहेरा, बेहरा, भयरा, मुहरा; मलाबार - बहेरा, बालदा, बांलरा, भेरेदा; मराठी - बौरा, बेहडा; कन्नड - भेरड़ा, बहेडा; तेलगु - अहेरा, झेरा; तामिल - तानी, तांदी, तोअन्दी; दक्कन - बेहड़ो, भानदेवी; उडीसा - बहेरा, बहिरा, बेराह; पंजाब - अक्षयवृक्ष, बहेरूका; संस्कृत - विभीतकी, विभीतक :।

वृक्ष का वैज्ञानिक वनस्पतिक नाम व कुल - टर्मिनेलिया बेलेरिका - कुल - कोमब्रेरेटेसी

भाव प्रकाश मिश्र'-निघण्टु: में इस वृक्ष के विषय में ऐसा लिखा है :

वृक्ष परिचय : ''बहेडा'' के वृक्ष बड़े-बड़े होते है। ऊँचाई 100 में 150 फुट तक होती है यह पर्वत व अरण्य प्रदेशों में अधिक पाया जाता है। इसकी छाया स्वास्थ्य प्रद होती है। अत: बंगाल के उद्यानों में यह यत्न पूर्वक उनके वेड़ों पर रक्षित होता है। इसके पत्र वट वृक्ष के पत्रों की तरह आकार में छोटे-छोटे होते हैं तथा पुष्प भी छोटे-छोटे होते हैं।

बहेड़ा के गुण व रोगोपचार में प्रयोग : बहेड़ा पाक में मधुर, कसैला, कफ पित्त को नष्ट करने वाला, उष्णवीर्य, स्पर्श में शीतल, दस्तावर और खांसी को नष्ट करने वाला है। यह रूक्ष नेत्रों को हितकारी, बालों को बढ़ाने वाला, कृमि तथा स्वर भेद को नष्ट करने वाला है। बहेड़ा कसैला, वल्य और रेचक होता है। सैंधव चूर्ण के लेहन, कफ रोग, स्वर भेद, गलक्षत एवं ग्रहणी में उपयोगी है। गलक्षत वाले रोगियों को, इसे घी में भून कर चूसना चाहिये। यह अतिसार शोध, अर्श, कुष्ठ एवं प्लीहा वृद्धि में सेवन करने योग्य है।

बहेडा मज्जा के गुण : बहेड़ की मींग, प्यास, वमन कफ को हरने वाली है। यह कसैली मदकारक है। आंवला मज्जा के भी गुण है।

विश्वविख्यात वृक्ष व काष्ठ विज्ञानी जे. एस. गैम्बल इस वृक्ष व इसकी काष्ठ के विषय में लिखते है : Though timber is not good repute, but it is better than it is often supposed to be and though in some parts it is objected to that the tree is quite left uncut and is consequent conspicuously being among the host of saplings of the new growth, in others it is rather like and is cut into building material willingly. Another cause of its being occasionally left uncut is being in some parts of india e.g. in some South Deccan objected to as unlucky or inhabited by demons ''(साभार- ए मैनुअल ऑफ इन्डियन टिम्बर्स-1922)''

वृक्ष की काष्ठ इसका उपयोग : इसकी काष्ठ पीले भूरेपन युक्त, मध्यम श्रेणी की कठोर, भारी प्राय: सीधे रेशे वाले और बनावट में रूक्ष होती है। इसकी काष्ठ में तख्ते पैकिंग केसेज, छोटी नाव (संकरी) उत्तर पश्चिम प्रदेशों में पानी में इसकी काष्ठ को भिगोये देने रहने के बाद, टिकाउपन होने से गृह निर्माण के कार्यों में उपयोग में लाई जाती है। मध्यवर्ती प्रदेशों में कृषक हल, मूठ, बैलगाड़ी के निर्माण में उपयोग में लाई जाती है। दक्षिण भारत में पैंकिंग केसेज, काफी बाक्सेज, टी-चेस्ट, लठ्ठों का बेड़ा आदि निर्माण व्यापारिक कार्य हेतु निर्माण कार्य में उपयोग में लाई जाती है।

बहेड़ा वनस्पति तान्त्रिक प्रयोजन कार्य हेतु उपयोग : एक दृष्टि : दिवगंत आचार्य शत्रुघ्न लाल शुक्ल अनेक ग्रन्थों ज्योतिष, अध्यात्म विद्या, सूर्य तन्त्रम के रचयिता एवं वनस्पति तन्त्र तथा अलौकिक शक्तियों की साधना-यंत्र-मंत्र-तंत्र ऋद्धि-सिद्धि नामक रचित पुस्तक में बहेड़ा वनस्पति तंत्र पर ऐसा लिखते हैं :

आयुर्वेद के सुप्रसिद्ध योग ''त्रिफला'' का एक घटक ''बहेड़ा'' तन्त्र शास्त्र में बहुत गुणकारी माना जाता है। मनीषियों ने इसकी विवेचना करते यह कहा व बताया है, यदि वनस्पति तन्त्र के नियमानुसार, पूर्व निमंत्रण देकर, रवि-पुष्प योग में इसे प्राप्त किया जाये, तो अनेक प्रकार के प्रयोग सिद्ध किये जा सकते हैं :

यथा मंत्र द्वारा सिद्ध किया हुआ : बहेड़ा का पत्ता और इस की मूल (जड़), भण्डार, तिजोरी, सन्दूक, बॉक्स अथवा अन्य किसी पवित्र स्थान में रखने से धन-धान्यादि में समृद्धि होती है। यह निश्चित प्रभावशाली बहुत सहज प्रयोग है। उदार विकारों, भूख की कमी, अपच, मन्दाग्नि, पीड़ा वायु प्रकोप, कोष्ठबद्धता आदि के निवारण में ''मन्त्र-सिद्ध-बहेडा का पत्ता'' पर (पालथीमार कर) बैठना चाहिए। बहेड़े का अभिमन्त्रित जड़ का टुकड़ा दबाकर बैठें, तो ऐसी स्थिति में किया गया भोजन तान्त्रिक प्रभाव से सुपाच्य और पौषक बनकर आरोग्यता प्रदान करता है। यह 'बहेड़ा का पत्ता' भौतिक बाधाओं के निवारण में भी बहुत समर्थ सिद्ध हुआ है। यह जहां भी रखा हुआ होगा, वहां भूत, प्रेत, पिशाच, नजर, टोना आदि का कोई भी उपद्रव नहीं होगा।

बहेड़ा की लकड़ी का ईंधन-तान्त्रिक यज्ञ में उपयोग, करने का लंका पति रावण द्वारा अपने पुत्र मेघनाद (इन्द्रजीत) का आदेश, जो वाल्मीकि रामायण में युद्ध सर्ग में वर्णन इस प्रकार है - रावण को जब अपनी पराजय होती दिखाई देती है, तो वह चिन्तित, दु:खी होकर अंतिम ब्रह्मास्त्र (यज्ञ) का ही

सहारा लेता है। अपने पुत्र मेघनाद को एक बड़ा ''तान्त्रिक यज्ञ'' करके ऐसी शक्ति प्राप्त करने के लिए आदेश करता है जिससे वह ''अजेय'' हो जाये और राम को सेना सहित परास्त कर सके। मेघनाद ''निकुम्भिला'' नामक स्थान में जाकर उसने पिता के बताये हुये विधान के अनुसार, तान्त्रिक होम करने लगा।

वाल्मीकि रामायण में इसका वर्णन इस प्रकार है :

एतस्तुहुत भोक्तारं हुत भुक्सदृश प्रभ :।
जुहवे राक्षस श्रेष्ठों विधिव मन्त्र सत्तेमे :।
सह विर्लाज सत्कारे मार्ल्य गन्ध पुरूषकृते :।
जुहवे पावकं पत्र राक्षसेन्द्र: प्रतापवान ।।19।।
शस्त्राणि शर पत्राणि समिधोथ विभीतका:।
लोहिता निचवासांसिस्त्रवं कार्ष्णाय संतथा।।20।।

अर्थ : उस प्रतापशाली राक्षसों में श्रेष्ठ ने प्रथम अग्नि में माला और सुगन्धित द्रव्य चढ़ाकर, उसके बाद खीर एवं अक्षत से उसका संस्कार पूरा करके, हवन कर्म प्रारम्भ किया। उस हवन कुण्ड में चारों ओर जहां शरतप विछाना चाहिये था, वहां उसने शस्त्र बिछाये व ''बहेड़े की लकड़ी'' का ईधन बनाया, समस्त लाल वस्त्र धारण किये और लोहे का स्त्रुवा बनाया। मारण में यही पदार्थ काम में आते हैं'।

प्रस्तुत लेख में बहेड़ा वनस्पति की बहूपयोगिता व गुण सम्पन्नता के सम्बन्ध में संदर्भ सहित प्रमाणित शास्त्रों के प्रमाण बताते हैं कि 'तान्त्रिक प्रयोजनों में भी कार्य सिद्धि व भौतिक बाधाओं आदि के निवारण में भी' बहुत समर्थ सिद्ध हुआ। पौराणिक शास्त्रों में भी तान्त्रिक विद्या उसके प्रयोग के विधि विधान सहित उल्लेख मिलते हैं। प्राचीन काल के शास्त्रों पुराण, उपनिषद, रामायण, स्मृति, संहितायें आदि के अध्ययन व दृष्टि गोचर करने पर यह भी पता चलता है, कि उस युग (काल) में यंत्र-मंत्र-तंत्र, ऋद्धि-सिद्धि विद्यायें अवश्य ही विकसित रही होगी और उस युग के ऋषि, मुनियों, योगियों, सिद्धों तथा ताम्र पत्र पर अंकित हों''। वर्तमान में भी, यह विद्या अभी पूर्णतया लुप्त नहीं हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं, कि लंकापति रावण, भगवान शिव का परम भक्त, महान, तपस्वी वेद, पुराण, समस्त विद्याओं का ज्ञाता व निपुण, समस्त देवी शक्तियों का उपासक एवं श्रेष्ठ पुल्स्त्य कुल में उत्पन्न तथा महान योद्धा, अवश्य ही, किसी गुरू के माध्यम, अथवा कठोर तपस्या से तान्त्रिक विद्या पढ़ी होगी तथा तान्त्रिक शक्ति भी प्राप्त की हुई होगी। बाल्मीकि रामायण में उल्लेखित 'तान्त्रिक यज्ञ में बहेड़े की लकड़ी का ईधन के रूप में प्रयोग यह एक ज्वलन्त प्रमाण है।

अत : बाल्मीकि रामायण में उल्लेखित 'तान्त्रिक यज्ञ' में बहेड़ा लकड़ी को ईधन के रूप में प्रयोग, प्रमाण (प्रंसग प्रकरण) को असत्य मानना व सिद्ध करना असम्भव ही है, क्योंकि अन्य किसी शास्त्र में बहेड़े की लकड़ी का यज्ञ में प्रयोग करने का उल्लेख नहीं मिलता।

सांसों का चुकने लगा, खाता और हिसाब,
पढ़ी न पूरी जिंदगी, पढ़ते रहे किताब।।

पढ़ते अपना नाम ही, लिखते अपना नाम,
हम अपने ही इस कदर, अब हो गए गुलाम।।

सुबह नहीं अपनी रही, रही न अपनी शाम,
ओवरटाइम जो मिला, किया काम, बस काम।।

- यश मालवीय

भारत में पुस्तकालय पद्धति को समर्थ बनाने हेतु प्रयास

श्रीमती अनुराधा भाटी
शुष्क वन अनुसंधान संस्थान,जोधपुर

राष्ट्रीय ज्ञान कमीशन की सिफारिश पर राष्ट्रीय प्रतिवेदन (2006-07), तथा ग्रन्थालय पर वर्किंग ग्रुप की रिपोर्ट "पुस्तकालय: ज्ञान के गेटवेज" पुनरूद्धार के लिये सड़क मानचित्र (2007), ज्ञान के समाज की ओर (2008) ने इस तथ्य को मान्यता प्रदान की है कि पुस्तकालय एक महत्वपूर्ण अवयव/उपकरण है जो शैक्षणिक, सांस्कृतिक व आर्थिक विकास में बदलाव ला सकता है।

वर्तमान में संसार, ज्ञान के संसार में एक महत्वपूर्ण परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है जिसका कारण सूचना व संचार प्रौद्योगिकी का इसमें महत्वपूर्ण योगदान है। विभिन्न श्रेणियों के पुस्तकालय भारत में स्थित हैं लेकिन अधिकांश व्यक्ति भारत व संसार में उपलब्ध न तो प्रकाशित सामाग्री का और न ही डिजिटल संसाधनों का उपयोग पर्याप्त रूप से करते हैं। राष्ट्रीय ज्ञान आयोग द्वारा "पुस्तकालयों" पर कार्यकारिणी समूह की स्थापना करते हुए यह महसूस किया कि देश में पुस्तकालय सेवाओं पर पुनर्विचार किया जाये और पुस्तकालयों के वर्तमान स्तर का निरीक्षण किया जाए। कार्यकारिणी समूह ने यह अनुभव किया कि भारत में अधिकांश व्यक्तियों को "सूचना की निर्धनता" (Information Poverty) से मुक्ति में सहायता करनी चाहिए। भारत में पुस्तकालयों की वर्तमान स्थिति में पुस्तक संग्रह अथवा ज्ञान के अधिग्रहण के क्षेत्र में अदभुत परिवर्तन लाकर ज्ञान तक पहुँचनें की व्यूह रचना बनानी चाहिए। राष्ट्रीय ज्ञान आयोग ने निम्नलिखित संस्तुतियां पुस्तक और पुस्तकालय सेवाओं के विकास पर प्रस्तुत की हैं जिससे ज्ञान के समाज के लक्ष्य तक पहुंचा जा सकता है :

1. पुस्तकालयों पर राष्ट्रीय आयोग की स्थापना की जाए।
2. राष्ट्र के सभी पुस्तकालयों की गणना की जाए।
3. पुस्तकालय व सूचना विज्ञान, शिक्षा, प्रशिक्षण व शोध सुविधाओं में आमूलचूल परिवर्तन।
4. पुस्तकालय के कर्मचारियों का पुनर्गठन करना।
5. केन्द्रीय पूस्तकालय वित्त की व्यवस्था करना।
6. पुस्तकालय प्रबंध को आधुनिकतम बनाना और पुस्तकालय प्रबंधन में अधिक से अधिक भागीदारी को प्रोत्साहित करना।
7. समस्त पुस्तकालयों में सूचना व संचार प्रौद्योगिकी को प्रोत्साहित करना।
8. दान की प्रवृति की सुविधा और व्यक्तिगत प्रलेखों के संग्रह का रख-रखाव।
9. पुस्तकालय व सूचना विज्ञान के विकास में सार्वजनिक व व्यक्तिगत साझेदारी को प्रोत्साहित करना।

राष्ट्रीय ज्ञान आयोग और कार्यकारी समूह की सिफारिशों पर आधारित "पुस्तकालयों पर राष्ट्रीय मिशन" को स्थापित किया जाए जो समयावधि पर (तीन वर्ष से अधिक का समय नही) स्थाई "राष्ट्रीय पुस्तकालयों पर आयोग" में परिवर्तित कर दिया जाए जो इस विकास की प्रक्रिया का महत्वपूर्ण अंग बन जाए। सांस्कृतिक मंत्रालय ने इस प्रस्ताव के विचार को माना और 6 फरवरी 2009 को एक सभा का आयोजन किया जिसमें इस विषय में रुचि रखने वाले विभिन्न व्यक्तियों को और देश के वरिष्ठ पुस्तकालय व्यवसायियों को, राष्ट्रीय स्तर के पुस्तकालय विज्ञान के संघों के प्रतिनिधियों, साँस्कृतिक मंत्रालय के अधीन पुस्तकालयों संगठन के अध्यक्षों, शक्तिशाली पुस्तकालय के उपयोक्ताओं आदि को इस मिशन के विभिन्न आयामों पर प्रभावशाली ढंग से फलीभूत करने के लिए वाद-विवाद हेतु बुलाया। स्टेक होल्ड्रस की सभा में विभिन्न आयामों पर जोर डाला गया जैसे :

1. समस्त पुस्तकालयों की राष्ट्रीय गणना

किसी भी प्रकार की नीति व योजना बनाने के लिए पुस्तकालयों पर समयबद्ध राष्ट्रीय स्तर का सर्वे कर डाटा एकत्रित करने की आवश्यकता है। भारत कुछ ही देशों में से एक है जो यूनेस्को को इस प्रकार के डाटा गत साठ वर्षो में नहीं दे पाया हैं। पुस्तकालय के बारे में सूचना के अभाव के कारण विकास के लिए उचित योजना को तैयार करना कठिन

हो गया है। अत: पुस्तकालय की राष्ट्रीय स्तर की गणना और डाटाबेस इस क्षेत्र की योजना निर्माण व अन्य कार्यक्रमों का आधार हो जाएगा और साथ-साथ इस क्षेत्र के विकास में भी लाभकारी होगा। सांस्कृतिक मंत्रालय ने टास्क फोर्स स्थापित किया है जो गणना व डाटा को संग्रह करने के लिए एक खाका (Format) व कार्यप्रणाली को तैयार करेगा।

2. पुस्तकालयों के स्तर व नियमों/सिद्धान्तों का स्थिरीकरण करना

इन नियमों में पुस्तकालयों के स्तर व नियम जैसे कि शैक्षणिक पुस्तकालयों की श्रेणीबद्धता (विद्यालय, महाविद्यालय और विश्वविद्यालय), सार्वजनिक पुस्तकालय, विशिष्ट पुस्तकालय, मय शोध व विकास, राष्ट्रीय पुस्तकालय और पुस्तकालय सूचना विज्ञान के विभागों के लिए कर्मचारियों का आकार व नियम आदि निश्चित करना। पुस्तकालयों की श्रैणीबद्धता, कर्मचारियों के पैटर्न तथा प्रत्येक पुस्तकालय के लिए कार्यक्षेत्र का विवरण,प्रलेख संग्रह के विकास की नीति, पुस्तकालय में प्रयुक्त सामग्री का संगठन, सेवाएँ, पुस्तकालय वित्त, भौतिक सुविधाएँ मय उपस्कर व साज-सज्जा का समान, सूचना व संचार प्रौद्योगिकी का अर्न्तराष्ट्रीय स्तर के मानदण्ड के अनुरूप भारतीय परिस्थिति के लिए उचित हो आदि-आदि के स्तर व नियम ग्रहण किया जाऐ।

3. बुनियादी संरचना को उच्चस्तर प्रदान करना

सार्वजनिक पुस्तकालय के क्षेत्र में भारत के विभिन्न राज्यों में भिन्न-भिन्न प्रकार की अवस्थाऐं पाई जाती हैं। यद्यपि राज्य की केन्द्रीय पुस्तकालयों ओर जिलास्तरीय पुस्तकालयों, कम और ज्यादा आधारभूत संरचना रखतें है। लेकिन विभिन्न स्तर के बहुत से पुस्तकालय कम से कम बुनियादी संरचना की सुविधाएँ नहीं रखते हैं जैसे स्थान, पढने का कमरा, ग्रन्थों को व्यवस्थित ढंग से रखने की पद्धति, ग्रन्थों व अन्य पठन सामाग्रियाँ, शौचालय, यथोचित बैठने की सुविधाएँ और विद्युत (मुख्यतया ग्रामीण पुस्तकालयों के मामले में)। इन पुस्तकालयों की बुनियादी संरचना को उच्चस्तर पर लाने की आवश्यकता है। सार्वजनिक पुस्तकालयों को अत्यधिक दुविधा संसाधनों की कमी के कारणों से हो रही है। संसाधनों की कमी के कारण सार्वजनिक पुस्तकालय शिक्षा की गुणवत्ता में वास्तविक सहयोग देने में अयोग्य साबित हो रही हैं। अत: इन वर्तमान पुस्तकालयों की आधारभूत संरचना को मजबूत व दृढ बनाने के लिए आवश्यकतानुसार आधारित आधारभूत संरचना प्रदान करने की आवश्यकता है। यह प्रस्तावित किया गया है कि 5930 (शहरी 2965 व ग्रामीण 2965) पुस्तकालयों को जो 593 जिलों में स्थित है। उनको पुस्तकालय पर राष्ट्रीय मिशन के कार्यकाल में सहायता पहुँचाई जाए। सहायता कम्प्यूटर्स पठन सामग्रियाँ, उपस्कर व अन्य साज-सज्जा की सामग्रियों जो नेटवर्किंग के लिए चाहिऐ को प्रदान करने के लिए होगी। बुनियादी संरचना सहयोग के लिए वित्त जैसा कि पठन कक्ष, शौचालय आदि के निर्माण हेतु वित्तीय सीमा के अन्तर्गत प्रदान किया जाएगा।

4. ग्रंथालयों के नेटवर्किंग का आधुनिकीकरण

कम्प्यूटर और संचार तकनीकी ने विशेषकर सूचना के प्रबंध करने में अन्तिम दशक में बहुत हद तक प्रगति की है। पुस्तकालय के सूचीपत्रक के द्वारा सूचीकरण का पुस्तकालय के संसाधनों तक पहुँचने का पुराना तरीका अब कम्प्यूटीकृत तरीके से संग्रह, प्रक्रियाऐं और सूचना को चहुँओर वितरित करने में बदल गया है। भारत में पुस्तकालयों को वर्तमान में संग्रह व ज्ञान की अवाप्ति की प्रक्रियाओं को बदलकर ज्ञान तक पहुँचाने के मार्गो में परिवर्तन करना पडेगा। संचार की तकनीकी, विशेषकर इन्टरनेट ने देश में निर्मित सभी समय के विभिन्न प्रकार के डाटाबेस को आपस में जोड़ने को सम्भव बना दिया हैं। इस प्रकार, पुस्तकालयों व सूचना के नेटवर्किंग वर्तमान में विद्यमान सूचना संसाधनों का अधिकतम उपयोग करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। इस प्रकार की सुविधाएं शिक्षा के उद्देश्यों को बढावा दे रहे हैं और ज्ञान प्राप्त करने हेतु सूचना का उपयोग करने के पर्याप्त अवसर प्रदान कर रही हैं। कप्यूटर के साथ पुस्तकालयों का आधुनिकरण करने से व अन्य इलैक्ट्रानिक विधियों व साथ ही साथ उनकी नेटवर्किंग से विभिन्न उपयोक्ता समुदाय की आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिए आवश्यक सेवाऐं प्रदान की संभावना बन सकेगी और सूचनाओं तक पहुँचने की खाई को पाटने में सहायता मिलेगी।

सार्वजनिक पुस्तकालय नेटवर्क के उद्देश्यों को निम्नलिखित प्रकार से दर्शाया जा सकता है :

1. स्वचालित सार्वजनिक पुस्तकालय और उपयोक्ताओं, सरकारी/गैर सरकारी संगठनों और विभिन्न राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय पुस्तकालयों के नेटवर्क को जोड़ते हुए एक यूनिफाईड ग्रन्थसूची संसाधनों के नेटवर्क को विकसित करना।
2. वेब द्वारा ऑन लाईन सेवाओं के साथ पुस्तकालय स्वचालीकरण को शीघ्र प्रचलित करना।
3. उन पुस्तकालयों की स्थिति जिनके पास वांछित प्रलेख है और वेब के द्वारा ऐसे प्रलेखों की उपलब्धता के बारें में पता लगाने के लिए यूनिफाइड यूजर फ्रेण्डली सर्च की सुविधा प्रदान करना, और अन्तर्पुस्तकालय ऋण सेवाओं को प्रोत्साहित करना। राष्ट्रीय आरकाईवज और सभी राज्यों के आरकाईव्ज कार्यालय चिरस्थायी कीमत के रेकार्डस स्थाई संरक्षण में रखती है और प्रशासकों और विद्वानों द्वारा उनका उपयोग किया जाता है। उन संस्थानों/कार्यलयों के पास भारतीय प्रसिद्ध व्यक्तियों के व्यक्तिगत पत्रों का संग्रह भी है और विदेशों से माईक्रोफिल्म में रेकार्डस् प्राप्त करके भी रखते हैं। ऐसे अवर्गीकृत प्रलेखों को सुरक्षित रखना, यदि राज्य के केन्द्रीय पुस्तकालय और जिला पुस्तकालय, से सम्बन्धित हो तो आवश्यक सेवाऐं विद्वानों, शोधकर्ताओं को व देश के विभिन्न स्थानों में रहने वालों को प्रदान किए जा सकते हैं।

5. ज्ञान केन्द्रों की स्थापना

ज्ञान समाज (Knowledge Society) को स्थापित करने के लिए और पुस्तकालयों के विकास व बढ़ोत्तरी को सहयोग प्रदान करने के लिए राज्य, जिला व ब्लॉक स्तर पर ज्ञान के निमार्ण, ज्ञान के प्रवाह के प्रबंधन हेतु तथा हस्तान्तरण के लिए ज्ञान केन्द्र खोलने की अत्यन्त आवश्यकता है। भारत के अधिकांश व्यक्ति सूचना की निर्धनता से गुजर रहे है। पुस्तकालय व सूचना विज्ञान सेवा सेक्टर आवश्यक सहयोग ग्रंथालय व सूचना विज्ञान सेवा वृतखण्ड (Sector) समाज के सभी व्यक्तियों व भारतवर्ष के किसी भी भाग में रहने वाले व्यक्ति को आवश्यक सहयोग देकर उनकी आवश्यकताओं और प्रेरणाओं के अनुरूप ज्ञान को प्राप्त करने में सहयोग दे सकते हैं। ज्ञान केन्द्र वेब आधारित सेवाऐं प्रदान कर सकते हैं जैसे की शैक्षणिक/साँस्कृतिक/समाज व स्वास्थ्य पंचायत स्तर की सूचना जैसे भूमि का रेकार्डस, ई-गर्वनेन्स, ई-लर्निगं, बैकिंग व बीमा आदि-आदि। यह सूचनाऐं जिले,राज्य व राष्ट्रीय स्तर की होकर एक रूप में हो सकती है। यह ज्ञान के निर्माण, ज्ञान के प्रवाह के प्रंबंध व हस्तान्तरण की सुविधाऐं प्रदान कर सकता है।

1. एक ज्ञान केन्द्र एक सार्वजनिक पुस्तकालय का विस्तृत स्वरूप है। यहाँ मुख्य उद्देश्य प्रत्येक उपयोक्ता को यथोचित ज्ञान प्रदान करना और उपयोगी सूचना जनता को प्रदान करना है जो समाज के रूप में जनता को परिवर्तित करती है। यह कार्य सूचना व ज्ञान को संग्रह, संगठित करने और चहूँओर वितरित करने द्वारा किया जाता है।
2. एक ज्ञान केन्द्र द्वारा कम्प्यूटर व संचार तकनीकी का उपयोग करके व विषय विशेषज्ञ के मार्ग दर्शन और प्रंबंध के साथ एक अन्तर्सम्बन्धित सिस्टम के अर्न्तगत ज्ञान को एकत्रित करता है जिससे पुनरावृति को रोका जा सकता है और जिससे विभिन्न संदर्भों में विस्तृत उपयोग किया जा सकता है। यह स्थानीय ज्ञान को भी संगठित करता है।
3. प्रत्येक ज्ञान केन्द्र को ज्ञान का डाटाबेस विभिन्न स्रोतों से निर्मित करना पडता है जैसे कि न्यूज-पेपर्स, ग्रन्थ पत्रिकाएँ व डिजीटल संसाधनों से सीडीज, इन्टरनेट, डेटाबेसज व मेटा डाटा और स्थानीय रूचि की सूचनाओं को एकत्रित करने के तरीकों को अपनाकर।
4. यह डिजीटल स्वरूप में विभिन्न विषयों से सम्बन्धित विभिन्न नेटवर्कस, डाटाबेसेज व पुस्तकालय में उपलब्ध संसाधनों से जो उपयोग में पहले से आ रहे हैं उस रूप में ग्रंथालय रूपी ज्ञान केन्द्र होगा।
5. ज्ञान केन्द्र बिना बड़े नेटवर्क के संसाधनों से अभिगम (Access) किए कार्य नही कर सकता है। अत: यह वेब पर आधारित होगा व इसके द्वारा अभिगम (Access) न केवल पुस्तकालय अथवा ज्ञान केन्द्रों के उपयोक्ताओं द्वारा किया जा सकेगा वरन् सभी जनता कर सकेगी।

6. ज्ञान केन्द्र अपने उपयोक्ताओं के लाभ हेतु ज्ञान को भी एकत्रित करेगा जो विभिन्न भाषाओं में उपलब्ध है और राष्ट्रीय व संसार के संसाधनों तक नेटवर्क्स व इन्टरनेट सेवाओं के द्वारा तथा आवश्यकता पर आधारित सेवाओं के लिए एक मात्र विण्डों को समाज की ज्ञान व सूचना की आवश्यकताओं के लिए प्रोत्साहित करेगा।

7. ज्ञान केन्द्र अपने उपयोक्ताओं के लाभ हेतु ज्ञान को भी एकत्रित करेगा जो विभिन्न भाषाओं में उपलब्ध है और राष्ट्रीय व संसार के संसाधनों तक नेटवर्क्स व इन्टरनेट सेवाओं के द्वारा तथा आवश्यकता पर आधारित सेवाओं के लिए एक मात्र विण्डों को समाज की ज्ञान व सूचना की आवश्यकताओं के लिए प्रोत्साहित करेगा।

6. डिजीटाइजेशन व डिजीटल पुस्तकालय को स्थापित करना

डिजीटल पुस्तकालय की स्थापना राजा राममोहन राय पुस्तकालय फाउन्डेशन द्वारा की जाएगी। इसका कार्य सभी स्टेकहोल्डर्स (Stakeholdders) को डिजीटाइज्ड प्रलेखों को केन्द्रीय सूचना का अभिगम कराने का मौका प्रदान कराने का है। डिजीटल ग्रन्थालय को राज्यों, केन्द्रीय, जिला, आर्काईविल पुस्तकालयों व सांस्कृतिक मंत्रालय के अधीन पुस्तकालयों, सब-डिवीजनल ब्लाक और स्तर के पुस्तकालयों आदि-आदि का डिजीटल पुस्तकालय द्वारा समयानुसार उनका नेटवर्क तैयार किया जाएगा। समयानुसार, राजा राममोहन राय पुस्तकालय फाउण्डेशन (RRRLF) डिजीटल पुस्तकालय की स्थापना डिजीटल चीजों पाठ, दृश्य, श्रव्य का चयन, संगठन व रखरखाव करेगा मय यूजर फ्रेन्डली तरीके से तथा साथ में इन्ट्रानेट और पाठ, दृश्य, श्रव्य अथवा इन्टरनेट के द्वारा अभिगम (Access) व सूचना पुन: निकालने का कार्य करेगी, जिससे निम्न उद्देश्यों की पूर्ति होगी:-

1. एक मॉडल डिजीटल पुस्तकालय को विकसित किया जाएगा जो डिजीटाइज्ड व डिजीटल/ई-बुक्स मय विभिन्न भाषाओं में पाठ को खोजने की सुविधाऐं राजा राममोहन राय पुस्तकालय फाउण्डेशन (RRRLF) के प्रधान कार्यालय में उपलब्ध की जाऐंगी।
2. इस प्रकार के माडॅल डिजीटल पुस्तकालयों को कुछ चुने हुए सार्वजनिक ग्रंथालयों में भी भविष्य में निर्मित किए जाएंगे।
3. पुस्तकालयों, पुस्तकालय संगठनों व पुस्तकालय परिषदों के बारे में सूचना प्रदान करेगा।
4. दुर्लभ प्रलेखों को और स्वतन्त्रता प्राप्ति के पूर्व के समाचार पत्रों/पत्रिकाओं को डिजीटल स्वरूप में बदलना।
5. डिजीटल स्वरूप में रिपोर्टस,प्रकाशित पत्रिकाओं, न्यूजलेटर्स, सरकारी उपलब्ध प्रकाशनों, बुलेटिन्स् व नीति निधारण के प्रलेखों का संग्रह करना।
6. बिना किसी भेद-भाव के डिजीटल प्रलेख सेवा सार्वजनिक रूप से जनता,संस्थाओं मय पुस्तकालयों को उपलब्ध कराना।
7. डिजीटल संग्रह के निर्माण व प्रबंधं के बारे में प्रशिक्षण प्रदान करना।

7. पुस्तकालय व सूचना विज्ञान शिक्षा का पुनर्गठन

शिक्षा एवं प्रशिक्षण सुविधाऐं (Educational and Training Facilities) पुस्तकालय व सूचना विज्ञान प्रबंधंन के क्षेत्र में मानव शक्ति की आवश्यकता का निर्धारण करने की आवश्यकता है। इस क्षेत्र से सम्बन्धित और लगातार शिक्षण कार्यक्रम मय बदलाव व नवीन प्रर्वतन भी इस विषय में गहन शोध व विकास की मांग करता है। इस विषय क्षेत्र में नवीनतम विकास के बारे में जानने हेतु पुस्तकालय व सूचना विज्ञान के क्षेत्र के व्यवसायिओं को प्रशिक्षित करने की आवश्यकता है। राष्ट्रीय स्तर की एक संस्था उन्नति के प्रशिक्षण व शोध एवं विकास के लिए स्थापित करने की आवश्यकता हैं जो सम्बन्धित क्षेत्र में लगातार प्रशिक्षण कार्यक्रम और लगातार शिक्षण कार्यक्रम मय नव प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले इस क्षेत्र से सम्बन्धित व्यवसायियों को प्रशिक्षण देना प्रारम्भ करे। यह संस्था पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान में शोध व प्रबंधन कार्यक्रम प्रारम्भ करावें मय नए शोध के क्षेत्र में भी।

7.1 राष्ट्रीय शोध संस्था के उददेश्य :

1. पुस्तकालय व सूचना विज्ञान विषय में शोध व विकास कार्य करके योगदान प्रदान करे।
2. पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान के व्यवसायियों को सही ढंग से प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाकर लगातार शिक्षा में

योगदान प्रदान करे। साथ में नये प्रशिक्षुओं को भी प्रशिक्षण देना। इसका उद्देश्य प्रबंधंकारी कुशलता विकसित करना और सूचना तकनीकी योग्यता को वर्तमान में पुस्तकालयों में कार्यरत कर्मचारियों को विकसित कराना।

3. उच्चस्तरीय गुणवत्ता वाले प्रकाशन, व शोध रिपोर्टस प्रकाशित करवाना। जैसे-सूचना एवं विज्ञान के क्षेत्र में अन्तर्राष्ट्रीय पत्रिका का प्रकाशन करवाना।
4. मोनोग्राफर्स व शोध रिपोर्टस् प्रकाशित करवाना।
5. पुस्तकालय विज्ञान के सभी पहलूओं पर ई-लर्निंग मोड्यूल्स (Modules) तैयार करना।
6. पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान के क्षेत्र में शोध व व्यवसायिकयी विचारों को आपस में अदला-बदली करने के लिए राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय सेमीनार व कान्फ्रेन्स करवाने का आयोजन करना।
7. शोध की गतिविधियों के एक भाग में ओपन सोर्स सोफ्टवेयर सोल्यूशन (Open Source Software Solution) पर कार्य करने के लिए एक टीम का चयन करना।
8. विभिन्न प्लेटफार्म्स से सूचनाओं की बदला बदली करने हेतु खुले मापदण्डों को विकसित करना।
9. पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान के क्षेत्र में एक वेब पोर्टल (Web Portal) विकसित करना।
10. पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान और उससे सम्बन्धित विषय क्षेत्र जैसे कम्प्यूटर का प्रयोग, सूचना संचार तकनीकी और इसी प्रकार के अन्य विषयों के राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के संगठनों के साथ सहयोग बनाए रखना।

7.2 पुस्तकालयों पर राष्ट्रीय मिशन

विस्तृत विचार-विनिमय के पश्चात् संस्कृति मंत्रालय ने अन्त में ग्रंथालय पर राष्ट्रीय कमीशन (National Commission on Libraries) की स्थापना की घोषणा 4 मई 2012 की तथा इसके संदर्भ में एक उच्चस्तरीय कमेटी की स्थापना की जिसके चेयरमेन प्रो. दीपक पेंटल,पूर्व वाईस चान्सलर, दिल्ली विश्वविद्यालय को नियुक्त किया मय नौ (9) अन्य सदस्यों को तीन वर्ष के लिए नियुक्त किया। भारत के संस्कृति पुस्तकालय के मंत्रालय के सचिव इस कमेटी के सदस्य सचिव है।

भारतवर्ष के लिए पुस्तकालय व सूचना पद्धति पर राष्ट्रीय मिशन के निम्नलिखित प्रस्तावित उद्देश्य होगें :-

1. पुस्तकालय सूचना विज्ञान के क्षेत्र में राष्ट्रीय महत्व के सभी मामलों के बारें में भारत सरकार को सलाह देना।
2. पुस्तकालय क्षेत्र के विकास के लिए लम्बी अवधि की योजना तैयार करना। अतिरिक्त विभिन्न प्रोजेक्टस् को मंजूरी प्रदान करना व भारतवर्ष के लिए पुस्तकालय व सूचना पद्धति पर राष्ट्रीय नीति तैयार करना।
3. राज्य सरकार से पुस्तकालय मामलों पर परस्पर संबंध स्थापित करना और विशेषकर सार्वजनिक पुस्तकालयों के मामलों में।
4. पुस्तकालय पुस्तक संग्रह, सेवाओं, तकनीकी कार्यो, इन्फ्रास्ट्रक्चर और सभी प्रकार के पुस्तकालयों के प्रश्नों के जवाब देने के लिए मानदण्ड स्थापित करना तथा साथ में गुणवत्ता वाले मापदण्ड तैयार करना।
5. पुस्तकालय व सूचना विज्ञान के क्षेत्र में विकास हेतु कारपोरेट सेक्टर, फिलोन्थ्रोफीक संगठनों व साथ में द्वीपक्षीय व अर्न्तराष्ट्रीय ऐजेन्सीयों से साझेदारी को प्रोत्साहित व उत्साहित करना।
6. पुस्तकालय व सूचना विज्ञान की शिक्षा व सेवा, प्रशिक्षण सुविधाऐं व अन्य ऐजेन्सीयों के साथ कार्य करना जैसे यू.जी.सी. व विश्वविद्यालयों के साथ वर्तमान स्थिति का आंकलन व पुनर्विचार करना।
7. जो सम्बन्धित मंत्रालय है जैसे सांस्कृतिक मंत्रालय, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, सूचना व तकनीकी मंत्रालय व पंचायती राज्य विभाग आदि-आदि से तालमेल बैठाए रखना ताकि राष्ट्रीय ज्ञान कमीशन (NKC) की सिफारिशों व प्रबन्ध को फलीभूत किया जा सके।
8. अन्य राष्ट्रीय संस्थाओं जैसे विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (UGC) तकनीकी शिक्षा के लिए अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (AICTE), राजा

राममोहन राय पुस्तकालय फाउण्डेशन (RRRLF), वैज्ञानिक व औद्योगिक शोध परिषद (CSIR), भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् (ICAR), भारतीय औषध शोध परिषद् (ICRM), भारतीय सामाजिक विज्ञान परिषद् (ICSSR) और अन्य इसी प्रकार की संस्थाओं से आपस में तालमेल बनाए रखने से राष्ट्रीय ज्ञान कमीशन (NKC) की सिफारिशों व प्रबंधं को फलीभूत किया जा सके।

9. दूसरे देशों की ऐसी प्रतिरूपी ऐजेन्सीज के साथ काम करे जिससे सहकारिता के क्षेत्रों की खोज हो सकेगी और उससे भारतीय पुस्तकालय व सूचना केन्द्रों को मजबूती मिलेगी।

10. जन सहयोग को प्राप्त करने के लिए मीडिया व इस विषय के समर्थन का सहारा लेना पड़ेगा जिसमें ग्रन्थों की डिलीवरी, उपयोग, फायदे और प्रभाव के सबूत पेश करने होगें।

11. राज्य सरकारों को जिन्होने ग्रन्थालय अधिनियम पारित नहीं किया है उसको राज्य पुस्तकालय अधिनियम का प्रारूप बनाने में मदद करें।

पूर्णकालिक मुख्य-मुख्य कर्मचारियों की नियुक्ति

मंत्रालय को मुख्य-मुख्य कर्मचारियों की नियुक्ति करने के लिए शीघ्र कदम उठाए जाने चाहिए। जिससे इस मिशन के प्रलेख में दर्शाई गई सभी गतिविधियों का क्रियान्वयन किया जा सके। मिशन के प्रस्ताव की प्रारम्भिक स्थिति में कर्मचारी पैटर्न की सिफारिश की गई और इसके अतिरिक्त उचित संख्या में कर्मचारियों की नियुक्ति की जाए।

निदेशक इस मिशन का निदेशक (प्रतिनियुक्ति पर) को पुस्तकालय व सूचना विज्ञान में डाक्टर की पदवी वाला होना चाहिए तथा वेतन श्रृंखला रूपये 37,400/- से 67,000/- और साथ में ग्रेड पे रूपये 10,000/- प्रतिमाह व कम से कम 5 वर्ष तक के लिए यह पद होना चाहिए।

सहायक निदेशक सहायक निदेशक (प्रतिनियुक्ति पर) जिनकी वेतन श्रृंखला केन्द्रिय सेक्रेटरिऐट पुस्तकालय (सांस्कृतिक मंत्रालय) नई दिल्ली के बराबर होगी। इनमें एक पुस्तकालय एवम् सूचना विज्ञान से सम्बन्धित होगा, दूसरा व्यक्ति सूचना संचार तकनीकी से सम्बन्धित व तीसरा प्रशासनीय व लेखा विभाग से सम्बन्धित व्यक्ति होगा। प्रत्येक सहायक निदेशक को कम से कम दो इस व्यवसाय से सम्बन्धित कर्मचारी, कम्प्यूटर ओपरेटर्स व कम से कम सहायक कर्मचारी जो ठेके पद्धति से कार्यरत होंगे, सहायक कार्यकर्ता मिलेगें।

इन्फ्रास्ट्रक्चर का विकास इस मिशन के कर्मचारियों की नियुक्ति के पश्चात् शीघ्र ही आवश्यकता होगी, कम से कम इन्फ्रास्ट्रक्चर की जिसमें स्थान (स्वतन्त्रत अथवा किराए का भवन) सूचना संचार तकनीकी तथा रोजमर्रा के कार्य करने वालों की आदि-आदि।

वेबसाइट का विकास एक बार जब पूर्ण रूप से इस मिशन के कार्यालय का कार्य शुरू हो जाए तब यह एन एल एम वेबसाइट व उसके ओबजेक्टीव्ज को अपलोड कर सकता है। यह समाज के कई समुदाय से उनकी राय पुछने में सहायक होगा जिससे इस मिशन के प्रलेख में निहित कार्यो को फलीभूत किया जा सके।

आधारभूत आवश्यकताओं के पूर्ण होने के शीघ्र पश्चात् यह मिशन अपनी क्रियाओं के अनुसार कार्यवाही शुरू करने के विभिन्न उप-ग्रुप्स में बांट कर सार्वजनिक रूचि के ठोस नतीजे निकालेगा, जिससे कि ग्रन्थालयों के राष्ट्रीय आयोग के स्थापित होने के कारणों को सिद्ध कर सके।

पुस्तकालय पर राष्ट्रीय आयोग जैसा कि राष्ट्रीय ज्ञान कमीशन की सिफारिशों और उसके पुस्तकालयों पर वर्किंग ग्रुप (Working Group) के अनुसार, एक बार पुस्तकालयों पर राष्ट्रीय मिशन स्थापित हो जाएंगा, तब कम से कम तीन वर्षो की अवधि के बाद पुस्तकालयों पर राष्ट्रीय आयोग रूपान्तरित हो जाएगा। इस आयोग से यह आशा कि जाती है। कि वह राष्ट्रीय हित में निम्नलिखित क्षेत्रों में अपने मिशन के कार्यक्षेत्र के बाहर भी विस्तृत भूमिका निभाएगा। एक गम्भीर विचार नामकरण बदलने के लिए होना चाहिए तथा इसका नाम बदलकर "पुस्तकालय व सूचना पद्धति पर राष्ट्रीय आयोग" होना चाहिए।

पुस्तकालय पर राष्ट्रीय आयोग जैसा कि राष्ट्रीय ज्ञान कमीशन की सिफारिशों और उसके पुस्तकालयों पर वर्किंग

ग्रुप (Working Group) के अनुसार एक बार पुस्तकालयों पर राष्ट्रीय मिशन स्थापित हो जाएगा तब कम से कम तीन वर्षों की अवधि के बाद पुस्तकालयों पर राष्ट्रीय आयोग रूपान्तरित हो जाएगा। इस आयोग से यह आशा कि जाती है, कि वह राष्ट्रीय हित में निम्नलिखित क्षेत्रों में अपने मिशन के कार्यक्षेत्र के बाहर भी विस्तृत भूमिका निभाएगा:

1. इस आयोग से यह आशा की जाती है कि वह पुस्तकालय व सूचना पद्धति में इस देश में ठोस सुधार करे। पुस्तकालय व सूचना सेवाओं का स्तर बढाऐ जो ज्ञान के समाज की अति आवश्यकता के अनुरूप हो। तकनीकी दृष्टि से इसे नवीनतम व अपडेट बनाऐ रखें, मानवशक्ति व प्रशिक्षण प्रदान करे और पुस्तकालय का राष्ट्रीय नेटवर्क स्थापित करे।
2. इस आयोग के कार्यक्षेत्र में इस देश के सभी पुस्तकालय मय पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान की शिक्षा और शोध आते हैं। अभी यह प्रारम्भिक अवस्था में मिशन है और फिर इसे यू.जी.सी. व मानव संसाधन विकास मंत्रालय के साथ सहयोग से भी कार्य करना चाहिए। इसे पुस्तकालय व सूचना विज्ञान की शिक्षा पद्धति में भी सुधार वर्तमान परिस्थितियों के अनुरूप करना चाहिए।
3. राष्ट्रीय सर्वोच्च शिखर पर यह कमीशन योजना व नीति निर्धारण का कार्य करेगी और केन्द्रिय व राज्य की सरकारों को पुस्तकालय सम्बन्धित मामलों में सलाह देगी।
4. आयोग से यह आशा कि जाती है कि अन्तर्राष्ट्रीय ऐजेन्सीज व संस्थाओं से संबंध बनाए रखेगी और पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान के विकास के लिए व राज्य सरकारों के साथ अर्न्तगति करने को प्रोत्साहित करेगी। साथ में सार्वजनिक व प्राईवेट सहकारिता को भी बढ़ावा देगी।
5. यह आयोग राष्ट्रीय सूचना कमीशन व सूचना तकनीकी मंत्रालय की सलाह से राष्ट्रीय डिजीटल पुस्तकालय नीतियों व मानदण्डों को तैयार करने के लिए जिम्मेदार होगा जो पुस्तकालय व सूचना सेवा संभाग के अनुरूप होना चाहिए। वर्तमान में राष्ट्रीय नीतियों अथवा मानदण्डों के बिना विभिन्न प्रकार के पुस्तकालयों में डिजीटाईजेशन गतिविधियॉ चल रही हैं।
6. इस आयोग का शीर्ष अधिकारी महानिदेशक होगा। जिसकी वेतन श्रृंखला अतिरिक्त सचिव के बराबर होनी चाहिए मय मिलती जुलती शर्तों व परिस्थितियों के महानिदेशक, राष्ट्रीय पुस्तकालय पुरातत्व जो संस्कृति मंत्रालय के अधीन है को यह सुविधाऐं प्रदान करनी चाहिए।
7. ज्ञान के संसाधनों का एक राष्ट्रीय स्तर का नेटवर्क निर्माण के लिए आवश्यक कदम उठाऐ जिससे पुस्तकालय व सूचना सेक्टर में एकेडेमिक व शोध स्तर को सहयोग मिले तथा सूचनाओं तक पहुँचने में सरलता लाई जा सके।

उपसंहार - अत: मिशन हो या आयोग इसके कार्य व गतिविधियाँ स्पष्ट होना चाहिए जो कि पुस्तकालय व सूचना पद्धति में सुधार ला सके, देश में पुस्तकालय व सूचना सेवाओं के स्तर को बढाया जा सके जिससे ज्ञान के समाज की अति आवश्यक आवश्यकताओं के अनुरूप बनाया जा सके, तकनीकी दृष्टि से अपडेट किया जा सके, राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय नौकरी /व्यवसाय के बाजार के अनुसार मानव शक्ति को तैयार व प्रशिक्षण दिया जा सके तथा राष्ट्रीय स्तर पर पुस्तकालयों का नेटवर्क को स्थापित करना चाहिए। शिक्षा में राष्ट्रीय मिशन द्वारा सूचना संचार तकनीकी के द्वारा सामंजस्य बनाने का प्रयास किया जाना चाहिए जो राष्ट्रीय ज्ञान नेटवर्क को मदद पहुँचा सकेगा।

सुबह सुबह माथा गरम, कंधे पर वैताल,
लहर उठाए किस तरह, उम्मीदों का ताल।।

- **यश मालवीय**

पुस्तकें: मनुष्य की अभिन्न मित्र

डॉ- राजेश कुमार मिश्रा एवं श्रीमती पूर्णिमा श्रीवास्तव
उष्णकटिबंधीय वन अनुसंधान संस्थान, जबलपुर

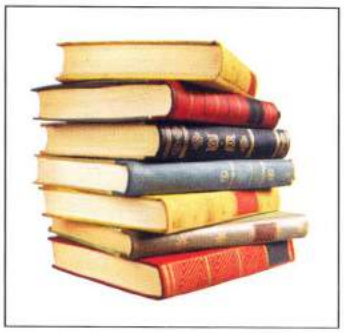

पुस्तकें ज्ञान का अपार भंडार ही नहीं वरन् हमारी सच्ची मित्र भी हैं। पुस्तक के बिना ज्ञान की कल्पना नहीं की जा सकती है। उच्च स्तरीय ज्ञान अच्छे लेखक की पुस्तकों से ही प्राप्त होता है। पुस्तकें ज्ञान का स्थाई भण्डार तो है ही, वे बच्चों को अच्छे विचार और संस्कार भी देती है। पुस्तकें हमारी कमजोरियों, बुराइयों को सुधारने के लिये मार्गदर्शक और मित्र का काम भी करती है। पुस्तकों का उपहार एक प्रेरक विचार का उपहार है। इसलिए, पुस्तकों के बगीचे में प्रवेश करके हमें अपने जीवन को महकाना चाहिए। यह सबसे सस्ता, सुंदर और स्थाई आधार है-प्रगति के पथ पर आगे बढ़ने का।

एक बार महात्मा गांधी जी से किसी ने प्रश्न किया कि रामायण को सही माना जाए अथवा नहीं तो महात्माजी ने उस आदमी को यह उत्तर दिया-कि जब रामायण की रचना की गई थी तो वे उस समय नहीं थे तब मैं कैसे कह दूं कि वह सही है या गलत है, पर एक बात जरुर है कि मैं इसे पढ़ने से सही हो गया हूँ अगर तुम चाहो तो इसे आजमा सकते हो।

पुस्तकों के सन्दर्भ में एक बार महात्मा गाँधी जी अपने विचार अभिव्यक्त करते हुए कहा था कि अच्छी पुस्तकें पास होने पर उन्हें मित्रों की कमी नहीं खटकती है वरन वे जितना पुस्तकों का अध्ययन करते हैं, पुस्तकें उन्हें उतनी ही उपयोगी मित्र के समान महसूस होती हैं। पुस्तकें एक तरह से जाग्रत देवता हैं, उनका अध्ययन, मनन और चिंतन कर उनसे तत्काल लाभ प्राप्त किया जा सकता है। मनुष्य को प्रतिदिन सदग्रंथों का अवलोकन करना चाहिए।

पुस्तकों का अध्ययन करते समय मनुष्य सूक्ष्म विचारलोक में विचरने लगता है और वह उनमें तल्लीन होकर बाहरी दुनिया के व्यापारों और हो हुल्लड़ को भी भूल जाता है। सूक्ष्म विचारलोक में भ्रमण करते समय आदमी की स्थिति समाधिग्रस्त योगियों की तरह हो जाती है और इस स्थिति में आदमी दृश्य जगत से उठकर अदृश्य संसार में सूक्ष्मलोक में विचरण करने लगता है और कई दिव्य चेतन विचारों का मानसिक स्पर्श प्राप्त करता है जैसे योगी दिव्य चेतना का सानिध्य प्राप्त करता है। ध्यानावस्था में पुस्तकों का अध्ययन करना एक ऐसी साधना है जिसके द्वारा आदमी अपने जीवन का पर्याप्त विकास कर सकता है।

दुखी चिंतित और मनोविकारों से ग्रस्त लोगों के लिए पुस्तकें अमृत के समान होती हैं जिनका सानिध्य पाकर आदमी अपने दु:ख-दर्द-क्लेश सब भूल जाता है। अच्छी पुस्तकें मनुष्य को धैर्य, शांति व सांत्वना प्रदान करती हैं। किसी ने कहा है कि ''सरस पुस्तकों से रोग पीड़ित व्यक्ति को बड़ी शांति मिलती हैं। जैसे स्नेहमयी जननी की मीठी मीठी थपकियों से बच्चे को जल्दी नींद आ जाती है वैसे ही मन या शरीर की पीड़ा को शांत करने के उत्तम पुस्तकों का अवलंबन लेना सुखकर होता है''।

अच्छी पुस्तकें हमारा सही मार्ग प्रशस्त करती है और उत्तम जीवन जीने का सन्देश हमें प्रदान करती हैं। पुस्तकों से सच्ची मित्रता निभाने वाले ही वर्तमान समय में सफलता हासिल कर रहे हैं। इस मूल मंत्र को समझे बिना विद्यार्थियों को सफलता नहीं मिल सकती। लिखित शब्द को प्रकाशित

इसलिए कहा जाता है कि उन शब्दों के भीतर हमें हमारे जीवन-पथ के लिए प्रकाश मिल सकता है। वर्तमान समय में जहां मुद्रित पुस्तकों के साथ-साथ ई-पुस्तकों का भी प्रचलन बढ रहा है, पुस्तकों की उपलब्धता सुगम हो रही है। ऐसे में विद्यार्थियों को अधिकाधिक संदर्भ सामग्री के द्वारा अपने अध्ययन को परिपूर्ण बनाने का प्रयास करना चाहिए।

आजकल पुस्तकें पढ़ने के लिये किसी के पास समय नहीं है। इस कार्य को रुचि बनाकर निरंतर जारी रखने का तो प्रश्न ही नहीं है। वैसे भी भारत वर्ष में साक्षरता का प्रतिशत इतना कम है कि पुस्तकें पढ़ने के लिये चर्चा चलाना व्यर्थ समझा जाता है। हमारे युवा भी विश्वविद्यालय की पाठ्यपुस्तकें पढ़ लेने मात्र में रुचि रखते हैं। पाठ्यपुस्तकों के अतिरिक्त भी कुछ पढ़ने योग्य है इस पर सोचना व्यर्थ समझते हैं। परिणाम यह है कि पढ़े-लिखे व्यक्ति भी समय की कमी बता पुस्तक न पढ़ने को बहाना खोज लेते हैं परिणाम यह है कि इतने विशाल देश में पुस्तक प्रकाशन व्यवसाय आज भी बाल अवस्था में घुटने के बल चल रहा है। फिर जब से 'दूरदर्शन' का विस्तार हुआ है, पुस्तकों के दूर से दर्शन होना भी घरों में दुर्लभ हो रहे हैं। समयाभाव का बहाना क्या हम सचमुच इतने व्यस्त हैं कि पुस्तकों को पढ़ने का हमें समय ही नहीं मिलता ? इस प्रश्न पर विचार करते हुए याद आती है हमारे पूर्व वित्त मंत्री जी श्री मधु दंडवते की। उनसे श्रीमती उषा महाजन ने प्रश्न किया था 'इतनी व्यस्तता के बावजूद आप आजकल भी पढ़ने का वक्त निकाल पाते हैं ?' श्री दंडवते ने उत्तर दिया था- 'जिसके पास जीने के लिये वक्त है, उसके पास हर चीज का रस लेने के लिये वक्त है। साहित्य के अलावा पेंटिंग में भी मेरी रुचि है।' हम कल्पना कर सकते हैं कि भारत के वित्त मंत्री के पास साहित्य पढ़ने के लिये समय निकालना कितना कठिन होगा किन्तु जहां चाह वहां राह।

ऐसा नहीं है कि यही केवल एक उदाहरण है। अमेरिका के पूर्व राष्ट्रपति रोनाल्ड रीगन ने पढ़ने के संबंध में कहा है 'मैं जीवन भर तगड़ा पाठक रहा हूं। पुस्तकों के नाम मेरे जहन में आते हैं और मैं उनकी ओर पलट कर देखता हूं तो लगता है कि उन्होंने बुराई पर अच्छाई की एक दृढ़ आस्था मुझमें पैदा की। मैंने अपने बच्चों को भी उस आनंद से अवगत कराने का प्रयत्न किया, जो पढ़ने में मिलता है। वस्तुत: आपके पास कोई अच्छी पुस्तक हो तो आप कभी भी अकेलेपन का अनुभव नहीं कर सकते। मेरे लिये यंत्रणा का अर्थ होगा पूरी रात किसी ऐसे कमरे में रहना जिसमें एक भी पुस्तक न हो।'

इन दो उद्धरणों से यह सिद्ध होता है कि कोई भी व्यक्ति कितना ही व्यस्त हो अपने कल्याण और आनंद के लिये पुस्तक पढ़ने का समय निकाल ही लेता है। समय की समस्या इतनी नहीं है कि जितनी रुचि की। रुचि का संसार न केवल हमें मनोरंजन देता है वरन् ज्ञान के साथ चिंतन-मनन करने की प्रेरणा भी देता है। इतना ही नहीं हमारे दैनिक जीवन की समस्याओं के हल के लिये पुस्तकें हमारे मित्र, मार्गदर्शक की भूमिका का निर्वाह भी करती है। पुस्तकें सिर्फ उपन्यास, कहानी नहीं है, वे दर्शन, प्रबंध, व्यवहार, नीति भी अपने आप में समेटे हुए हैं। इसलिये पुस्तकों के संसार में प्रवेश करने का अर्थ है चिंता, परेशानी, दु:ख पीड़ा और तनाव से मुक्ति। बस करना इतना है कि लाखों वर्षों के अनुभव से प्राप्त ज्ञान के भण्डार में अपनी समस्या से संबंधित पुस्तक खोजी जाये। एमो ब्रासन एल्काड ने सच कहा है 'अच्छी पुस्तक वह है, जो आशा से खोली जावे और लाभ से बंद की जावे।' क्योंकि विद्वान करलाइल महोदय के अनुसार 'मानव जाति ने जो कुछ किया, सोचा और पाया, वह पुस्तक के जादू भरे पृष्ठों में सुरक्षित है।' पुस्तकों के अध्ययन से आर्थिक कष्ट कभी आड़े नहीं आ सकता। हम स्वागत-सत्कार में आज जितना खर्च करते हैं, उसमें अनेक पुस्तकें क्रय की जा सकती है। हम व्यक्तिगत आदतों पर प्रतिदिन जो खर्च करते हैं, उससे प्रतिदिन एक पुस्तक तो क्रय की ही जा सकती है। एक बार इस अध्ययन में रुचि होने का विलंब है।

प्रसिद्ध साहित्यकार जार्ज बर्नाड शाह ने कहा है- 'श्रेष्ठ पुस्तकों के अध्ययन से सबसे कम खर्चीला मनोरंजन होता है और वह स्थाई होता है।' रुचि जागृत करें। हर बड़े शहर व कस्बे में कई सार्वजनिक पुस्तकालय आजकल उपलब्ध हैं, जहां नाममात्र के शुल्क पर कोई भी सदस्य बन सकता है। यह भी एक सरल उपाय है पुस्तकें पढ़ने का। इतना ही नहीं छोटे ग्रामों में ग्राम पंचायत मुख्यालयों पर शासन ने ग्राम पंचायतों में पुस्तकें पढ़ने के लिये दी हैं, जिन्हें नि:शुल्क दिया जाता है। किन्तु उन्हें पढ़ने वाला कोई नहीं है। इन पुस्तकालयों में भी बहुत अच्छा साहित्य थोड़ी सी मेहनत से खोजा जा सकता है। किन्तु केवल चाह का प्रश्न है।

लेकिन यदि हमें पुस्तकें पढ़ने में रुचि जागृत हो जाये तो फिर आनंद देने वाली पुस्तकें हम क्रय करना ही पसंद करेंगे क्योंकि उनसे हमेशा हमारा मार्गदर्शन होता रहता है। उन्हें बार-बार पढ़ा जाना आवश्यक है। इसलिये अपने निवास पर एक छोटा-सा पुस्तकालय होना एक सुशिक्षित और शिष्ट समाज की अनिवार्यता बन जाती है। रस्किन महोदय ने सच ही कहा- 'यदि कोई पुस्तक पढ़ने योग्य है तो वह खरीदने के योग्य भी है' पुस्तक पढ़ने की आदत का सबसे बड़ा लाभ है कि हम अपनी गलतियों, कमजोरियों को जानने, समझने लगते हैं। सामान्य रूप से हमारे मित्र या शुभचिंतक इनका उल्लेख हमारे सामने नहीं करते और हमारी कमजोरियां ज्यों की त्यों बनी रहती है। मान लें कि इन्हें बताने के लिये कोई मिल भी जाये तो मानव मनोविज्ञान कहता है कि हम उन्हें स्वीकार नहीं करेंगे वरन् तर्क देने लगेंगे। लेकिन यदि किसी पुस्तक के मनन करते समय लगे ये कमजोरियां हमारे अंदर हैं तो हम स्वीकार कर लेते हैं। संभावना है कि हम सुधार करें क्योंकि तर्क या विवाद के लिये कोई कारण नहीं होता वह निर्णय हमारा अपना होता है। इसलिये, यह सुधार अपने आप हमारे जीवन में आता है।

पुस्तकों को उपहार में देना अपने आप में एक आनंद है। क्योंकि जब हम किसी को अच्छा साहित्य उपहार में देते हैं तो एक विचार की प्रेरणा देते हैं। स्थाई साधन देते हैं। हमारे देश में पुस्तकें सबसे कम उपहार में दी जाती और इसकी परम्परा अभी आम नहीं हुई है। विचार या प्रेरणा देने का इससे सस्ता, सुन्दर और स्थाई साधन दुनिया में और कोई वस्तु नहीं है। इसलिये बूबी महोदय ने ठीक ही कहा है 'वह मुझे सुंदर उपहार देता है जो मुझे अपूर्व विचार देता है।' अत: यह आवश्यक है कि हम अगले किसी भी उत्सव में अपने मित्रों को श्रेष्ठ पुस्तकों का उपहार दें। पुस्तकों को पढ़ने का लाभ आपको जो मिलता है, वह तो है ही किन्तु इसके जो संस्कार बच्चों को मिलते हैं, वह अनमोल है। उसकी तो कल्पना ही नहीं की जा सकती। साहित्य का लगाव एक बार लग गया तो उसका प्रवाह किसी भी दिशा में हो सकता है।

पुस्तकें ज्ञान का विपुल भंडार ही नहीं बल्कि यह मानव को मानव बनाने में सहायक सिद्ध होती है। यही कारण है कि जबतक मानव सभ्यता रहेगी तब तक किताबों की प्रासंगिकता केवल ज्ञान के संदर्भ में ही नहीं बल्कि मानवीय संदर्भो में भी जिंदा रहेगी। किताबों से हर इंसान का सरोकार होना चाहिए। जब हर इंसान का किताबों से सरोकार रहेगा तो इसका जीवंत प्रतिबिंब हमारे समाज को प्रभावित करेगा।

आज जब शिक्षालयों में अध्ययन की रुचि कम हो रही है और पालकों के सामने बच्चे समस्या बन खड़े हो रहे हैं तब अच्छे संस्कारों के संकट के इस समय में पुस्तक पढ़ने की आदत मशाल बन कर हमें कठिनाइयों और असफलता से बचा सकती है। अरबी में एक कहावत हैं 'पुस्तक जेब में रखा हुआ एक बगीचा है' पुस्तकों को इस संसार में जहां गुलाब के पुष्प खिलते हैं, वहां कांटे भी है। पुस्तकों के चयन में हमें अवश्य सतर्कता रखनी चाहिए। क्योंकि बुरी पुस्तकें आज बाजार में भरी पड़ी है। वे सस्ती भी है और आकर्षक भी है। पुस्तकों के संसार में प्रवेश करतें समय हमें अपने घर में पल रहे बच्चों के विकास पर भी ध्यान देना चाहिए। एक बार साहित्य का आनंद उठा लिया फिर कोई खतरा नहीं है। इस बगीचे से सुगंधित पुष्पों का आनंद लेना चाहिए। हमारा जीवन भी महकेगा। उदास चेहरे पर आनंद की एक गुलाबी लालिमा होगी और हर समस्या समाधान लेकर ही हमारे सामने खड़ी होगी। बस एक कदम का इंतजार है, पुस्तकों के संसार में रखने का।

ज्ञानार्जन के लिए पुस्तकों की आवश्यकता एवं महत्ता सर्वोपरि है। जिंदगी के अकेलेपन में पुस्तकें हमारे जीवन में मित्र का काम करती हैं। पुस्तकों का हमारे जीवन में अधिक महत्व हैं। पुस्तकों से मिले ज्ञान के माध्यम से ही मनुष्य अपना विकास करता है। पुस्तकों के माध्यम से ही इतिहास की जानकारी हमें आसानी से उपलब्ध हो जाती है। पुस्तकों के माध्यम से हमें कई महापुरुषों व ज्ञानियों की ज्ञानवर्धक बातों से हमें नई ऊर्जा व प्रेरणा मिलती हैं। इनके माध्यम से हमें जीवन की कठिनाइयों से निपटने में काफी मदद मिलती है। जब तक हमारे जीवन में इन पुस्तकों का महत्व है, तब तक हमें जीवन जीने का आधार मिलता रहेगा, क्योंकि इन पुस्तकों से ही हमें देश दुनिया की जानकारी के साथ हमारे भारत वर्ष एवं उन तमाम महापुरुषों की जीवन गाथा से परिचय पाते हैं, जो आज इतिहास बन चुके हैं।

मनुष्य ज़िन्दगी भर सीखता है और इस प्रक्रिया में पुस्तकें अहम् भूमिका निभाती हैं। पुस्तकों की परम्परा अत्यंत प्राचीन

हैं। सबसे पहली पुस्तक वेद थी। वेद 'विद' धातु से उद्धृत है जिसका अर्थ ही है 'ज्ञान' ऋग्वेद में उल्लिखित गायत्री मंत्र आज भी घर-घर में उच्चारित होते हैं। मुन्डकोपनिषद में से ही हमारे राष्ट्रीय प्रतीक का पवित्र वाक्य 'सत्यमेव जयते' लिया गया। पहले विद्यार्थी गुरुओं से सुन कर ही पाठ याद कर लेते थे जिसे 'श्रुति' कहा जाता था पर ज्ञान के इस अथाह सागर को याद रखना और फिर पीढी दर पीढी संवाहित करने की आवश्यकता ने पुस्तकों को जन्म दिया। पुस्तकें मनुष्य की सबसे अच्छी मित्र होती हैं। बड़े-बड़े विद्वान, महापुरुष अच्छे पाठक भी रहे हैं। कहा जाता है कि बादशाह अकबर, साक्षर नहीं था पर उसे पुस्तकों का बहुत शौक था उसने एक विशाल पुस्तकालय बनवाया और विद्वानों से पुस्तकें पढवा कर ज्ञान अर्जित करता था।

आज इस कंप्यूटर, टी.वी. के युग में पुस्तकों के पाठक ज्यादा नहीं हैं ये कहना पूर्णत: सही नहीं है क्योंकि आज भी पढने के शौक़ीन लोगों के घरों को पुस्तकों से सजा देखा जा सकता है। पढने की आदत अगर बचपन से ही विकसित की जाए तो यह उम्र भर साथ रहती है। इसके लिए सही उम्र में अच्छी पुस्तकों का चयन आवश्यक है। इससे बच्चों में ज्ञान वृद्धि के साथ कल्पनाशीलता, रचनात्मकता, बौद्धिक क्षमता, भाषा ज्ञान, शब्द भण्डार वृद्धि, वर्तनी की शुद्धता, एकाग्रता और धैर्य जैसे कई गुणों का विकास होता है। वैज्ञानिक शोधों से यह स्पष्ट हो गया है कि जिन बच्चों में पुस्तकें पढ़ने की आदत है उनकी बौद्धिक क्षमता उन बच्चों से अधिक होती है जो अपना समय टी.वी. देखने या वीडियो गेम खेलने में व्यतीत करते हैं। किशोरावस्था में अच्छी पुस्तकें पढ़ने से मार्गदर्शन मिलता है और भविष्य की योजना बनाना आसान हो जाता है। पुस्तकें यात्रा के दौरान, प्रतीक्षारत वक्त में, उदासी के क्षणों में, शौक के रूप में, कई लम्हों में साथी बन जाती हैं, नयी-नयी सभ्यता और विभिन्न संस्कृति से हमारा परिचय कराती हैं, एकरसता और बोझिलता दूर करती हैं, हमारे आत्मिक, सामाजिक, मानसिक विकास में सहायक होती हैं, और मस्तिष्क को सोचने की नयी दिशा देती हैं।

कलम, आज उनकी जय बोल

जला अस्थियाँ बारी-बारी
चिटकाई जिनमें चिंगारी,
जो चढ़ गये पुण्यवेदी पर
लिए बिना गर्दन का मोल
कलम, आज उनकी जय बोल।

जो अगणित लघु दीप हमारे
तूफानों में एक किनारे,
जल-जलाकर बुझ गए किसी दिन
माँगा नहीं स्नेह मुँह खोल
कलम, आज उनकी जय बोल।

पीकर जिनकी लाल शिखाएँ
उगल रही सौ लपट दिशाएं,
जिनके सिंहनाद से सहमी
धरती रही अभी तक डोल
कलम, आज उनकी जय बोल।

अंधा चकाचौंध का मारा
क्या जाने इतिहास बेचारा,
साखी हैं उनकी महिमा के
सूर्य चन्द्र भूगोल खगोल
कलम, आज उनकी जय बोल।

– राष्ट्रकवि रामधारी सिंह 'दिनकर'

कार्बन पदचिह्न (Carbon Footprint) गणना : पर्यावरण प्रबंधन के लिए एक प्रभावी उपकरण

श्री दिनेश कुमार मीणा और श्री अजय कुमार
वर्षा वन अनुसन्धान संस्थान, जोरहाट

परिचय :

जलवायु परिवर्तन विश्व के सामने आज की सबसे प्रमुख चुनौतियों में से एक है। यह एक सर्वविदित सत्य है कि मनुष्य के कारण ग्रीन हाउस गैसों का उत्सर्जन पर्यावरण पर नकारात्मक प्रभाव डालता है। सबसे अधिक महत्वपूर्ण, मानवीय गतिविधि से उत्पन्न होने वाली ग्रीनहाउस गैसो में कार्बन डाईआक्साइड (CO_2) की मात्रा सबसे अधिक है जो कि पृथ्वी पर जलवायु परिवर्तन का सबसे प्रमुख कारण है। लगभग सभी मानव गतिविधियों से कार्बन डाइआक्साइड (CO_2) का उत्सर्जन होता है जैसे कि विद्युत उत्पादन के लिए जीवाश्म ईंधन का प्रयोग, खाना बनाने के लिए ईंधन व गैस का प्रयोग, ईंधनयुक्त वाहनों का प्रयोग आदि कार्बन डाइआक्साइड (CO_2) के उत्सर्जन के लिए उत्तरदायी हैं। इसके अतिरिक्त प्रत्येक मनुष्य प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से उत्पाद या सेवा के माध्यम से कार्बन डाइआक्साइड का उत्सर्जन हर क्षण कर रहा है। इन उत्पादों और सेवाओं से अन्य ग्रीन हाउस गैसों का भी उत्सर्जन होता है। जलवायु परिवर्तन स्थिति को न्यूनतम करने के लिए जरुरी है कि हमारे द्वारा जलवायु को प्रभावित करने वाले सभी कारकों का अध्ययन व आकलन करके इन कारकों को नियन्त्रित किया जाये। इसी दिशा में एक महत्पूर्ण उपकरण है कार्बन 'पदचिह्न'। कार्बन पदचिह्न प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से एक व्यक्ति, उत्पाद या घटना द्वारा, संगठन य संस्था द्वारा उत्सर्जित की गई कुल ग्रीन हाउस गैस का कार्बन डाइऑक्साइड इकाई के रूप में उत्सर्जन की गणना है। किसी भी संस्था या संगठन का कार्बन पदचिह्न का आकलन करना तथा उसके उत्सर्जन को कम करने की दिशा मे उठाया गया प्रथम कदम होता है तथा इस आकलन के आधार पर उस संस्था का उत्सर्जन कम करने के लिए सही नीति निर्धारण किया जा सकता है।

कार्बन पदचिह्न शब्द की उत्पत्ति :

कार्बन पदचिह्न का विकास पारिस्थितिक पदचिह्न से हुआ है जिसे पृथ्वी की पुनर्जीवित करने की पारिस्थितिकी क्षमता की तुलना में प्राकृतिक संसाधनों के मानव उपभोग का आंकलन करने के लिए पहली बार 1990 में ब्रिटिश कोलंबिया विश्वविद्यालय के योजनाकारों विलियम रीस और मथिस वैकेरनगेल के द्वारा विकसित किया गया। तभी से इसका उपयोग पारिस्थितिकी संसाधनों के उपयोग पर निगरानी रखने तथा उन्नत सतत् विकास के लिये वैज्ञानिको, व्यापारों, सरकारों, संस्थाओं तथा व्यक्ति विशेष के द्वारा व्यापक रुप से किया जा रहा है। इसी प्रकार कार्बन 'पदचिह्न' का उपयोग मानव गतिविधियों द्वारा निर्मित ग्रीन हाउस गैसों की कुल मात्रा का कार्बन डाइऑक्साइड इकाई के रूप में आकलन करने के लिए इस्तेमाल किया जा रहा है।

कार्बन पदचिह्न के विभिन्न प्रकार :

कार्बन पदचिह्न विभिन्न के प्रकार हैं, जैसे संगठन, व्यक्ति, उत्पाद, सेवा इत्यादि। विभिन्न प्रकार के पदचिह्न के आकलन के विभिन्न तरीके और सीमायें हैं।

संगठनात्मक आकलन में एक संगठन के साथ जुड़े प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से उत्सर्जन को मापना शामिल है। प्रत्यक्ष उत्सर्जन संगठन द्वारा जीवाश्म ईंधन के दहन वाले उपकरण या संगठन के स्वामित्व वाले वाहनों तथा संगठन की सुविधाओं के उपयोग में आने वाले उपकरणों (एयर कंडीशनिंग प्रणाली आदि) से किये जाने वाले उत्सर्जन को कहते हैं। परोक्ष उत्सर्जन संगठन की गतिविधियों का परिणाम हैं इस में संगठन स्वयं उत्सर्जन नहीं करता परन्तु इस को कार्य करने के लिए तृतीय पक्षों द्वारा प्रदान सुविधाएं जैसे वाहन, बिजली, पानी आदि उत्सर्जन का कारण बनते हैं।

उत्पाद के आकलन में एक उत्पाद के साथ जुड़े सभी उत्सर्जन शामिल है। जिसमे उत्पाद का कारखाना में बनने (कच्चे माल, प्रसंस्करण, विनिर्माण), वितरण (कारखाना से

खुदरा विक्रेताओं और खुदरा विक्रेताओं से उपभोक्ता तक), उपयोग (पूरे जीवनकाल में) तथा अंतिम निपटारे तक जितना भी उत्सर्जन हुआ है उसकी गणना शामिल है।

अन्य प्रकार के आकलन में घटनाओं, सेवाओं, वेब साइटों, यात्रा आदि के प्रयोग से होने वाले उत्सर्जन को मापा जा सकता है। इस तरह की गतिविधियों का प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से उत्सर्जन के आकलन का सिद्धांत वही रहेगा।

क्यों ले कार्बन पदचिह्न ?

कार्बन पदचिहन निम्न प्रयोजनों के लिए उपयोगी होते हैं :

- सार्वजनिक रूप से ग्रीन हाउस गैस उत्सर्जन को रिपोर्ट करने के लिए।
- ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन में कटौती का लक्ष्य निर्धारित करने के क्रम में।
- सबसे ज्यादा उत्सर्जन करने वाली गतिविधियों की पहचान करने के लिए।
- समय के साथ उत्सर्जन में परिवर्तन को मापने के लिए और कमी की प्रभावशीलता पर नजर रखने के लिए।

कार्बन पदचिह्न की गणना :

कार्बन पदचिह्न की गणना करने के लिए नीचे दी गई तालिका का प्रयोग किया जा सकता है। इस तालिका के द्वारा अपने, अपने परिवार, अपनी संस्था के कार्बन पदचिह्न की गणना की जा सकती है।

कार्बन पदचिह्न की गणना करने के लिए इंटरनेट पर कार्बन पदचिह्न कैलकुलेटर का उपयोग भी किया जा सकता है, उस के लिए कुछ महत्पूर्ण वेब साइट निम्न प्रकार है

1. http://www.carbonfootprint.com/calculator.aspx
2. http://www.tatapower.com/sustainability/carbon-footprint.aspx
3. http://www.zerofootprint.net/

गतिविधि/ईंधन का उपयोग	मात्रा	CO_2 (किलोग्राम)	नोट
परिवहन			
पेट्रोल ईंधन (लीटर)	1	2.33	निजी वाहन के रूप में इस्तेमाल ईंधन (लीटर)। कार पूल के मामले में, लोगों की कुल संख्या से कुल ईंधन की मात्रा विभाजित करते हैं।
डीजल ईंधन (लीटर)	1	2.68	
ऑटो एल.पी.जी. (किलोग्राम)	1	3.06	अगर आप कार चलाने के लिए एल.पी.जी. ईंधन का उपयोग करते हैं।
टैक्सी (किलोमीटर)	1	0.31	अगर आप सार्वजनिक परिवहन के इन साधनों का इस्तेमाल करते हैं तो अनुमानित दूरी में भरें।
लोकल बस	1	0.05	
ऑटोरिक्शा (किलोमीटर)	1	0.05	
लोकल ट्रेन (किलोमीटर)	1	0.10	
घरेलू उपयोग			
खाना पकाने के लिए रसोई गैस सिलेंडरों की संख्या	1	42.50	ये आप की आवासीय खपत को दर्शाते हैं। आप अपने रसोई गैस सिलेंडरों, सी.एन.जी. और बिजली के बिल से इसे प्राप्त कर सकते हैं।
घर में इस्तेमाल किया सी.एन.जी. (M^3)	1	1.82	(एक व्यक्ति का निकालने के लिए परिवार के सदस्यों की संख्या से कुल इस्तेमाल किया की गई बिजली, गैस सिलेंडर, सी.एन.जी. का भाग दे)
एक महीने में बिजली की खपत (KWh)	1	0.90	

4. कार्बन पदचिह्न कम करने के लिए साधारण तरीके :

एक व्यक्ति भी अंतर ला सकता है। पृथ्वी पर अपने कार्बन पदचिह्न को कम करने के लिए छोटे- छोटे महत्वपूर्ण कदम उठाये :

1. **प्रकाश के उपकरण बदले :** बल्ब की जगह अगर हम एक कॉम्पैक्ट फ्लोरोसेंट लाइट (CFL/LED) का इस्तेमाल करे तो प्रत्येक वर्ष लगभग कार्बन डाइऑक्साइड के 150 पाउंड तक की बचत कर सकते हैं।

2. **अधिक से अधिक रिसाइकिल करें :** बस अपने घर के आधे कचरे की रीसाइक्लिंग से कार्बन डाइऑक्साइड के लिए हर साल 2,400 पाउंड तक की बचत कर सकते हैं।

3. **वाहन की जाँच करें :** वाहन के टायर में सही मात्र में हवा और सही रखरखाव (समय पर सर्विस) से कार्बन डाइऑक्साइड के 20 पाउंड तक बचा सकते हैं।

4. **कम गर्म पानी का प्रयोग करें :** पानी गर्म करने के लिए काफ़ी मात्रा मे ऊर्जा की खपत होती है। इसलिए कम गर्म पानी के प्रयोग का मतलब अधिक बचत न केवल ऊर्जा के बिल में अपितु कार्बन डाइऑक्साइड के उत्सर्जन में भी।

5. **पैकेजिंग वाले उत्पादों से बचें :** कम पैकेजिंग वाले उत्पादों का प्रयोग करे ताकि अपना धन, पर्यावरण को बचा सके और कम से कम कचरा उत्पन्न हो, 10% कचरा कम कर के हम लगभग 1200 पाउंड तक कार्बन डाइऑक्साइड के उत्सर्जन को कम कर सकते हैं।

6. **वृक्ष लगाये :** एक वृक्ष अपने जीवनकाल में एक टन तक कार्बन डाइऑक्साइड अवशोषित कर सकता है।

7. **इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों को बंद करें :** जब उपयोग में नहीं हो तो टी.वी., रेफ्रिजिरेटर, कंप्यूटर अन्य इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों को बंद करके तथा कम ऊर्जा पर चलने वाले उपकरणों के प्रयोग से हम कार्बन डाइऑक्साइड के हजारों पाउंड प्रत्येक वर्ष हर घर से बचा सकते हैं।

निष्कर्ष :

कार्बन पदचिह्न को गणना करना पर्यावरण प्रबंधन के लिए एक प्रभावी उपकरण है। सरकारी और बड़े संगठनों को अपने कार्बन पदि्चह्न कम करने हेतु अपनी पर्यावरण नीतियों और व्यवहार बदलने के लिए ठोस कदम उठाने चाहिये लेकिन इसके साथ इस पृथ्वी को बचाने व भविष्य की पीढ़ी के लिए ये हमारी नैतिक और सामाजिक जिम्मेदारी है कि, व्यक्तिगत स्तर पर हम अपने कार्बन पदचिह्न कम करें।

थकने की क्या बात हो, जीना हमें जहान,
कंधे पर सामान है, पाँव-पाँव प्रस्थान।

दिल में है दरियादिली, पर खाली है जेब,
बिन घुँघरू कैसे बजे, खुशियों की पाजेब।

मरहम पट्टी संग रखे, संग रखें रूमाल,
सपने ही अब आपको करने लगे हलाल।

- यश मालवीय

कौंच (*म्यूकना प्यूरियेन्स*) औषधीय लता की उपयोगिता एवं प्रबन्धन

डॉ. बी. पी. टम्टा
वन अनुसंधान संस्थान, देहरादून

पौधे का विवरण : कौंच का वैज्ञानिक नाम *म्यूकना प्यूरियेन्स* है। यह एक लतायुक्त फलीदार पौधा है। हमारे देश में इस पौधे की कई प्रजातियां पायी जाती हैं। *म्यूकना प्यूरियेन्स* प्रजाति का ही अधिकतम उपयोग होता है। इस प्रजाति में भी दो प्रकार की जाति है। एक काले बीजों वाली कौंच तथा दूसरी सफेद बीजों वाली कौंच। इन दोनो रंगों के मिश्रण के आधार पर कौंच को और कई प्रकारों में बाँटा जा सकता है।

राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय बाजारों में काले बीजों वाली कौंच की अधिक मांग है। भारतीय स्तर पर दवा निर्माता संस्थाए काली कौंच का संग्रह वनों से करवाती है। वनवासी इन बीजों को एकत्र करके बड़ी ही सस्ती कीमत पर इनकी आपूर्ति करते है अन्य वन औषधि की तरह प्रारम्भिक संग्रहकारी और विक्रेताओं के बीच मध्यस्तर की कई कतार है।

कौंच की उपयोगिता : यू तो कौंच की हम सभी इसकी कलियों में उपस्थित छोटे-छोटे रोमों के कारण होने वाली असहनीय खुजली के कारण जानते हैं। पर, बतौर औषधीय गुणवत्ता के कारण केवल भारत ही नही दुनिया भर के चिकित्सकीय ग्रन्थों में इसे सम्माननीय स्थान प्राप्त है।

विश्व के किसी हिस्से में जमीन की उर्वरता बढ़ाने के लिए इसकी खेती की जाती है तो किसी हिस्से में बतौर औषधीय फसल के रूप में इसका उपयोग किया जाता है। भारत में अनंत काल से पौराणिक चिकित्सकों के अलावा आम लोग भी इस पौधे का उपयोग करते है। इस पौधे के सभी भाग औषधीय गुणों से परिपूर्ण है किन्तु अक्सर इसके बीजों का ही उपयोग किया जाता है।

हाल ही में हुए अनुसंधानों से जब यह पता चला कि भारतीय कौंच में एल-डोपा नामक प्राकृतिक रसायन पाया जाता है जिससे कि लाइलाज समझे जाने वाले पार्किन्सन नामक रोग को ठीक करने के गुण हैं, तो अचानक कौंच की

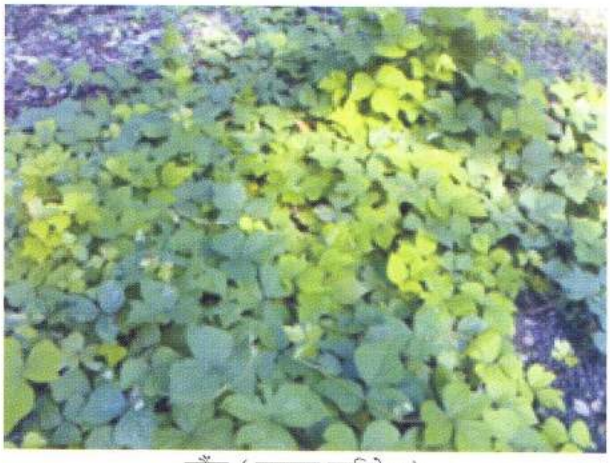

कौंच (*म्यूकना प्यूरियेन्स*)

मांग बढ़ गई जिससे वनों पर दबाव बढ़ा दिया जिससे कौंच की अवैध और अविवेकपूर्ण दोहन प्रारम्भ हो गया। काली कौंच में खुजली होने के कारण इसके सभी बीजों को एकत्रित करना कठिन कार्य है। बढ़ी हुई मांग को देखते हुए वनौषधि संग्रहकर्ताओं ने सरल पर घातक उपाय निकाला इन्होंने कौंच के पके हुए पौधों को जलाना प्रारम्भ कर दिया, पौधों को जलाने के उपरान्त बीजों को एकत्रित किया जाने लगा। जिसके कारण बीज तो प्राकृतिक परिस्थिति से गायब हुए, साथ ही पूरा पौधा भी हमेशा के लिए नष्ट हो गया। पौध उपलब्ध न होने पर औषधीय पौधों से जुड़े विशेषज्ञों ने इसका कृषिकरण शुरू कर दिया।

मुख्य रूप से प्रारम्भिक चिकित्सा पद्धतियों में बलवर्धक के रूप में कौंच का उपयोग किया जाता है तथा देश के कई भागों में इसकी सब्जी बनाकर उपयोग की जाती है। इसकी फली पशु चारे के रूप में भी उपयुक्त होती है, इसमें उच्च मात्रा में प्रोटीन होता है। आधुनिक अनुसंधानों से यह स्पष्ट हो चुका है कि कौंच की कलियां और बीजों का विभिन्न मात्रा में सेवन शरीर की प्रतिरोधक क्षमता मजबूत बनाता है।

अन्य फलीदार पौधों की तरह ही कौंच की जड़ो में भी वातावरणीय नाइट्रोजन का स्थिरीकरण करने वाले लाभकारी सूक्ष्म जीव पाये जाते हैं जो कि जिन क्षेत्रों में कौंच उगता है उन

स्थानों की मिट्टी भी उपजाऊ हो जाती है। कौंच का प्रयोग विभिन्न त्वचा रोगों में भी मदद्गार होती है।

कृषिकरण एवं प्रबन्धन : यह एक लतायुक्त पौधा है, जिसे उगने के लिए सहारे की आवश्यकता होती है, यही कारण है कि इसे मुख्य फसल की तरह लगाने के बजाए बाड़ों पर बेल की तरह चढ़ा देने से यह स्वत: ही फैलती रहती है। यदि किसान भाई बाड़ के रूप में लकड़ी का प्रयोग करते हैं या सीमेन्ट के खम्भों का प्रयोग करते हैं तो तारों के ऊपर कौंच की बेलों को फैलाया जा सकता है, इससे कई फायदें हैं। कौंच की सघन वृद्विबाड़ को एक अभेद्य दीवार की तरह ढ़क देती है, जिसके उस पार कुछ भी नहीं दिखता है इससे बाहरी पशुओं को अन्दर आने में कठिनाइयां का सामना करना पड़ता है। यदि आपने काली कौंच लगायी है तो इससे सुरक्षा और अधिक बढ़ जाती है क्योंकि इसकी असहनीय खुजली से न केवल पशु बल्कि मनुष्य भी भलीभाँति परिचित है, आमतौर पर पशु कौंच के पौधों को नहीं खाते हैं। बाड़ों पर कौंच की सघन वृद्वि किसानों के लिए बचाव एवं सुन्दरता प्रदान करती है, बहुत से सम्पन्न किसानों ने सब्जियों की फसल की तरह मण्डप बनाकर मुख्य फसल के रूप में कौंच की व्यावसायिक फसल के प्रयोग किये। इससे उपज तो निश्चित ही अधिक हुई पर फिर भी मण्डप पर हुए अनावश्यक व्यय की कीमत वसूल नहीं हो पाई। वे किसान जिनके खेतों में बहुत वृक्ष हैं वे इन वृक्षों के सहारे के रूप में उपयोग कर इस पर कौंच की बेल चढ़ाते हैं।

आमतौर पर किसानों को औषधीय फसल के रूप में कौंच की खेती बीजों के लिए करने की सलाह दी जाती है। 4 से 5 महीने की यह फसल बिना किसी अधिक देखभाल के तैयार हो जाती है। बीजों में 90-95 प्रतिशत तक अंकुरण क्षमता होती है, बीज काफी बड़े होते है। इसलिए, वृद्धि की प्रारम्भिक अवस्था में बिना पौष्टिक तत्वों के भी पौधा विपरीत परिस्थितियों में तैयार हो जाती है। फसल की किसी भी अवस्था में कौंच के पौधे पानी का जमाव सहन नहीं कर पाते हैं, यही कारण है कि मुख्य फसल के रूप में इसकी खेती कर रहे किसानों से ढालदार जमीन के चयन की बात कही जाती है। यदि ढ़ालदार जमीन न हो तो पानी की निकासी के खेतों में किये गये प्रयोगों से यह स्पष्ट हो चुका है कि नीम, कालमेघ, गोमूत्र, ताजा गोमूत्र आदि सरलता से मिलने वाले जैविक खादों की सहायता से सफलतापूर्वक कृषि की जा सकती है। मात्र गोमुत्र के तनु घोल से बीजों को उपचारित करने से कवक जनित रोगों से बचाव हो जाता है। फसल की बुआई से पूर्व किसानों को अधिक मात्रा में सड़े हुए गोबर की खाद के प्रयोग की सलाह दी जाती है। इस अवस्था में लाभदायी सूक्ष्म जीवों को चूर्ण के रूप में मिला देने से फसल की रक्षा कटाई तक कवक जनित रोगों से मुक्त होती रहती है।

ताजा गोबर, गोमूत्र और नीम के मिश्रण से बने ग्रीन स्प्रे नामक घोल के प्रयोग से किसान भाई समय-समय पर कौंच की फसल को पौष्टिक तत्व प्रदान कर सकते हैं, ग्रीन स्प्रे से कीट फसल से दूर रहते हैं। हाल ही के वर्षो में कौंच पर एफिड कीटों का आक्रमण बहुत बढ़ गया है। ये एफिड मुख्यत: मटर की फसल को बर्वाद करता है। ये कीट पौधों का रस चूसते हैं और उनके भोजन निर्माण की क्षमता को प्रभावित करते हैं। फलस्वरूप बीज छोटे बन जाते हैं और उस पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। लेडी बर्ड बीटल जैसे मित्र कीटों को समय-समय पर खेती में छोड़कर आसानी से इन कीटों पर नियंत्रण पाया जा सकता है।

जब भी छोटे किसानों को कौंच की फसल के बारे में बताया जाता है तो इस बात पर जोर दिया जाता है कि कौंच के बीजों को दूसरों को बेचने के साथ ही किसान अपने-अपने परिवार और पशुधन के लिए इसका प्रयोग करें। कौंच की उपस्थिति भूमि की उर्वरता बढ़ाएगी तथा अनावश्यक खरपतवार को कम करेगा तथा कौंच के बीजों को पशु चारे में मिलाकर किसान अधिक दूध प्राप्त कर सकेगा।

कौंच एक बहुत ही गुणकारी पौधा है इसलिए इसका कृषिकरण एवं उचित प्रबन्धन करके इस पौधे को निरन्तरण बनाये रख सकते है तथा इसकी गुणवत्ता का उपयोग कर सकते हैं।

आंवले की खेती

डॉ. देवेन्द्र कुमार
वन अनुसंधान संस्थान, देहरादून

आँवला, आमला या इण्डियन गुस बैरी भारतीय उपमहाद्वीप का फल है। विभिन्न प्रकार की अन्न उपजाऊ भूमि पर इसकी उच्च उत्पादकता, उच्च न्युट्रीटेव वैलू और औषधियों गुणों के कारण आँवला की प्रत्येक वर्ष अत्याधिक व्यवसायिक महत्व की खेती होती जा रही है।

आँवला का फल विटामिन 'सी' का प्राकृतिक मुख्य स्रोत है। स्कोरबीक एसीड की मात्रा 0.9 से 1.3 तक पाई जाती है। ये सारे फलों की खेती करने वाले फलों में दुसरे स्थान पर आता है। इसका फल अति उत्तम भारतीय देशी दवाई में काम आता है। इसका फल भारतीय पद्धति आयुर्वेद में मुख्य स्थान रखता है। इसका फल विभिन्न प्रकार की बिमारियों में काम आता है। जैसे- पिलीया, खाँसी, कब्ज, आदि।

त्रिफला और च्यवनप्राश अत्यधिक जानी पहचानी औषधियां है जो भारतीय आयुर्वेद पद्धति में आँवले का प्रयोग करते हुए बनाई जाती है। आँवले के फलों से हेयर वाश और हेयर ऑयल भी तैयार किया जाता है, जो बालों को सुन्दर व बड़ा बनाते हैं।

इसकी खेती भारत में हर जगह होती है तथा विशेष तौर से उत्तर प्रदेश के बनारस, रायबरेली, सुलतानपुर, आगरा, मथुरा, प्रतापगढ़, कानपुर, आदि राज्यों मे पाई जाती है। हालाँकि, इसका सघन वृक्षारोपण नमकीन क्षेत्रों में करायी जा रही है। इसमे आगरा, मथुरा, इटावा, फतेहपुर, और बुन्देलखण्ड़ के अर्धशुष्क वाले क्षेत्र भी शामिल है। आँवले की खेती देश के दूसरे अर्धशुष्क राज्यों में जैसे- महाराष्ट्र, गुजरात, आन्ध्रप्रदेश, कर्नाटक, तमिलनाडू हरियाणा की अरावली बेल्ट, पंजाब और हिमाचल प्रदेश में की जाती है।

जलवायु :

आँवला उपोष्ण पौधा है, जो शुष्क व अर्धशुष्क जलवायु पसंद करता है। इसी लिए उष्ण एवं उपोष्ण (Sub-tropical) दोनों जलवायु में उगाया जा सकता है। इसके लिए 630 मि.मी. से 80 मि.मी. तक वर्षा वाले क्षेत्र उपयुक्त रहते है। मई-जून के महीने में गर्म हवाओं से एवं सर्दी में पाले से पौधों को तीन साल तक बचाना चाहिए। हालांकि, बड़े पौधे फ्रीजिंग तापक्रम एवं 46°C तक का तापक्रम सहन कर सकते है। परन्तु फूल आने के समय अधिक तापमान नहीं रहना चाहिए। चूँकि, ज्यादा तापमान इसके फलों को बनने की प्रक्रिया में बाधक होता है। कभी-कभी ज्यादा तापमान के कारण पूरी तरीके से बिना फलों के रह जाते है। यदि गर्म और शुष्क हवाएँ बहती है तो भी फलों के बढ़वार के लिए जुलाई/अगस्त मे पर्याप्त नमी रहना आवश्यक है। इसके पौधों के लिए सर्दियों के महीनों में हल्का सा पाला भी नुकसान दे सकता है।

भूमि एवं तैयारी :

इसकी खेती हल्की एवं मध्यम प्रकार की मृदाओं में सामान्यतया, पूर्णतया रेतीली मृदाओं को छोड़ कर सभी प्रकार की मृदाओं में की जा सकती है। यह शुष्क क्षेत्रों में अच्छी प्रकार उगता है। सघन जड़ीय संरचना आँवला के पौधे को शुष्क और अर्धशुष्क प्रस्थिति में आदर्श बनाता है। इसको मध्यम प्रकार की क्षारीय भूमि में भी उगाया जा सक़ता है, यहां तक कि खराब pH 9.5 में भी उगाया जा सकता है। अत: हर प्रकार की मृदा में इसकी खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है।

इसके पौधों को लगाने से खेत की अच्छी तरह गहरी जुताई हैरों चलाकर करनी चाहिए एवं खेत को पाटा चलाकर समतल करना चाहिए। मई से जून के महीने में एक घन मीटर साईज के गढ्ढे तैयार कर लेना चाहिए और 15-20 दिन तक गढ्ढों को खुला रखना चाहिए एवं 10-15 कि.ग्रा. प्रति गढ्ढा अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद को मिलाकर सतह तक भरवाना चाहिए। यदि वर्षा से गढ्ढे की जमीन थोड़ी बहुत धंस जाती है तो और मिट्टी लाकर गढ्ढा भरवा देना चाहिए।

प्रजातियां :

आंवला की बहुत सारी प्रजातियां बाजार में प्रसिद्ध है जैसे बनारसी, चकैया, फ्रांसिस, एन-4 (कृष्णा) एन ए-5

(कंचन), एन ए-6, एन ए-7, एन ए-10, बी एस आर-1, आनंद-1, आनंद-2 एवं आनंद-3 आदि।

मुख्यत: आँवले की तीन प्रजातियाँ बहुत प्रसिद्ध है:-

1. बनारसी
2. हाथीझूल
3. चकईया

इन तीनों के अपने-अपने गुण हैं जैसे बनारसी अगेती पकने वाली प्रजाति है और पेड़ों से शीघ्र ही झड़ने की प्रवृति पाई जाती है।

हाथीझूल का फल जल्दी ही पीला पड़ जाता है तथा चकईया का फल छोटा व रेशेदार होता है। परन्तु, इस प्रजाति के पेड़ों में दूसरे साल अच्छी मात्रा में उत्पादन देने की मात्रा पाई जाती है। पिछले कुछ वर्षो में बहुत सारी व्यवसायिक प्रजातियाँ निकली हैं, जैसे कंचन।

खाद एवं उर्वरक :

सामान्यतया, 200 पौधे प्रति एकड़ लगाना प्रचलित है जिसमें 4 टन FYM अच्छी तरह मिक्स कर सकते हैं एवं रू. 90 रू. 120 रू. 48 के अनुपात में NPK तथा 10 कि.ग्रा. सल्फर एवं 10 कि.ग्रा. दूसरे सूक्ष्म तत्वों को प्रति एकड़ दे सकते है। 15 कि.ग्रा. FYM और 0.5 कि.ग्रा. फॉस्फोरस रोपण से पहले प्रत्येक गड्ढे में देना चाहिए और 30 ग्राम नत्रजन पौधों की उम्र 10 वर्ष होने तक सितम्बर एवं अक्टूबर में प्रत्येक वर्ष देने की संस्तुति की गई है।

कम उम्र वाले पौधों को 15-20 कि.ग्रा. FYM एवं तैयार पौधों को 1 कि.ग्रा. सुपर फॉस्फेट एवं 1-1.5 कि.ग्रा. पोटाश दो भागों मे बाँट कर देना चाहिए। एक बार सितम्बर-अक्टूबर में और दूसरी बार अप्रैल-मई में देना चाहिए। फल लगने के बाद उर्वरक देने पर सिंचाई की आवश्यकता होती है।

प्रसारण :

आँवला सामान्यतया शील्ड बडिंग के द्वारा प्रसारित किया जाता है। आँवला बीजों द्वारा भी काफी लम्बे समय से उगाया जाता रहा है। इसको रूट स्टॉक के रूप में प्रयोग करते हैं। इसके बीज फरवरी तक पक जाते हैं। बीजों को जुलाई में वर्षा शुरू होने पर बो सकते हैं। बीजों को 5 मिनट के लिए गर्म पानी से उपचारित कर सकते हैं, ताकि अच्छा एवं शीघ्र अंकुरण 10 दिन के अंतराल से हो जाये।

रोपण :

बड़ या ग्राफ्टिंग के द्वारा आँवला जुलाई/अगस्त में तैयार करके गड्ढों में रोप दिये जाते है। गड्ढे मई एवं जून के महीनें में 1 घन मीटर साईज के 4.5x4.5 मी. के अंतराल पर बनवाकर 15-20 तक खुली धूप में खुला रखते हैं। प्रत्येक गड्ढें में 3 से 4 बाल्टी अच्छी गोबर की खाद, एक किलो नीम केक और थोड़ा सा बोन मील मिट्टी में अच्छी तरह मिला कर भर दिये जाते है। सोडिक भूमि में 5 से 8 किलोग्राम जिप्सम 20 किलो ग्राम रेत के साथ गड्ढों में भरते है। यदि उस समय बारिश न हुई हो तो गड्ढों में पुरी तरीके से पानी भर दिया जाता है। हेजरो प्लान्टिंग के लिए 8 मीटर की लाईन से लाईन की दुरी/पौधे से पौधे की दुरी 4 से 5 मीटर रखते है। उन उपयुक्त मृदाओं में इन्ही गड्ढों में पौध को ग्रो किया जा सकता हैं या रूट ट्रेनर मे ग्रो करके आँवला shoots को 5 से 7 दिन तक स्टोर भी किया जा सकता है। आँवला में स्वयं incompatibility की भी समस्या दिखाई देती है, अत: दो वैराइटीस को एकान्तर क्रम में लगाने की जरूरत होती है।

सिंचाई :

छोटे पौधों को 15 दिन के अंतराल पर जब तक जड़ नहीं पकड़ लेते, तब तक सिंचाई करते रहना चाहिए। फल वाले पौधों को दो सप्ताह में गर्मी मे सिंचाई करवाते रहना चाहिए यदि सम्भव हो तो अक्टूबर से दिसम्बर तक 25-30 ली. पानी प्रत्येक पेड़ को ड्रिप द्वारा उपलब्ध करवाना चाहिए। हम रोपित पौधों को 2 वर्ष तक 10 दिन अंतर से 4 वर्ष तक 15 दिन के अंतर से एवं 4 वर्ष बाद 20 दिन के अंतर से सिंचाई करना भी निर्धारित कर सकते है।

प्रूनिंग ट्रेनिंग एवं न्यूट्रीशन :

सतह से करीब 0.75 मी. छोड़कर 3 से 6 अच्छी शाखाएं छोड़ते हुए मरी हुई, सूखी हुई एवं कमजोर शाखाओं को दिसम्बर के अंत में काट देना चाहिए और कटे स्थान पर कोई एंटीफंगल पेस्ट का लेप कर देना चाहिए ताकि किसी तरह का इंफेक्शन न हो।

वैसे आँवला के पौधे को मध्यम आकार के हेडट्रीमींग मे विकसित करने की जरूरत होती है। मुख्य शाखाओं को 0.75 से 1 मीटर धरातल से ऊपर रखना चाहिए और इसके पौधे मे एक मुख्य (मैन) स्टेम को विकसित होने देना चाहिए। दो चार शाखाओं को विपरीत दिशा मे बढने के लिए प्रति वर्ष रखना चाहिए और मार्च व अप्रेल में 4/6 शाखाओं को विकसित होने देना चाहिए। हांलाकि, आँवला में नियमित प्रोनिग की आवश्यकता नहीं पड़ती, अत: बढ़वार की आदत के अनुसार अच्छे सूट को आगे के सीजन के लिए नई बड़वार को छोड़ देना चाहिए तथा मृत व टूटी हुई एक दूसरे के ऊपर चढ़ी हुई शाखाओं को काटते/छाँटते रहना चाहिए।

बोरॉन की कमी के कारण फलों में निक्रोसिस विकसित हो जाती है, जिसको रोकने के लिए करीब 10 वर्ष के पौधों के लिए 1.5 Kg N, 1 Kg P_2O_5, 0.7 Kg K_2 और 0.6% बॉरिक्स का तीन बार सितम्बर से अक्टूबर तक 10-15 दिन के अंतर से छिडकाव/स्प्रे करवाना चाहिए।

आंवला एक दृढ़ पौधा है जो सूखे में भी अच्छी तरह खड़ा रहता है। फिर भी 2-3 सिंचाई फूलों के समय एवं फलों के लगने के समय कर देना चाहिए।

व्यवसायिक खेती 6-8 वर्षो बाद फलों को देना शुरू कर देती है। हालांकि, आँवला के अच्छी तरह से प्रबंधित पौधों 50-60 वर्ष तक फलोत्पादन कर सकते है। सामान्यता आंवला नवम्बर- दिसम्बर में तुड़ाई के लिए तैयार हो जाते है। इनका पकना या तो इनके रंग परिवर्तन जैसे क्रीमी व्हाइट से ब्लैक या फिर एक्सोकॉर्प पूर्णतया ट्रांसपैरेंट होने पर पहचाने जाते है। पूर्णरूपेण पके फलों में प्रचुर मात्रा में विटामिन -सी होता है अच्छा पेड़ 100-150 Kg प्रतिवर्ष फल भी दे सकता है।

आच्छादन एवं अंतर फसलें :

फसल को 15-20 से.मी. तक पुआल या भूसे से गर्मी के दौरान मल्चिंग कर देनी चाहिए। अगले आठ-दस सालो तक खूब मूंग, उड़द, अरहर एवं चना इत्यादि दालें उगाई जा सकती हैं।

पौधो का संरक्षण

इसके पौधों को खासतौर से बार्क केंटरपिलरस् प्रभावित करता है, जिसको एंड्रोसल्फान या मोनाक्रोटोफॉस इंजेक्शन देकर केटरपिलरस् की रोकथाम की जा सकती है। रस्ट के बचाव के लिए मैन्कोजेव (3 ग्रा. प्रति ली. पानी में) दो बार छिड़काव, एक बार सितम्बर के शुरू में और फिर 15 दिन के बाद में कर सकते है।

रस्ट को नीले कॉपर (3 कि.ग्रा. प्रति ली. पानी में मिलाकर) या करावेन्डाजिम व मैनकोजेव 2 कि.ग्रा. प्रति ली. पानी में मिलाकर भी छिड़काव करने से बचाया जा सकता है।

खरपतवार नियंत्रण :

अच्छी बढ़वार के लिए सीलिगस् और सेपलिंग को खरपतवार से मुक्त वातावरण करीब 2 साल तक चाहिए होता है। इसको हवीसाईडस् ग्लाइफोसेट 6.5 उस प्रति ली. पानी में मिलाकर 6-8 इंच तक के खरपतवारों के ऊंपर छिड़ककर नियंत्रण किया जा सकता है। परंतु, ध्यान रखना चाहिए कि खरपतवारनाशी का प्रयोग प्रत्यक्ष रूप से सीड्लिगस् पर नहीं होने पाए।

पैदावार :

आंवला 4-5 वर्ष में फल देना शुरू करता है, परंतु 6-8 वर्ष बाद अच्छी फसल देता है। फरवरी तक फलों को हारवेस्ट कर देते है। एक 10 वर्ष का पेड़ 50-70 कि.ग्रा. फल दे सकता है एक फल औसत 60-70 ग्रा. तक का हो सकता है। एक किलो ग्राम में 15-20 फल आते हैं। एक ग्राफटिड आंवले का पेड़ 1.5 से 3 क्विंटल फल प्रति वर्ष दे सकता है।

हरे फल सामान्यत: बाजार में 20-25 रू. प्रति किलो बिकते है। कभी-कभी 50 से 80 रू. तक भी बिकते है। इसका मुरब्बा 100 से 150 रू. प्रति किलो तक बिकता है, जो किसानों की आय का मुख्य स्रोत बनता है।

झारखण्ड के वन्य पुष्प एवं पत्तियों से भोजन

श्री पंकज सिंह, श्री जीशान दानिश और डॉ. संजय सिंह
वन उत्पादकता संस्थान, रांची

वर्तमान में लगभग 3000 खाने योग्य वनस्पति प्रजातियां मानव समाज के लिए ज्ञात हैं, जिसमें से 30 फसलों से विश्व का 90 प्रतिशत से ज्यादा कैलोरी निहित है और केवल 120 फसलों को ही राष्ट्रीय स्तर पर महत्वपूर्ण माना गया है। भारत के विविधता से भरे जंगलों जैसे पश्चिमी घाट, पूर्वी घाट और हिमालय में 1532 खाने योग्य जंगली प्रजातियां उपलब्ध हैं। झारखंण्ड के छोटानागपुर और आसपास के जंगलों में रहने वाले आदिवासी समूह, ग्रामीण लोग जंगली पौधों और उनके फल, फूल, पत्तियां, कंद तथा प्रकन्द इत्यादि पर अपने प्रतिदिन के भोजन के लिए आश्रित रहते हैं, साथ ही साथ इनको लम्बे समय के लिए भंडारण करके भी करते है। ये फसल अकाल के दौरान ''सुरक्षा कवच'' के रूप में व्यवहार करते हैं तथा सस्ते और पोषक तत्वों से भरपूर हैं।

आज भी हमलोग बहुत से जंगली पेड़-पौधों की महत्ता से अवगत नहीं है। पिछले कुछ सालों में औषधीय पौधों और उनके गुणों से जरूर अवगत कराया गया है लेकिन इनमे पाये जाने वाले पोषक तत्वों को साधारणत: अनदेखा किया गया है। प्रस्तुत लेख झारखंड के कुछ महत्वपूर्ण फूल और पत्तियों के पोषक गुणों पर केन्द्रित है जो कि भोजन के रूप में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

कचनार (*Bauhinia variegate* L.)

आंशिक खिली कली और इसके फूल को मुख्यत: इसके खाद्य महत्व के लिए जाना जाता है जो कि मौसम आने पर बाजार में भी उपलब्ध रहता है। कली को एक मौसम में 2 – 3 बार एकत्रित किया जाता है। कचनार की नई कली का उपयोग स्वादिष्ट शर्बत और अचार बनाने में भी किया जाता है। इसे आटे में भी मिला कर बनाया जा सकता है, साथ ही साथ इसे सुगंधित कार्य में उपयोगित किया जा सकता है।

आंशिक खिली कली और फूल अच्छे और भिन्न प्रकार के पोषक तत्वों के स्रोत हैं। कली में (सूखे भार के आधार पर) : नमी 73.95%, सूखे पदार्थ 26.05%, अपरिपक्व प्रोटीन 4.49%, अपरिपक्व वसा 2.42%, राख 6.53%, कुल कार्बोहाईड्रेट 86.56%, एवं फूल में नमी 84.51%, सूखे पदार्थ 15.48%, अपरिपक्व प्रोटी 3.70:, अपरिपक्व वसा 2.44%, राख 4.33%, कुल कार्बोहाईड्रेट 89.53%, हैं। झारखण्ड के आदिवासी इसके अपरिपक्व पत्ती, कली, और फूलों को सब्जी के रूप में उपयोग करते हैं।

सेमल (*Bombax ceiba* L.)

वर्षो से सेमल का सम्बन्ध पूर्वी भारत के मुंडा और उरॉव जाति से रहा है और वे इसके फूल, बाह्य दलपुंज तथा जड़ों का उपयोग खाने के रूप में करते हैं। इनके कोमल पत्तियों, कली और कोमल बाह्य दलपुंज को खाया जाता है। सेमल के परिपक्व पत्तों में शुष्क भार के आधार पर : अपक्व प्रोटीन 18.69%, अपक्व फाइबर 11.42%, कुल खनिज 6.96%, अपघटित शर्करा 1.2%, कुल शर्करा 4.94%, और स्टार्च 12.09% पाया जाता है। सेमल के कांटे को सुपारी के प्रतिस्थापक के रूप में भी चबाया जाता है।

बाह्य दलपुंज को उत्तर प्रदेश में ''सेमरगुल्ला'' के नाम से जाना जाता है और यहां इसे सब्जी के रूप में उपयोग किया जाता है। इसके फूल को पोस्ता के दाने, बकरी के दूध तथा चीनी के साथ उबाल कर मुरब्बा बनाया जाता है। सूखे एवं पिसे फूलों को मकई के साथ या इसके बिना रोटी बनाने में इस्तेमाल करते हैं। इसके फूल तीखे और ठंड प्रदान करने वाले होते हैं। फूल और पत्ते का लेप कई प्रकार के त्वचा विकार को ठीक करने में उपयुक्त होता है। बाह्य दलपुंज में ताजे भार के आधार पर : नमी 85.66%, प्रोटीन 1.38%, कार्बोहाइड्रेट 11.95%, तथा खनिज पदार्थ 1.09%, कैल्शियम 92.25mg/100g, फास्फोरस 49.0 mg/100g, और मेग्निश्यम 54.24mg/100g पाया जाता है।

बेंग साग (*Centella asiatica* L.)

सेंटेला एसियाटिका को बेंग साग के नाम से जाना जाता

है। मुंडा और उरांव जाति के लोग सब्जी के रूप में अपने भोजन में शामिल करते हैं। यह नमी वाले क्षेत्र में सालों भर, मुख्यत: बरसात और वंसत ऋतु में पाया जाता है। इसमें एस्कोर्बिक अम्ल 13.8mg/100g की मात्रा में पाया जाता है (द वेल्थ ऑफ इण्डिया, 1998)। *सेंटेला एसियाटिका* (बेंग साग) में पाये जाने वाले पोषक तत्व (g/100g)- नमी 82.23, प्रोटीन 2.10, कार्बोहाईड्रेट 9.98, वसा 0.96, फाइबर 1.18, आयरन 4.28, विटामिन A 1996 µg, फास्फोरस 38 µg, बीटा कैरोटीन 11813 µg।

फुटकल (*Ficus geniculata* kurz.)

फाइकस जनिकुलाटा को झारखण्ड में सामान्यत: फुटकल के नाम से बाजार में बेचा जाता है। यह मोरेसी फैमिली का पेड़ है। इसके नए और कोमल पत्ते की स्वादिष्ट सब्जी बनाई जाती है। यह स्वाद में खट्टा होता है और इसका सुखा कर भंडारण भी किया जाता है। इसका उपयोग विभिन्न प्रकार के व्यंजनों में होता है। नए कोमल पत्तों के अचार भी बनाए जाते हैं। इसकी सब्जी ऐंठन और दस्त रोगों में लाभदायक होती है। इसकी पत्ती फरवरी-मार्च में पेड़ों पर मौजूद रहती है, जिसका बाजार मूल्य लगभग 30-40 रू/कि. ग्रा. है। इसमें कई प्रकार के पोषक तत्व मौजूद हैं: नमी 74.66%, राख 2.5%, प्रोटीन 23.26%, अपरिपक्व फाईबर 7.08%, कार्बोहाईड्रेट 64.31%, कैल्शियम 1160 mg/100g, आयरन 18.6 mg/100g।

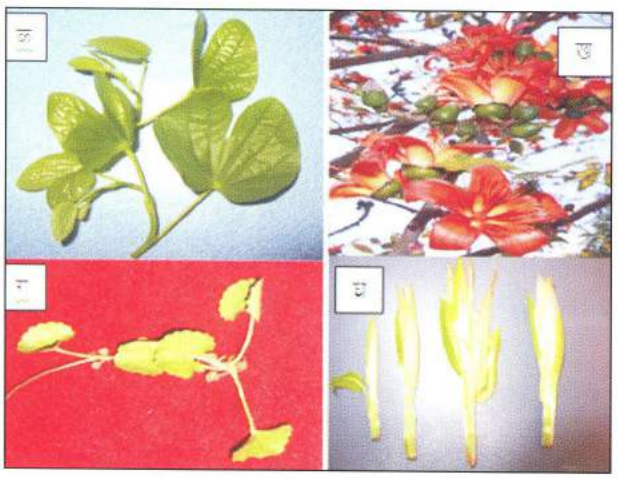

क. कचनार की आंशिक खिली कली
ख. सेमल की पत्तियों, कली और कोमल बाह्य दलपुंज ग. बेंग साग
घ. फुटकल के नए और कोमल पत्ते

सहजन (*Moringa oleifera* Lam.)

यह एक चमत्कारी वृक्ष है। यह विश्व के कई भागों में "सब्जी वृक्ष" के रूप में उगाया जाता है। इसके जड़, पत्ते, फूल, फल खाद्य के रूप में उपयोग किए जाते हैं। इसकी पत्तियों को पकाकर और सूखा कर दोनों प्रकार से खाया जाता है। आम इंसान केवल इसके फूल और फल के बारे में ही जानते हैं जो फरवरी में मध्य से मार्च के अंत तक बाजार में उपलब्ध रहते हैं। इन्हे छोटे छोटे टुकड़ों में काटकर सब्जी बनाई जाती है और इसके अचार भी बनाए जाते हैं।

इसके फूल और कोमल पत्तियों को घरेलू औषधि के रूप में उपयोग किया जाता है। इसके बीज को तल कर या छान कर खाया जाता है जो स्वाद में मूँगफली की तरह होता है। इनकी पत्तियों में प्रोटीन, कैरोटीन, आयरन और एस्कोर्बिक अम्ल पाये जाते हैं। फल में अधिक मात्रा में एमीनो अम्ल लायसिन पाया जाता है (सी.एम.आई.आर. 1992)। सहजन के पत्तियों में अत्यधिक सांग्रता में प्रोटीन (6.7 mg/100g), एस्कोर्बिक अम्ल (220 mg/100g), बीटा कैरोटीन (6230mg/100g), और आयरन (20mg/100g) पाये जाते हैं। फल और फूल में पाये जाने वाले पोषक तत्व है (g/100g)-नमी 86.9 और 85.9, कार्बोहाईड्रेट 3.7 और 7.1, प्रोटीन 2.5 और 3.6 फाइबर 4.8 और 0.9, कैल्शियम 30 और 40mg, फोस्फोरस 110 और 90 mg, विटामिन C 220 mg।

ड़. और च. सहजन की पत्ती और फूल
छ. महुआ की फूल ज. अगति सेस्बान की पत्ती

महुआ (*Madhuca Longifolia*, (J. Koing) J F Macbre)

मध्य भारत के आदिवासी मूल क्षेत्र में महुआ एक महत्वपूर्ण वृक्ष है। इसका हर भाग विभिन्न रूप में उपयोग किया जाता है। जब कृषि का समय समाप्त होने को रहता है (मार्च-मई) तब इसके फूल आते हैं। इसके फल और फूल दोनों खाद्य के रूप में उपयोग किया जाता हैं। इसके फूल में शर्करा, प्रोटीन, विटामिन और खनिज पदार्थ पाये जाते हैं। इन पोषक तत्वों के कारण ताजे फूल के गूदे से जेली और सॉस बनाए जाते हैं। पके हुए फूल में पोषक तत्व है:- नमी 73.68%, प्रोटीन 1.4%, कार्बोहाईड्रेट 22.79%, वसा 1.6%, विटामिन A 307 µg/g, कैल्शियम 45mg/100g, फोस्फोरस 22mg/100g, विटामिन C 40 mg/100g।

अगस्त (*Sesbenia grandiflora* L)

सेसबनिया ग्रंडीफ्लोरा को आयुर्वेदिक पद्धति में सेस्बान और अगथि के नाम से जाना जाता है। यह *अगथि सेस्बान* तथा हमिंग बर्ड (Humming bird) वृक्ष के नाम से जाना जाता है। इसका हर भाग उपयोगी हैं। झारखण्ड में इसके फूल का उपयोग सब्जी के रूप में किया जाता है। इसके फूल से कढ़ी सलाद भी बनाए जाते हैं। पत्तियों में प्रचुर मात्रा में कैल्शियम पाया जाता है। इसके फूल जाड़े में उपलब्ध रहते हैं।

अगस्त के फूल स्वाद में मीठे तथा स्पंजी होते हैं। इसके फूल पवित्र माने जाते हैं तथा ये कार्तिक महीने में उपलब्ध रहते हैं। इसके फल और फूल दोनों से ही सब्जी बनाए जाते हैं। इसके पत्ती में लगभग 73.1% नमी, 8.4% प्रोटीन, फाइबर 2.2% राख 3.1 mg/100g, कैल्शियम 1130 mg/100g, फास्फोरस 80.0 mg/100g, आयरन 3.9 mg/100g, विटामिन A 9000 IU/100g, थायमीन 0.21, राइबोफ्लैवीन 0.09 mg/100g, निकोटिनिक अम्ल 1. 20mg/100g होते हैं। इसकी पत्तियां विटामिन C और कैल्शियम के अच्छे स्रोत माने जाते हैं।

हर ओर कलियुग के चरण

हर ओर कलियुग के चरण
मन स्मरणकर अशरण शरण।
धरती रंभाती गाय सी
अन्तोन्मुखी की हाय सी
संवेदना असहाय सी
आतंकमय वातावरण।
प्रत्येक क्षण विष दंश है
हर दिवस अधिक नृशंस है
व्याकुल परम् मनु वंश है
जीवन हुआ जाता मरण।
सब धर्म गंधक हो गये
सब लक्ष्य तन तक हो गये
सद्भाव बन्धक हो गये
असमाप्त तम का अवतरण।

– भारत भूषण

कीट रोगजनक सूत्रकृमि - वानिकी के कीटों के लिए प्रभावशाली जैव कीटनाशक

डॉ. संजय पौनीकर एवं डॉ. नितिन कुलकर्णी
उष्णकटिबंधीय वन अनुसंधान संस्थान, जबलपुर

कीट की विभिन्न प्रजातियाँ वन पौधों को उनकी विभिन्न अवस्था मे जैसे वृक्षों के बीज, भंडारित बीज, वनरोपणी के पौधे, वृक्षारोपण क्षेत्रों के पौधे, प्राकृतिक वन क्षेत्रों के पेड़ तथा काष्ठ भंडार की लकड़ियों (टिम्बर) को नुकसान पहुँचाते है। इन कीटों को नियंत्रित करने के लिए विभिन्न जैविक एंव रासायनिक कीटनाशकों का उपयोग होता रहा है। जब से बीसवीं शताब्दी में कुछ नये एवं प्रभावी रासायनिक कीटनाशकों का पता चला तब से उनका अंधाधुंध उपयोग हो रहा था। पर कुछ वर्ष पहले जब से रासायनिक कीटनाशकों का हानिकारक प्रभाव पर्यावरण, मानव एवं अन्य लाभकारी जीवजंतुओ पर स्पष्ट रूप से लक्षित होने लगा, तब से विश्व के वैज्ञानिकों ने अन्य वैकल्पिक कीटनाशकों पर्यावरण, मानव एवं अन्य लाभकारी जीवजंतुओं को नुकसान नहीं पहुंचाने वाले जैव कीटनाशकों-पर अनुसंधान और प्रयोग किया गया। अनुसंधान के पश्चात कुछ प्रभावी जैविक कारक जैसे वानस्पतिक रसायन, सूक्ष्मजीव जैसे प्राटोझूआँ, रोगकारक परजीवी फंफूद, जीवाणु, विषाणु, परभक्षी कीट तथा कीट रोगजनक सूत्रकृमि हैं। ये सभी विभिन्न कीट प्रजातियों पर प्रभावी पाये गये।

इनमे से एक कारक रोगजनक सूत्रकृमि (एन्टोमोपॅथोजेनिक निमेटोड्स) है। सूत्रकृमि बहुकोशीय जीव है। ये रंगहीन, अविभाजित शरीर वाले, स्वतंत्र जीवन यापन करने वाले, परभक्षी या परजीवी कृमि कहलाते है। ये मिट्टी मे रहनेवाले, कीटों पर पलनेवाले परजीवी है। जिसका उपयोग विश्व स्तर पर एक प्रभावी जैव कीटनाशक के रूप में हानिकारक फसलों, वानिकी, बागवानी, लॉन, चरागाह, वृक्षारोपण फसलों एवं घरेलु कीटों के विरूद्ध हो रहा है। कीट रोगजनक सूत्रकृमि प्राणी जगत के फायलम निमेटोडा के अन्तर्गत आज सूत्रकृमि कि 20,000 से ज्यादा प्रजातियों की पहचान की गयी है। इसमें उन सूत्रकृमिओं को शामिल किया गया है, जो कीटों, जीवाणुओं, फफूंद और अन्य सूत्रकृमिओं का भक्षण करते है, कुछ सीमित वर्ग के सूत्रकृमि कीटों का भक्षण करते हैं। कीट रोगजनक सूत्रकृमि के रोगकारक ज्यूवेनाईलस कीटों के शरीर में प्राकृतिक रूप से खुले छिद्रों जैसे मुंह, गुदा, रोमछिद्र या त्वचा (क्युटिकल) के माध्यम से कीट के शरीर मे प्रवेश कर घातक जीवाणु को छोडकर 24 से 48 घंटो के भीतर कीटों को मार देते हैं और कीट (सूंडी) कोमल एंव पिलपिली कॅडावर बनती है। बाद में 6 से 12 दिनों के भीतर कॅडावर से रोगजनक सूत्रकृमि लाखों की संख्या मे बाहर निकलते है। इन्हे ही कीटों में रोग फैलानेवाले सूत्रकृमि या कीट रोगजनक सूत्रकृमि कहते हैं।

बहुत पहले वैज्ञानिक ग्लेसर ने 1932 में कीट रोगजनक सूत्रकृमि को एक जैव कीटनाशी के रूप में पहचान की थी। उन्होने इस कीट रोगजनक सूत्रकृमि, *स्टीनरंनिमा* ग्लेसरी को जापानी भृंगो पर खोज की थी। विश्व में कीट रोगजनक सूत्रकृमि के स्टीईनरनिमेटिडी और हिटेरोरैब्डिटिडी नामक दो वंश है, जो क्रमश: स्टीईनरनिमेटिडीए और हिटेरोरैब्डिटिडीए परिवार से संबंध रखती है तथा जीनोरैब्डस या फोटोरैब्डस वंश के सहजीवी जीवाणु के साथ सहजीवन रखती हैं। इन जीवाणुओं के साथ मिलकर कीटों को मारती है। अभी तक विश्व मे *स्टीनरनिमा* कि 65 प्रजातियाँ तथा *हिटरोराँहाब्डिस* कि 24 प्रजातियाँ पायी गयी हैं। *स्टीनरनिमा कार्पोकैप्सी, स्टीनरनिमा रायोब्रेसी, स्टीनरनिमा साईमाकायी तथा हिटरोराँहाब्डिस इंडिका, हिटरोराँहाब्डिस बैक्टीरिओफोरा, हिटरोराँहाब्डिस मैजीडिस* इत्यादि कीट रोगजनक सूत्रकृमि की प्रमुख प्रजातियाँ हैं।

भारत में कीट रोगजनक सूत्रकृमि, *स्टीनरनिमा* की कुछ नयी प्रजातियाँ जैसे *स्टीनरनिमा थर्मोफिलियम, स्टीनरनिमा सिमी, स्टीनरनिमा मसूदी स्टीनरनिमा अब्बासी, स्टीनरनिमा मेघालेन्सिस* प्रमुख है। हाल ही मे मध्य भारत में उष्णकटिबंधीय वन अनुसंधान संस्थान, जबलपुर के वैज्ञानिको ने कीट रोगजनक सूत्रकृमि एक नयी प्रजाति की खोज की है। जिसका नाम *स्टीनरनिमा धार्नायी* रखा गया है। ये प्रजाति विज्ञान के लिए नयी है।

कीट रोगजनक सूत्रकृमि की निम्नलिखित विशेषताएँ इसका दूसरे जैव कीटनाशक से बहुत ही प्रभावशाली जैवकीटनाशक बनाती है:-

1. कुछ ही समय में ये बहुत सारे कीटों (होस्ट) को मारने की क्षमता रखते हैं।
2. बड़े स्तर पर उत्पादन कर सकते है।
3. पश्चिमी देशों में इनके उत्पादों को पंजीकृत करने की आश्यकता नहीं है।
4. बहुत से कीटों पर असरदार है।
5. विषाक्ता दर उंची है।
6. कीटों को रासायनिक संकेत से ढूंढती हैं।
7. सुविधाजनक तौर पर प्रयोगशाला में उत्पादन कर सकते हैं।
8. पृष्ठवंशीय प्राणी, पौधों, लाभदायक जीवजंतु तथा मानवजाति के लिए सुरक्षित हैं।
9. रासायनिक कीटनाशकों एंव जैवकीटनाशी (जैसे, फफूंद, जीवाणु और वानस्पतिक कीटनाशक) के साथ मिलाकर उपयोग कर सकते हैं।

विश्व के बहुत से देशों में कीट रोगजनक सूत्रकृमि का उपयोग कृषि, वनों, बागवानी, चरागाह, लॉन, घर, बगीचों जनस्वास्थ के हितो तथा वृक्षारोपण फसल के कीटों की विभिन्न प्रजातियों को नियंत्रित करने में सफलतापूर्वक किया गया है। अंतर्राष्ट्रीय बाजार में कीट रोगजनक सूत्रकृमि के व्यावसायिक उत्पाद उपलब्ध हैं। इनका उपयोग विस्तृत कीटों को नियंत्रित करने में किया जा रहा है। अब तक *स्टीनरनिमा* प्रजाति के चार तथा हिटेरोरैब्डिटिस प्रजाति के एक उत्पाद के 21 कीटों को नियंत्रण करने में विभिन्न देशों में प्रभावशाली पाया गया है। कीट रोगजनक सूत्रकृमि की प्रजाति के 17 पंजीकृत उत्पाद यू.ए.एस., कनाडा, यू.के., जर्मनी और स्विजैरलैंड में उपलब्ध है।

भारत में सबसे पहले वैज्ञानिक राव एवं मंजुनाथ ने साल 1966 में विदेशों से आयात डी.डी.-136 कीट रोगजनक सूत्रकृमि का प्रयोग धान, गन्ना और सेब के विभिन्न प्रजातियों के कीटों को नियंत्रित करने के लिए किया था। बाद में विभिन्न वैज्ञानिकों द्वारा कीट रोगजनक सूत्रकृमि को कटवर्म, रागी का गुलाबी बोरर, धान की पत्ती का फोल्डर, तना छेदक, पॅडी गाल मीज, गन्ना छेदक, सफेद भृंग, लाल केशोंवाली इल्ली इत्यादि कीटों को प्रयोगशाला और प्रायोगिक क्षेत्र में नियंत्रित करने के लिए उपयोग में लाया गया हैं। कीट रोगजनक सूत्रकृमि का अधिक से अधिक उत्पादन करना, उनके जीवनचक्र का अध्ययन करना, उनकी गुणवत्ता, जैवक्षमता तथा प्रायोगिक क्षेत्र में कीटों के विरूद्ध परिक्षण करना इत्यादि क्षेत्र में प्रगति हुई है। कीट रोगजनक सूत्रकृमि एक जैविक नियंत्रक है, परंतु इनका उपयोग भारत में अब तक केवल कृषि के कीटों पर ही किया गया है।

भारत में वनों की जैव-विविधता तथा प्राकृतिक संपदा बहुतायत में पायी जाती है। उष्णकटिबंधीय वनों से सदाहरित अंडमान द्वीपों से लेकर हिमालय के शुष्क अल्पाइन वनों की ऊंचाई तक विभिन्न प्रकार के पौधों की जैवविविधता पायी जाती है। कीट पारिस्थितिकी तंत्र का एक अभिन्न अंग हैं, जो हमेशा वन तथा वनोपज जैसे खड़े वृक्षों, भंडारित बीज, वन रोपणी के पौधें, नवजात वृक्षारोपण, पूर्ण विकसित पेड़ और भंडारित काष्ठ के विनाश का जैविक घटक है। कृषि क्षेत्र में मानव की गतिविधियां सीमित क्षेत्रो में होती हैं, इस कारण कीटों के नियंत्रण करने में कठिनाईयों का सामना नही करना पड़ता है, पर वनों का असीमित क्षेत्र होने तथा प्राकृतिक वन

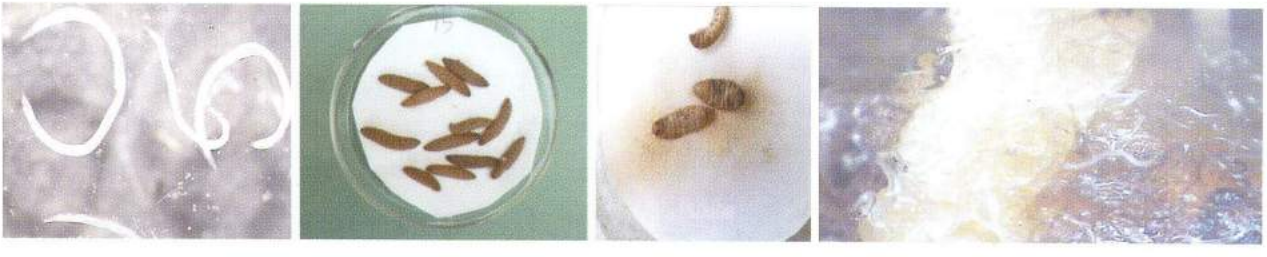

1. कीट रोगजनक सूत्रकृमि के कॅडावर 2. कॅडावर से कीट रोगजनक सूत्रकृमि बाहर निकलते हुये
3. लाखों में कीट रोगजनक सूत्रकृमि बाहर निकलते हुये 4. कीट रोगजनक सूत्रकृमि

क्षेत्र के पेडों तक नही पहुंच पाने की वजह से कीट नियंत्रण का संचालन करना एक गंभीर चुनौती है। ऐसे क्षेत्रों में कीट रोगजनक सूत्रकृमि जैसे जैवकीटनाशक कीटों को नियंत्रित करने के लिए रासायनिक कीटनाशक की अपेक्षा अधिक लाभदायक हो सकता है।

भारत में बहुत सें कीट जो लेपिडोप्टेरा, कोलियोप्टेरा, होमोप्टेरा और आइसोप्टेरा गण में के हैं, वानिकी के बहुत ही हानिकारक कीट हैं जो वनों के खड़े वृक्षों, भंडारित बीज, वन रोपणी कें पौधें, नवजात वृक्षारोपण, पूर्ण विकसित पेड़ और भंडारित काष्ठ के कीट जैसे निष्पत्रक, तना छेदक, पौधों के जड़ को खाने वाले या मिट्टी में रहने वाले और मिट्टी में ही अपना जीवनचक्र पूरा करने वाले व्हाइट ग्रब्स एवं दीमक की प्रजातियों के कीट बहुत बडे पैमाने पर नुकसान करते हैं। कुछ कीटों को नियंत्रित करने में कठिनाई होती है, क्योंकि उनका जीवनचक्र लंबा होता है, कभी-कभी किसी कीट का जीवनचक्र एक साल से ज्यादा होता है और उनकी वृक्षो कों खाने की प्रवृत्ति, वृक्षों के तने के सूराखों में छुप के रहने की वजह से ऐसे कीटों को कोई भी कीटनाशक विधियों से नियंत्रित करने में कठिनाई होती है।

भारत में पहली बार उष्ण कटिबंधीय वन अनुसंधान संस्थान, जबलपुर में कीट रोगजनक सूत्रकृमि का उपयोग वानिकी के कीटों के विरूद्ध किया जा रहा है। अभी तक कीट रोगजनक सूत्रकृमि की सात स्थानीय प्रजातियाँ जो मध्य भारत के स्थानीय वातावरण से हैं, की खोज की है, कीट रोगजनक सूत्रकृमि की, एक प्रजाति जिसका नाम *स्टीनरनिमा धार्नायी* रखा गया है, विज्ञान के लिए नयी प्रजाति है। अभी तक उष्ण कटिबंधीय वन अनुसंधान संस्थान में कुछ स्थानीय प्रजाति और कुछ बाहरी प्रजाति जो राष्ट्रीय कृषि महत्व के कीट संस्थान, बेंगलुरू से लायी गयी है का उपयोग वानिकी के कुछ कीटों जैसे व्हाइट ग्रब्स की विभिन्न प्रजातियाँ, दीमक, सागौन के निष्पत्रक, बाँस के लीफ रोलर एवं सिरस का प्रमुख कीट *स्पाइरेमा* प्रजाति इन कीटों के विरूद्ध किया गया है। इन सभी कीट प्रजातियों पर रोगजनक सूत्रकृमि को अत्यधिक प्रभावशाली पाया गया है।

चक्की पर गेहूँ लिए खड़ा

चक्की पर गेहूँ लिए खड़ा मैं सोच रहा उखड़ा उखड़ा
क्यों दो पाटों वाली साखी बाबा कबीर को रुला गई।

लेखनी मिली थी गीतव्रता प्रार्थना- पत्र लिखते बीती
जर्जर उदासियों के कपड़े थक गई हँसी सीती- सीती
हर चाह देर में सोकर भी दिन से पहले कुलमुला गई।

कन्धों पर चढ़ अगली पीढ़ी जिद करती है गुब्बारों की
यत्नों से कई गुनी ऊँची डाली है लाल अनारों की
प्रत्येक किरण पल भर उजला काले कम्बल में सुला गई।

गीतों की जन्म-कुंडली में संभावित थी ये अनहोनी
मोमिया मूर्ति को पैदल ही मरुथल की दोपहरी ढोनी
खंडित भी जाना पड़ा वहाँ जिन्दगी जहाँ भी बुला गई।

- भारत भूषण

दस औषधीय वृक्ष

सुश्री आर. श्रीदेवी
वन आनुवंशिकी एवं वृक्ष प्रजनन संस्थान, कोयम्बत्तूर

पितृपादप – कसैले को गहरे घाव को ठीक करने के लिये चिकित्सा एजेंट के रूप में प्रयोग किया जाता है। इसके पत्ते और छाल बुखार, टान्सिल, बवासीर आदि रोगों को ठीक करने के लिये खंगालना के रूप में प्रयोग किया जाता है।

सेब – इस पेड़ की छाल बुखार और दस्त का इलाज करने के लिए प्रयोग किया जाता है। दम किया हुआ सेब को रेचक के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है। पके हुए सेब को बुखार और गले में खराश को ठीक करने के लिये गर्म प्रलेप के रूप में प्रयोग किया जाता हैं। एप्पल साइडर आंत्र वनस्पति को नष्ट करने में मदद करता है।

ऐश – इसकी टहनी और पत्तियों से बनाये गये चाय को गठिया, पीलिया आदि को कम करने के प्रयोग किया जाता है।

चिक्रकणवल्क – इस पेड़ की छाल से बनाये गये चाय को पीने से फेफड़ों की समस्याओं में मदद मिलती है एवं तपेदिक के उपचार में भी इसका इस्तेमाल किया जा सकता है। इसे रक्त को शुद्ध करने के लिए भी प्रयोग किया जाता है। इसकी चाय को गर्भवती महिलाओं को नहीं देना चाहिए। इसकी पत्ती को शीतदंश और जले हुए स्थान पर गर्म औषधियुक्त पट्टी के रूप में प्रयोग किया जाता है।

सनौबर – इसकी पत्ति से बने चाय मुंह में घावों, मूत्राशय और गुर्दे की समस्या और गठिया आदि को ठीक करता है। स्नान करने के लिये इसकी छाल को प्रयोग करने से छालरोग, चकत्ते त्वचा और एक्जिमा जैसी बीमारी ठीक होती है। सनौबर पौधों के रस में बेटुलिनिक एसिड शामिल है जो ट्यूमर और कैंसर से लड़ने में मदद करती है।

देवदार – इसकी छाल से बने चाय को बुखार, गठिया, फ्लू और सीने में सर्दी के इलाज के लिए प्रयोग किया जाता है।

एल्डर – इसकी छाल से बनी चाय को सिर दर्द और पसीने उत्प्रेरण द्वारा बुखार कम करने के लिए प्रयोग किया जाता है।

एल्म – इसकी छाल की मरहम और औषधीय पट्टी बंदूक की गोली के घाव, बिवाई के इलाज के लिए उपयोग किया जाता है। बुखार को कम करने के लिये इसकी पट्टी को पेट पर लगाया जाता है। इसकी छाल में कैल्शियम बहुत अधिक मात्रा में होती है और घायल हड्डियों के उपचार, गले में खराश, मूत्र और मल मूत्रों की पीड़ा को कम करने और दस्त को ठीक करने आदि के लिये इसका प्रयोग किया जाता है।

हावथोर्न – इसकी पत्ती से ''कार्डियक टॉनिक'' बनाया जाता है, लेकिन इसका अधिक उपयोग रक्तचाप को ठीक करने के लिये किया जाता है।

मेपल – इसकी पत्ती की प्रलेप घाव को ठीक करने और आँखों की परेशानी को ठीक करती है। गर्भवती महिलाओं की स्तनों की पीड़ा को दूर करने के लिए इसका प्रयोग किया जाता है। छाल से बने चाय को गुर्दे के संक्रमण, जुकाम और ब्रोंकाइटिस के इलाज के लिए प्रयोग किया जाता है।

लालित्य

कलम, आज उनकी जय बोल

जला अस्थियाँ बारी-बारी
चिटकाई जिनमें चिंगारी,
जो चढ़ गये पुण्यवेदी पर
लिए बिना गर्दन का मोल
कलम, आज उनकी जय बोल।

जो अगणित लघु दीप हमारे
तूफानों में एक किनारे,
जल-जल कर बुझ गए किसी दिन
माँगा नहीं स्नेह मुँह खोल
कलम, आज उनकी जय बोल।

पीकर जिनकी लाल शिखाएँ
उगल रही सौ लपट दिशाएं,
जिनके सिंहनाद से सहमी
धरती रही अभी तक डोल
कलम, आज उनकी जय बोल।

अंधा चकाचौंध का मारा
क्या जाने इतिहास बेचारा,
साखी हैं उनकी महिमा के
सूर्य चन्द्र भूगोल खगोल
कलम, आज उनकी जय बोल।

राष्ट्रकवि रामधारी सिंह 'दिनकर'

आखिर मुलर* कौन था ?

श्री अनूप सिंह चौहान
भारतीय वानिकी अनुसन्धान एवं शिक्षा परिषद्, देहरादून

उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्ध में भारतीय वनों में युगांतकारी बदलाव हो रहे थे। 1864 में वन विभाग की स्थापना के बाद वनों पर तत्कालीन सरकार का नियंत्रण हो चुका था। अब वन, प्रबन्धन के अंतर्गत उपयोग में लाए जा रहे थे। उनका मात्र दोहन ही नहीं हो रहा था वरन नये वन भी लगाए जा रहे थे, उन्हे आग व रोगों से बचाया जा रहा था। वन सम्बन्धी समस्याओं का हल खोजा जा रहा था। यह सब गतिविधियां इतने बड़े पैमाने पर हो रही थीं कि इसका प्रभाव हर जगह देखा जा रहा था। इसी पृष्ठभूमि में उस दौर के एक प्रमुख अंग्रेजी लेखक रूड़यार्ड किपलिंग (1865-1936) ने एक कहानी लिखी जो अमेरिका में ''मैनी इन्वेन्शनस'' पत्रिका में ''इन द रूख'' नाम से जून 1896 में प्रकाशित हुई। किपलिंग का जन्म भारत में ही हुआ था। उन्होने भारत की पृष्ठभूमि में ''जंगल बुक'' व अन्य कहानियां लिखी। इस कहानी में किपलिंग ने वनों में हो रहे कार्यों का अत्यंत सजीव चित्रण किया है। यहां कहानी के शीर्षक ''रूख'' का अर्थ स्थानीय भाषा (पंजाब) में उस वनहीन क्षेत्र से है जहां यदा-कदा झाड़ियाँ हों और यह क्षेत्र चारे व ईधन के लिए भी इतना उपयोगी नहीं हैं। कहानी के आरम्भिक हिस्से में किपलिंग लिखते हैं :

''भारत में लोक सेवा में संलग्न विभागों में कोई भी विभाग वन विभाग से महत्वपूर्ण नहीं है। भारत के समस्त वनों को फिर स्थापित करना इनके हाथों में है। इसके कर्मचारी रेतीले तूफानों से जूझते हैं, इन रेतीले टीलों से संघर्ष करते हैं। वह समस्त हिमालय की वन संपदा के रक्षक हैं। वह इसकी उन वृक्षहीन पहाडियों के भी उत्तरदायी हैं जहां मानसूनों के कारण दर्रे बन गये हैं। वह विदेशी वृक्षों, जैसे नीलगिरी, इन दर्रो में रोपते है जिससे इन्हे फिर से हरा-भरा किया जा सके। मैदानी भागों में उनका मुख्य कार्य है अग्नि रेखाओं को साफ रखना, जिससे सुरक्षित वन आग से बचे रहें ताकि जब कभी सूखा पड़े तो उन्हे ग्रामीणों के मवेशियों के लिए खोल दिया जाए तथा वह वहां से चारा-ईधन इकट्ठा कर सकें। वे वृक्षों को छांटते हैं और लठ्ठों को रेलवे लाइनों के किनारे एकत्रित

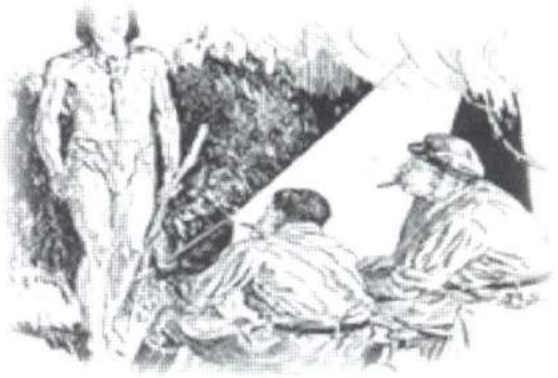

करते हैं जिससे बिना कोयले वाले ईजनों को ईधन मिल सके। इन वृक्षारोपणों का वह दशमलव के पांचवे हिस्से तक हिसाब रखते हैं। वे बर्मा के विशाल सागवान वनों के डॉक्टर व परिचारक हैं। इसी प्रकार वे पूर्वी रबर वनों व दक्षिण के भी वनों की देख-भाल करते हैं। वे हमेशा ही धन की कमी से जूझते रहते हैं। वन अधिकारी हमेशा ही अपने कार्यो के कारण मुख्य सड़को से दूर, जंगलों में रहते हैं। वे बस्तियों से बहुत दूर रहते हैं। कहानी-किस्सों से अलग, उनमे वहां अधिक समझदारी विकसित होती हैं। वे लोगों से मिलते हैं, वहां की व्यवस्था को समझते हैं। यहां इनका सामना चीतों, हिरणों, भालुओं, तेदुओं व जंगली कुत्तों से बार-बार होता है। यह सब हांको के दौरान नहीं वरन अपने दैनिक कार्य सम्पन्न करते हुए होता है। उनका अधिकतर समय घोड़ो की पीठ पर अथवा कैंनवास के तंबुओं के नीचे गुजरता है। वहां उनके साथी हैं - उनके द्वारा लगाए वृक्ष, अनगढ़ रेंजर अथवा वहां से गुजरते गरीब ग्रामीण लोग। ये वन, जिनकी वे देख-रेख करते, उस पर अपना गहरा प्रभाव छोडते हैं। अब उन्होंने उन चंचल गीतों को गुनगुनाना छोड़ दिया है जो उन्होंने कभी प्रशिक्षण के दौरान नैन्सी (फ्रांस) में सीखे थे। अब उन्होंने इन झुटमुटों की खामोशी अपना ली है, जिसके नीचे वे अब रहते हैं।''

कहानी में किपलिंग ने ''मोगली'' नामक एक मिथकीय पात्र रचा है। ''मोगली'' समस्त जंगली जीवों का रूप है जिसे उन्होने उन्नीसवीं सदी के अन्त के जटिल प्राकृतिक परिदृश्य

* मुलर - किसी जर्मन के लिए सामान्य संबोधन

का प्रतीक बना दिया। किपलिंग एक अन्य पात्र से पाठको को मिलाते हैं जिसका नाम है ''मुलर''। वह एक विशाल जर्मन था जो समस्त भारत के वनों का सर्वोच्च अधिकारी था - बंबई से बर्मा तक। वह जर्मन लहजे में बात करता है।

यहां सुधी पाठक इस कहानी के ''मुलर'' को लेकर दुविधा में रहते हैं कि आखिर ''मुलर'' की प्रेरणा कौन है ? भारतीय वन विभाग के प्रथम महानिरीक्षक डिएट्रिच ब्रांडिस थे और उन्हे ही भारतीय वानिकी का पिता भी कहा जाता है - वह एक जर्मन थे। बर्मा व भारत के अधिकांश वनों के प्रबन्धन व उत्थान में उनका योगदान अतुलनीय है। बहुत से जानकारों व ब्रांडिस की जीवनी के लेखक हरबर्ट हेसमर ने भी ''मुलर'' को ब्रांडिस का प्रतिरूप माना है। लेकिन उस दौर के इतिहास पर गौर करें तो हम पाते हैं कि ब्रांडिस (1864-1883) के बाद दो अन्य जर्मन विल्हम श्लिच (1883-1888) व वर्थहोल्ड रिबनट्राप (1884-1899) भी भारतीय वन विभाग के महानिरीक्षक रहे।

कहानी का काल व क्षेत्र रिबनट्राप को ''मुलर'' के काफी निकट लाते हैं। वह विशाल तो नहीं किन्तु पृथुल जरूर थे। एक तथ्य के अनुसार 23 दिसम्बर 1883 को एक समारोह के दौरान किपलिंग की भेंट रिबनट्राप से लाहौर में हुई थी। वह उनसे अत्यधिक प्रभावित भी थे। रिबनट्राप के पक्ष में बी.ई. स्माईथ ने कुछ तथ्य प्रस्तुत किये हैं। (स्माईथ के दादा ए. स्माईथ ब्रांडिस के समकालीन थे और उन्होने भी भारतीय वनों के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया है)। स्माईथ का कहना है कि किपलिंग इंग्लैड़ में शिक्षा पाकर 18 अक्टूबर 1882 को बम्बई में उतरे जबकि ब्रांडिस सेवा निवृत होकर 26 जनवरी 1883 को भारत से रवाना हो गये। इन दोनों के मिलने की संभावना कम ही है। एक अन्य तर्क प्रस्तुत करते हुए स्माइथ का कहना है कि ''मुलर'' कहानी में जर्मन लहजे में बात करता है। इससे हेसमर का ब्रांडिस के ''मुलर'' होने का दावा खारिज होता है क्योंकि ब्रांडिस शुद्ध अंग्रेजी में बात करते थे इसलिए कि उसकी पहली पत्नी रेचिल मार्शमैन अंग्रेज थी।

इस बौद्धिक बहस में न पड़ते हुए कहा जा सकता है कि ''मुलर'' कहानी का एक पात्र है और ब्रांडिस के कार्यो को जिस दक्षता से रिबनट्राप ने आगे बढ़ाया, किपलिंग ने ''मुलर'' के रूप में इन दोनों के कार्यो को समावेशित कर लिया। ऐसी ही जिज्ञासा पाठकों में ''रूख'' को लेकर भी

''इन द रूख'' - कथासार

यह एक निष्ठावान वन अधिकारी गिसबॉर्न की कहानी है जो वनों की देख रेख में लीन है। वह वनों को आग से बचाता है, नये वन रोपता है तथा जल धाराओं की निरंतरता बनाए रखता है। वह जंगल, जिसे वहां ''रूख'' कहते है, के आखिरी छोर पर सफेद बंगले में रहता है। एक दिन उसे बुलाया जाता है, क्योंकि चीते ने एक वन रक्षक को मार दिया था। वहां उसे एक लम्बा सा व्यक्ति मिलता है जिसने नाम मात्र के कपड़े पहने है, वह ही ''मोगली'' है जो उसे चीते तक पहुँचाता है। गिसबॉर्न चीते को मार गिराता है। मोगली इसके बदले इनाम लेने से मना कर देता है क्योंकि वह चीतों को नापसंद करता है। मोगली गिसबार्न का घर देखने की इच्छा व्यक्त करता है। गिसबॉर्न के घर बातचीत के दौरान मोगली उसे जंगली जानवरों के विषय में बहुत सी अद्‌भुत बातें बताता है तथा उस ताकत का प्रदर्शन करता हैं जिससे वह इन जानवरों पर नियंत्रण रखता हैं। गिसबॉर्न यह नहीं जानता कि यह मोगली के चार भेड़िये साथियों का कार्य था।

गिसबॉर्न एक बार जंगल के दौरे पर था जहां उसे मोगली मिलता है, उसे वह वन रेंजर बनने को कहता है। इसी बीच गिसबॉर्न की घोड़ी चोरी हो गई जिसे मोगली ने वापस गिसबॉर्न के पास पहुंचा दिया। वास्तव में घोड़ी को उसके खानसामे गफूर ने चुराया था। उसने उसके पैसे भी चुराये थे ताकि वह इसका इल्जाम मोगली पर लगा सके। जंगल के दौरे में गिसबॉर्न की ''मुलर'' से मुलाकात होती है। वह मुलर को भी मोगली के विषय में बताता है, जिससे मुलर भी उससे प्रभावित होता है। वह गिसबॉर्न को बताता है कि मोगली का बचपन सिवनी (म.प्र.) में भेड़ियों के बीच बीता है, वह उन्ही के बीच पला बढ़ा है। मोगली वन विभाग में कार्य करने को तैयार हो जाता है और उसका विवाह गफूर की बेटी से हो जाता है।

होती है। ई.पी. स्टैबिंग ने ''रूख'' को पंजाब में कहीं माना है। यहां एक बड़ा भू-भाग है चंगा मंगा जो इस दौर में वानिकी के केन्द्र में था। यह क्षेत्र बड़ी दोआब नहर व लाहौर के 44 मील दक्षिण-पश्चिम में स्थित है। इस भू-खण्ड को वन विभाग ने 1866 में अधिग्रहित किया। इस सींचित भूमि पर ईधन की आपूर्ति के लिए वन रोपा गया, जिससे पंजाब रेलवे व अन्य इंजनों की जरूरतों को पूरा किया जा सके। यहां मुख्य रूप से शीशम व खैर उगाया गया। बाद में यहां शहतूत व यूकेलिप्टस के वृक्ष लगाए गये। यह लगभग 20 वर्ग मील का क्षेत्र था। किपलिंग ने सभवंत अपने पंजाब प्रवास में इस वन का भ्रमण किया हो और उसे अपनी कहानी में जगह दी हो।

कहानी का एक अन्य पात्र गिसबॉर्न किस जंगल में काम करता था ?एक संदर्भ के अनुसार यह स्थान देहरादून था, उत्तर प्रदेश का वह पश्चिमी हिस्सा जहां साल वन की एक विशाल पट्टी है। किंतु, स्माईथस का मानना है कि मोगली ने अपना प्रारम्भिक जीवन सिवनी (मध्य प्रदेश) के जंगलों में भेड़ियों के दलों में बिताया। यह जगह वहां के जंगल में गुजरती बाणगंगा नदी की सहायक जलधाराओं के समीप हो सकती है। किंतु, कहानी के अनुसार, यह संभव नहीं लगता कि मोगली अपने चार भेड़िये साथियों के साथ घनी आबादियों को पार करता हुआ 750 मील उत्तर में दून तक पहुंच सके। हां, सिवनी से 120 मील पूर्व में सैकाल रेंज में साल वन है, जहां वह पहुंच सकता है। लेकिन यह जगह भी चंगा मंगा से 500 मील दूर है, जहां मुलर दौरा करता है। अपनी कहानी में किपलिंग ने कान्ये वन का जिक्र किया है जहां लेना नाम का झरना है। किन्तु, किन्ही भी मानचित्रों में यह जगह नहीं पाई गई है।

वास्तव में किपलिंग ने कहानी कहने की आजादी लेकर काल्पनिक एवं वास्तविक जगहों को खूबसूरती से आपस में गूंथ दिया है। यही नहीं, उन्होने समय के साथ भी यह आजादी बरती है, जिससे मुलर को पहचानने का भ्रम बना रहता है। कहानी में यह यथार्थ व कल्पना का मेल पाठकों को चमत्कृत करता रहता है और कहानी हमेशा के लिए उसकी यादों में बस जाती है।

नानी जी

टीवी की शौकीन हमारी नानी जी।
खाती हैं नमकीन हमारी नानी जी।

जीवन बीता कभी मदरसे नहीं गई,
भैंस के आगे बीन हमारी नानी जी।

नाना जी परतंत्र दिखाई देते हैं,
रहती हैं स्वाधीन हमारी नानी जी।

गली मुहल्ले नुक्कड़ की अफवाहों पर,
करतीं नहीं यकीन हमारी नानी जी।

बिन साबुन पानी जाड़े के मौसम में,
होतीं ड्राई क्लीन हमारी नानी जी।

चढ़ा पेट पर सोमू तबला बजा रहा,
ताक धिना धिन धीन हमारी नानी जी।

गलत बात सुनकर गुस्से में आ जातीं,
तेज धूप में टीन हमारी नानी जी।

घर पर बैठे-बैठे खटिया ही तोड़ें,
सोचें भारत-चीन हमारी नानी जी।

जितना नया-नया नाती है गोदी में,
उतनी हैं प्राचीन हमारी नानी जी।

– यश मालवीय

वद्तु संस्कृतम् जयतु भारतम्

श्री एम. विनयचन्द्रन
वन आनुवंशिकी एवं वृक्ष प्रजनन संस्थान, कोयम्बत्तूर

जहाँ तक मेरा ख्याल है, मुझे लगता है कि संस्कृत दुनिया की सबसे पुरानी भाषा है और समस्त भारतीय भाषाओं की जननी है। समस्त भारतीय भाषाएं संस्कृत से ही उत्पन्न हुई हैं। संस्कृत को देवनागरी में लिखा है। इसे देवताओं की भाषा भी माना जाता है।

हर राष्ट्र की अपनी एक भाषा होती है जो कि उस राष्ट्र की प्रति, जिंदगी, जीवन शैली, इतिहास एवं संस्कृति से जुडी हुई होती है। अगर हमें किसी भी देश की संस्कृति एवं इतिहास के विषय में जानना है तो हमें उस देश की भाषा के बारे में जानकारी अवश्य होनी चाहिए।

''जट शरीरम'' अर्थात जिस देश की अपनी एक भाषा न हो, वह देश ऐसा होता है मानो शरीर बिना आत्मा। पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तिका ''डिस्कवरी आफ इण्डिया'' में लिखा है कि ''भारत का अपना एक सुनहरा इतिहास था जिसकी तुलना हमसे चीन राष्ट्र मात्र कर सकता है''।

इतिहास की जानकारी रखने से हमें भरपूर हौसला और हिम्मत एवं दुनिया के सामने सिर उठाकर इज्ज़त की ज़िन्दगी जीने में मदद मिलती है। संस्कृत भाषा की जानकारी से हमें भारत के सुनहरे इतिहास के बारे में जानने और समझने में मदद मिलती है और बिना संस्त भाषा के ज्ञान के ये लगभग असम्भव है।

संस्कृत का इंसान की ज़िन्दगी में भरपूर योगदान है। जब एक बच्चा अपनी शिक्षा आरम्भ करता है तो उसकी जिह्वा में ''हरि श्री गणपतये नम:'' शहद एवं स्वर्ण के साथ लिखा जाता है। यहाँ से शुरू होता है अन्य रीति रिवाज जैसे ''अन्नप्राशन, उपनयनम, विद्यारंभम'' आदि से लेकर अंतिम संस्कार से सम्बन्धित क्रिया तक संस्कृत का योगदान है।

महान ऋषि-मुनियों एवं आचार्यों द्वारा रचित महान धार्मिक ग्रन्थ जैसे महाभारत, रामायण, वेद, उपनिषद एवं योग, आयुर्वेद, नाट्यशास्त्र, कालगणना, ज्योतिष विद्या, संगीत का विभाजन, वैदिक ज्ञान, कला एवं संस्कृति के रचना में संस्कृत का महान योगदान है।

''पठतु संस्कृतम् जयतु भारतम्''

संस्कृत एक अमर भाषा है, हमें इसे सीखना चाहिए और हमारे आने वाली पीढ़ी को भी सीखना चाहिए ताकि हम एवं हमारी आने वाली पीढी भारत के सुनहरे इतिहास को पढ़ एवं समझ सके, जो उन्हें आत्म-सम्मान के साथ सिर उठाकर जीना सिखा सके।

है उड़ान की जद मगर, बिछा हुआ है जाल,
कैसे कोई हल करे, इतना बडा सवाल।।

झुलसा अपनी आग में, राहत का सामान,
बादल भागे छोड़कर, जलता हुआ मकान।।

- यश मालवीय

सामाजिक बदलाव में अनुवाद की भूमिका

श्रीमती पूंगोदै कृष्णन
वन आनुवंशिकी एवं वृक्ष प्रजनन संस्थान, कोयम्बत्तूर

विश्व में बहुत सी भाषाएँ है। किसी व्यक्ति से यह अपेक्षा नहीं की जा सकती है कि वह विश्व की सभी भाषाओं में पारंगत होगा। प्रत्येक भाषा में ज्ञान सामग्री समाहित है। ऐसी स्थिति में अनुवाद एक ऐसा माध्यम है जिसके द्वारा वह सभी प्रकार के ज्ञान सामग्री को प्राप्त कर सकता है। विभिन्न भाषाओं से अनुवाद कार्य का उद्देश्य भाषा और साहित्य की समृद्धि के अतिरिक्त एक दूसरे को समझने तथा इस प्रकार के पारस्परिक अवबोध के सहारे एक दूसरे के निकट आना है। अनुवाद वस्तुत: जटिल भाषिक प्रक्रिया का परिणाम या उसकी परिणति है। यह स्वयं में प्रक्रिया न होकर, उस प्रक्रिया का फल है। अनुवाद की प्रक्रिया बहुस्तरीय है। उसका एक स्तर विज्ञान की तरह विश्लेषणात्मक है जो क्रमबद्ध विवेचन की अपेक्षा रखता है, उसका दूसरा स्तर संक्रमण का स्तर है जो शिल्प के अंतर्गत आता है और तीसरा स्तर पुनर्गठन या अभिव्यक्ति का स्तर है जिसे कला के अंतर्गत परिगणित किया जा सकता है। इस तरह यह अनुवाद विज्ञान, शिल्प और कला से परिणित प्रक्रिया है।

अनुवाद से तात्पर्य है – किसी एक भाषा में जो कहा गया है उसे दूसरी भाषा में कहना अर्थात अनुवाद भाषा का वह जादुई व्यवहार है जो भाषा में कहीं गई अभिव्यक्ति को उसकी पूरी संवेदना, सुन्दरता और अदायगी के अंदाज के साथ दूसरी भाषा में ऐसे उतारता है कि मूल संवेदना का रस-रंग तो जैसे का तैसा बना ही रहता है, जिस भाषा में उसको उतारा गया है उस पर भी इस रस-रंग-रूप की संवेदना का अतिसार महसूस नहीं होता। अनुवाद ऐसी परकाया प्रवेश प्रक्रिया है जो स्रोत भाषा और लक्ष्य भाषा की काया को एक साथ जीवन्त बनाये रखती है।

अनुवाद विविध भाषाओं के मध्य एक सेतु का काम करता है। अनुवाद के माध्यम से व्यक्ति आसानी से दूसरी भाषा के भाव और विचार समझने में सक्षम हो जाता है। भारत की अखंडता को सुरक्षित रखने के लिये और देश को सुदृढ़ बनाने के लिये पारस्परिक संभाषण और सौहार्द की आवश्यकता होती है और यह संभाषण और सम्प्रेषण पूरे देश में अनुवाद के माध्यम से ही सम्भव हो सका है।

समाज और अनुवाद के सम्बन्ध का प्रश्न आज नये सिरे से विचार की अपेक्षा रखता है। इस प्रश्न को महत्वपूर्ण मानने पर भी प्राय: टाला जाता रहा है। जबकि समाज और अनुवाद का सम्बन्ध नया नहीं है। इस सम्बन्ध की जड़ें मानव समाज में काफी पुरानी हैं। अनुवाद ने विश्व भर में ज्ञान-विज्ञान की चेतना से मानवीय ज्ञानात्मक और भावात्मक संवेदना को बदला है। अनुवाद से मिलने वाले ज्ञान ने मनुष्य के समाजशास्त्र को एक देश की सीमा से निकाल कर दूसरे देश तक पहुँचाया है। मनुष्य का इतिहास साक्षी है कि अनुवाद कार्य ने सामाजिक चेतना के बदलाव, संघर्ष और टकराहट को प्रबल और सजग प्रक्रिया के रूप में जीवन्त रखने में एक महत्वपूर्ण भूमिका को निभाता है।

वैचारिक आदान-प्रदान की चेतना से सामाजिक वैचारिकता में एक नई भूमिका तैयार करने में अनुवाद का महत्वपूर्ण योगदान होता है। इस तरह सामाजिक परिवर्तन में अनुवाद की महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। अनुवाद के माध्यम से जिस नये ज्ञान – विज्ञान के क्षेत्र से हमारा परिचय होता है वह हमारी सामाजिक – सांस्कृतिक चेतना के निर्माण पर निर्धारण में आंतरिक सक्रियता उत्पन्न करता है। अनुवाद की आवश्यकता अक्सर हमें तब पड़ती है जब हम अपरिचित क्षेत्रों से परिचित होना चाहते है और उन क्षेत्रों को किसी भाषा विशेष के जन सामान्य के लिये सुलभ बनाने के प्रयास में संकल्पबद्ध होते है या फिर विषय विशेष में उपलब्ध नये से नये ज्ञान की प्रगति की निरंतर जानकारी रखना चाहते हैं।

अनुवाद की इस महत्वपूर्ण भूमिका को जब हम वर्तमान संदर्भों में देखते है तो पाते है कि संसार के सभी विकसित देशों की राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, वैज्ञानिक, प्रौद्योगिक प्रगति में अनुवाद की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। कहना चाहिए कि आज हम जिस विश्व परिवार (Global family) की

बात कर रहे है या दूरियां जितनी कम होती जा रही है अनुवाद की आवश्यकता और महत्व उतना ही बढता जा रहा है। इस तरह आज की बदलती हुई सामाजिक, आर्थिक परिस्थितियों में अनुवाद बड़ी व्यापक भूमिका का निर्वाह कर रहा है।

अनुवाद आज के जीवन का एक अनिवार्य अंग बन गया है। यही कारण है कि प्रत्येक देश की सरकार ने अनुवाद का एक स्वतंत्र विभाग रखा है। विषय विविधता के साथ ही अनुवाद का क्षेत्र भी विविध आयामी हो गया है। अनुवाद परम्परा यद्यपि पुरानी है तथापि उसे बीसवीं शताब्दी में ही पर्याप्त महत्व प्राप्त हुआ है। अत: अनुवाद को आधुनिक युग की माँग की उपज कहना गलत नहीं होगा। अनुवाद वर्तमान काल की अनिवार्य आवश्यकता है।

आँखों को इंतजार की भट्टी पे रख दिया

आँखों को इंतजार की भट्टी पे रख दिया
मैंने दिये को आँधी की मर्जी पे रख दिया

आओ तुम्हें दिखाते हैं अंजामे-जिंदगी
सिक्का ये कह के रेल की पटरी पे रख दिया

फिर भी न दूर हो सकी आँखों से बेवगी
मेंहदी ने सारा खून हथेली पे रख दिया

दुनिया क्या खबर इसे कहते हैं शायरी
मैंने शकर के दाने को चींटी पे रख दिया

अंदर की टूट -फूट छिपाने के वास्ते
जलते हुए चराग को खिड़की पे रख दिया

घर की जरूरतों के लिए अपनी उम्र को
बच्चे ने कारखाने की चिमनी पे रख दिया

पिछला निशान जलने का मौजूद था तो फिर
क्यों हमने हाथ जलते अँगीठी पे रख दिया

- मुनव्वर राना

बढ़ई

श्रीमती आर-जी-अनिता
वन आनुवंशिकी एवं वृक्ष प्रजनन संस्थान, कोयम्बत्तूर

एक बुजुर्ग बढ़ई को कार्य से निवृत्त होने का समय हो गया था। उन्होंने अपने नियोक्ता/ठेकेदार से कहा कि घर निर्माण व्यवसाय को छोड़कर अपने पत्नी एवं परिवार के साथ आरामदायक जीवन का आनंद लें। वह भुगतान चेक को बहुत मिस करेगा लेकिन उसे निवृत्त होने की जरूरत है।

ठेकेदार को इस बात का गम है कि एक अच्छे कार्यकर्ता कार्य से निवृत्त हो रहा है। उन्होंने बढ़ई से पूछा कि हो सके तो निजी पक्ष के रूप में सिर्फ एक और घर का निर्माण करें। बढ़ई ने हाँ तो कहा लेकिन उसके चेहरे से साफ पता चलता था कि उसका दिल काम करने में नहीं है। उन्होंने घटिया कारीगरी का सहारा लेकर एवं घटिया सामग्री का इस्तेमाल कर दुर्भाग्यपूर्ण तरीके से अपने कार्य को समाप्त किया।

जब बढ़ई ने अपने कार्य को समाप्त किया और बिल्डर घर का निरीक्षण करने आये तब ठेकेदार ने सामने की दरवाज़े की चाबी को बढ़ई के हाथ सौंपा और कहा कि यह मेरा उपहार तुम्हारे लिये है।

तब बढ़ई को झटका सा लगा। क्या शर्म की बात है। यदि उसे मालूम होता कि वह अपने लिये ही घर बना रहा है तो उसे अलग ही ढंग से बनाया होता। अब उसे उसी घर में रहना पड़ा जिसे अच्छी तरह नहीं बनाया था।

ऐसा ही हमारे साथ भी है। हम एक विचलित तरीके से हमारे जीवन का निर्माण कर रहे हैं। अभिनय के बजाय प्रतिक्रिया कर रहे हैं, सर्वश्रेष्ठ से कम प्रस्तुत करने को तैयार हैं। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि हम अपने कार्य को पूर्ण करने के लिये पुरा प्रयास नहीं करते हैं। फिर एक झटके के साथ हमारे द्वारा निर्मित स्थिति को देखें तो पाते हैं कि हम उसी घर में रह रहे हैं जिसे हमने बनाया था। यदि हमने उस समय महसूस किया होता तो उसे अलग ढंग से बनाया होता।

अपने को बढ़ई के रूप में सोचिए और अपने घर के बारे में सोचिए। प्रत्येक दिन हथौडा से कील लगाते है एवं उस पर बोर्ड टांगते है या एक दीवार खडा करते है। बुद्धिमानी से बनाइए। यही जीवन है। इसे निर्माण करते ही रहना होगा। आप केवल एक दिन के लिये ही रहे उस एक दिन में भी विनय और गरिमा के साथ रहिए। दीवार पर टंगे पट्टिका यह कहती है कि ''जीवन अपने आप में एक परियोजना है''।

कौन इसे स्पष्ट रूप से कह सकता है? आपका आज का जीवन, अतीत की और आपकी दृष्टिकोण एवं विकल्प का परिणाम है। आज का आपका नजरिया एवं विकल्प ही कल आपका जीवन होगा।

जीवन एक परीक्षा

कुमारी अंजिपा
भारतीय वानिकी अनुसंधान एवं शिक्षा परिषद्, देहरादून

मनुष्य का सम्पूर्ण जीवन एक परीक्षा है। यह संसार परीक्षा कक्ष है जिसमें आकर प्रत्येक मनुष्य अपने जीवन के प्रश्नों को हल करता है, आजीवन अनेक प्रश्नों के उत्तर देते-देते एक दिन वह समय उपस्थित होता है, जब उससे जीवन रूपी कॉपी छीन ली जाती है। परीक्षक उसकी जीवनगत कॉपी का मूल्यांकन करता है और उसे फेल या पास करता है।

मृत्युलोक में बार-बार आना ही जीवन की परीक्षा में फेल होना है क्योंकि जो मनुष्य जीवन के मौलिक प्रश्नों का ठीक-ठीक उत्तर नहीं दे पाता, उसे बार-बार जन्म लेना पड़ता है और पुन: उन्हीं प्रश्नों को उससे पूछा जाता है। मानव इस जीवन की परीक्षा में बार-बार फेल होता रहता है। फेल होने में भी अंको की अधिकता और न्यूनता उसके जन्मगत विभेद का कारण बनती है। चौरासी लाख योनियां जीव को भटकाने के लिए बनी हैं। पशु रूप या अन्य जीव रूप में आकर मानव परीक्षा के प्रश्नों का उत्तर नहीं दे पाता है, यह स्वाभाविक भी है क्योंकि पशुओं की समझ को विकसित करने के लिए धरती पर कोई शास्त्र उपलब्ध नहीं है और न ही कोई ऐसा धर्माचार्य है जो उनके जीवन के उन मूलभूत प्रश्नों को सुलझा सके, उन्हें हल करने की प्रेरणा दे सके। ऐसा सुअवसर तो मानव जीवन को पाकर ही सुलभ होता है।

प्रश्न यह है कि वे कौन से प्रश्न हैं जिनका उत्तर ठीक-ठीक न देने पर मनुष्य को बार-बार जन्मना -मरना पड़ता है। यह प्रश्न अनेक नहीं केवल एक है। यद्यपि मानव, जीवन के अनेक प्रश्नों को हल कर लेता है किन्तु वह एक प्रश्न को, जो मौलिक प्रश्न है, या तो प्रश्न ही नहीं समझता या समझते हुए भी टाल जाता है क्योंकि इसे वह अनिवार्य नहीं मानता। यद्यपि यह प्रश्न जीवन के तमाम प्रश्नों से अति महत्वपूर्ण है। मानव को सजग किया गया किन्तु सदियों से सोये रहने का अभ्यासी मानव उस आवाज़ को टाल जाता है और अपने सांसारिक प्रपंचों में ही खोया रहता है।

वह अति महत्वपूर्ण प्रश्न है अपने परमपिता को जानना, जानने के बाद इसे मानना और तद्नुसार इसे अपने जीवन में ढालकर आगे बढ़ना। हमारा असली जीवनदाता कौन है ? यह प्रश्न सृष्टि के आंरभ से ही मानव से पूछा जाता रहा है। अब सवाल यह है कि क्या इस प्रश्न का उत्तर हम स्वयं दे सकते हैं? कदापि नहीं, जैसे बिना दर्पण के हम अपना चेहरा स्वयं नहीं देख सकते।

प्रश्न है कि गुरू किसे मानें ? इस संसार में यद्यपि स्वयं को गुरू रूप में प्रदर्शित करने के लिए बहुत से लोग लालायित रहते हैं किन्तु गुरू की पहचान ज्ञानीजन इस रूप में बताते हैं कि जो हमारे जीवन के सम्पूर्ण प्रश्नों को हल कर दे या हमारे सारे प्रश्नों को समाप्त कर दे या हमें पूरी तरह जिज्ञासाविहीन बना दे वही गुरू कहलाने के अधिकारी हैं। गुरू की महत्ता और उनका स्थान शीर्ष माना गया है। गुरू, ब्रह्म, विष्णु और महेश के समतुल्य हैं। इनकी उच्चता देह की नहीं वरन देही की है, जो इसका वह अनुभव कराता है वही गुरू सर्वश्रेष्ठ है।

नेकी का फल

श्रीमती रूपेन्द्रिका
भारतीय वानिकी अनुसंधान एवं शिक्षा परिषद्, देहरादून

एक बार कुछ व्यक्ति सफर के दौरान सुरंग से गुजर रहे थे। चलते समय उनके पैरों मे कंकरिया चुभने लगी, उनमे से कुछ लोगों नें इस ख्याल से कि यह कंकरिया और किसी को न चुभ जाये, नेकी के खातिर उठाकर जेब में रख ली। उनमें से कुछ लोगों ने ज्यादा उठाई और कुछ ने कम।

जब वह उस अंधेरी सुरंग से बाहर आए तो उन्होंने देखा की वह कंकरियां नहीं हीरे थे। जिन्होंने कम उठाए वो पछताए कि ज्यादा क्यो नहीं उठाए। जिन्होंने नहीं उठाए वो और ज्यादा पछताए कि हमने क्यों नहीं उठाए।

इस संसार में जिन्दगी की मिसाल इस अंधेरी सुरंग जैसी है। और नेकी यहां कंकरियों की मानिंद है।

इस जिन्दगी में हमने जो भी नेकी की है। वो आखिर में हीरों की तरह कीमती होगी और इन्सान तरसेगा कि और क्यों न की।

मैं "किसी से बेहतर" करूं
क्या फर्क पडता है!
मै "किसी का बेहतर" करूं
बहुत फर्क पडता है!!

आओ मिलकर पेड़ लगाये

श्री शम्भू सिंह रावत
वन अनुसन्धान संस्थान, देहरादून

पक्षियों ने इक सभा बुलाई,
सबने अपनी बात बताई।

सुन रहा था बूढ़ा तोता,
जो ऊँची डाली पर था बैठा।

सबकी समस्या लाया कौआ,
हम सब है मुश्किल में भैया।

न तो हमें मिलता स्वच्छ जल,
और दिखते हैं बहुत कम जंगल।

न दिखती है शीतल छाया,
जाने कैसा समय है आया।

दूर देश उड़कर जाते हैं,
तब जाकर भोजन पाते हैं।

क्यों न हम मिलकर सुलझाऐं,
हम अपने कुछ नियम बनाऐं।

आओ धरा को सुन्दर बनाऐं,
आओ मिलकर पेड़ लगाऐं।

एफ.आर.आई.

श्री अनूप कुमार वर्मा
वन अनुसन्धान संस्थान, देहरादून

वन संस्थान हमारा प्यारा विश्व में सबसे न्यारा है,
हम है इसके फूल और यह पुष्पित उद्यान हमारा है।

सूर्योदय की प्रथम किरणें जिसको प्रणाम करती हैं,
सुप्रभात की प्राणवायु मस्तिक में चेतना भरती है।

दीर्घजीवी तरूओं पर प्रतिदिन पक्षी कलरव करते हैं,
जीवों को आनन्द देकर मन की क्लान्ति को हरते हैं।

अपना शैशव, अपना यौवन गोदी में इसकी गुजारा है,
हम है इसके फूल और यह पुष्पित उद्यान हमारा है।

हरे भरे मैदानों के मध्य मुख्य भवन की छटा निराली है,
नयनाभिराम चीड़ की मन्द बयार मन को सुख देने वाली है।

इसकी रिसर्च इसकी शिक्षा विश्व में जानी जाती है,
यह देशों के कोने-कोने में पर्यावरण सन्तुलित बनाती है।

वन संवर्धन की प्रतिस्पर्धा में यह नहीं किसी से हारा है,
हम हैं इसके फूल और यह पुष्पित उद्यान हमारा है।

इस परिसर की प्राणवायु ने प्रदूषण से सदा उबारा है,
हम है इसके फूल और यह पुष्पित उद्यान हमारा है।

पर्यावरण बचाओ

सुश्री निशात अन्जुम
वन अनुसन्धान संस्थान, देहरादून

मिट्टी, जल, वायु, हरियाली,
इनको मत बिसराओ।
आज समय की मांग यही है,
पर्यावरण बचाओ।

जीव जगत के मित्र सभी ये,
जीवन देते सारे,
इनसे अपना नाता जोड़ो,
इनको मित्र बनाओ,
आज समय की मांग यही है, पर्यावरण बचाओ।

तब तक जीवन है धरती पर,
जब तक जग में पानी,
जब तक वायु शुद्ध रहती है,
सोंधी मिट्टी रानी,
तब तक मानव का जीवन है,
यह सबको समझाओ,
आज समय की मांग यही है, पर्यावरण बचाओ।

हरियाली की महिमा समझो,
वृक्षों को पहचानो,
ये मानव के जीवन दाता,
इनको अपना मानो,
एक वृक्ष यदि कट जाये तो,
ग्यारह वृक्ष लगाओ,
आज समय की मांग यही है, पर्यावरण बचाओ।

जीव जगत की रक्षा करना,
अब कर्तव्य हमारा,
जलवायु, मिट्टी का संकट,
दूर करेंगे सारा,
संरक्षण हो लक्ष्य सभी का
ऐसी अलख जगाओ
आज समय की मांग यही है, पर्यावरण बचाओ, पर्यावरण बचाओ।

अभिलाषा

श्री छत्रपाल सिंह
भारतीय वन अनुसन्धान एवं शिक्षा परिषद्, देहरादून

मुझे उस ओर ले चल नियति
जहां घने छायादार तरूओं की छांव में
वन वैभव से परमार्थ की प्रेरणा मिले।

जहां बडे सवेरे मुर्गे की बांग सुन जागूं
अलौकिक शक्ति के ध्यान में खो जाऊं
जब सम्पूर्ण सृष्टि नींद के आगोश में हो
उस वेला पक्षियों के मधुर कलरव सुनूं।

लहलहाती फसलों के बीच ठहरकर
शस्य श्यामल पृथ्वी की मनोरम छटा को निहारूं
कुसुमित ओर पल्लवित खेती की भीनी-2 खुशबू भरी
मन्द बयार के स्पर्श से मन को आल्हादित करूं।

गगनचुम्बी पर्वतों पर बर्फ से ढके वनों में
कुलाचें भरते दुर्लभ वन्यजीवों को देखूं
नीचे घाटियों में बसे श्रमजीवियों के पास जाकर
कुछ पल उनका सुख दुख बांटने की सोचूं।

सुदूर अठखेलियां करती समन्दर की लहरों के पास जाकर
मौन हो जाऊं, मन में गहराई लाऊं
जहां तहां झीलों और तलाबों पर विचरते
रंगबिरगें मनोहरी प्रवासी पक्षियों के साथ
सरहदों की जंजीरों को तोड़ते वायु के झोंकों सा
बंजर भूमि के बीहडों के बीच बसे गांवों की ओर चलूं।

विरस पतझड़ में सुकुमार पत्तों की सरगम
लघु सरिताओं, झरनों की कलकल के बीच
किसी तपस्वी सा कठोर साधना में बैठ कर
प्रकृति के निरूपम सौन्दर्य की अनूभूति करूं
मुझे स्वर्ग की परिकल्पना में ले चल नियति।

गीत

श्री रमेश सिंह
वन अनुसन्धान संस्थान, देहरादून

आइए मेरे हुजूर कुछ देर बैठिए,
कुछ सुनिए और कुछ अपनी सुनाइए।

पीपल की घनी छांव है, तन को सुकून है,
तुम पास मेरे हो तो मन को सुकून है।
अब इस कदर ना हम से नजरे चुराइए,
कुछ सुनिए और कुछ अपनी सुनाइए।

माना कि इस जहां में तुम सा नहीं कोई,
अरे हुजूर ! दिल में जरा झांकिए हम सा भी नहीं कोई
बस अब और यूं ना नखरे दिखाइए,
कुछ सुनिए और कुछ अपनी सुनाइए।

बचपन की लुका-छुपी का वो खेल याद है,
तुम्हारा रूठना और मनाना भी याद है।
बचपन के हसीं लम्हों को यूं ना भुलाइए,
कुछ सुनिए और कुछ अपनी सुनाइए।

हिमाक़त को मेरी आप दिल्लगी न जानिए
दिल में लगी इस आग को पहचान लीजिए
हिक़ारत भरी निगाह से यूं ना निहारिए,
कुछ सुनिए और कुछ अपनी सुनाइए।

सुगन्धा

श्री अमित कुमार सिंह
वन अनुसन्धान संस्थान, देहरादून

इस कुदरत की सुन्दरता को देखो
सुगन्धता बिखेरती चारों ओर है
चम्पा कहीं कचनार हैं तो
अमलतास, गुलमोहर संग कई और भी हैं।

उस कुदरत की सुन्दरता को देखो
सुगन्धता बिखेरती चारों ओर है
गुलाब कहीं चमेली हैं तो
लिली, मोगरा संग कई और भी हैं।

उस कुदरत की सुन्दरता को देखो
कुदरत ने दी है भेंट हमें
कस्तूरी मृग ने मचा रखी हैं,
सुगन्ध की धमाल हैं।

हिम से भरा सुगन्धित हिमालय
महकती नंदा की ऊंची पर्वत चोटी
सुगंधित नीर की चादर ओड़े है बहती
गंगा यमुना की निर्मल जलमाला ने मचा रखी हैं
सुगन्ध की धमाल हैं।

कुदरत ने हम सबको दी है मीठी सुगन्ध
प्यार की सुगन्ध को बनाये जीवन का संदेश
आओ मिटाए मनों की दुर्गन्ध
फैलाये कुदरत की प्यार की सुगन्ध।

गंगा चाहती शुद्धिकरण

श्री अजय वशिष्ठ
शुष्क वन-अनुसंधान संस्थान, जोधपुर

सागर से मिलती भागीरथी,
अक्सर सोचती है।
क्या मैं वही गंगा हूँ ?
जो जनकल्याण हेतु,
स्वर्ग छोड़ धरा पर उतरी।
मुनिजन कहते थे मोक्षदायनी।
जल तो जैसे अमृत ही था।

कालक्रम में बही मैं निरन्तर।
आज हिम शिखरों से निकलकर।
निर्जन वन में आगे बढ़कर।
पूर्व जैसा आभास होता।
विमल जल पर हर्ष होता।

ग्राम-नगरों में क्या देखा ?
मानव अनोखे खेल करता।
कहीं पूजित कहीं दूषित करता।
दिन-दिन बढ़ता औद्योगिक विकास।
जल शुचिता का करता है ह्रास।

भागीरथ प्रयास तो कथाओं में है।
"शुद्धिकरण" अब चर्चाओं में है।
तरसती नदी निज उद्धार को है।
अब दीपदान माँ की पीड़ा न हरेगा।
क्या दूषित जल मरणासन्न को मुक्ति देगा ?

गंगा यों कब तक बहेगी।
दोहन-दूषण सहती रहेगी।
अविरल प्रवाह अब संशय में।
गरिमा भी अब असमंजस में।
स्वार्थ छोड़ अगर ना जागेगा
जल बिन क्या खुद जी सकेगा।
बेसुध ! यह जल जीवन है।

धरती माँ

सुश्री दिव्या यादव
वन अनुसन्धान संस्थान, देहरादून

पर्वत पवन नदियाँ जंगल बनाया,
धरती माँ को ईश्वर ने कण-कण सजाया

होते हम भी गर पक्षियों के झुंड में
मीत वन के गोते खाते समुद्र से कुंड में,
इंसानों ने धब्बा सरहर गलाया - धरती माँ.....

प्यारे बेटे मरते, सीमा पे जाके।
माँ की आँखें नम होके राह उनकी ताके,
दुश्मन है कौन जान किसने गवाया - धरती माँ.....

पहचान हमारी देते कागज के टुकड़े
मुखडे पे जाने कितने रहते है मुखड़े
इंसानों ने क्या इंसानियत भुलाया, - धरती.....

दिव्या ''निरा'' सूधी ले बनवारी
न्याय का पलडा किसका हो जाये भारी
अपने ही हाथों आशियाना जलाया - धरती माँ.....

दोषी कौन ?

सुश्री दिव्या यादव
वन अनुसन्धान संस्थान, देहरादून

नारी सबला है इनको अबला क्यों बताते हो ?
नीयत तुम्हारी ठीक नहीं दोष कपड़ों पे क्यों लगाते हो ?
कुकर्मी, अधर्मी, विधर्मी तो, डसता है एक बार
बार-बार बेटियों के चीर आँखों से क्यों हटाते हो ?

कभी माँ बेटी बहन कभी धात्री बन जाती है,
गैर हो कर किसी का घर बसाती है।
हाथ थामा है जिसका उसी की हो जाती है,
जीवन भर सारे रिश्ते नाते निभाती है।
चन्द दौलत की खातिर इनको क्यों जलाते हो ?
बार बार.....

सती अनसूया, सुलोचना, सावित्री बन कर आयी है
मर कर भी अपना पतिव्रत धर्म निभाती है।
पुरूषों ने क्या कभी पत्नीव्रत धर्म निभाया है।
एक गुजर गई तो दूसरी पर नजर लगाया हैं।
पंख काट कर इनको पिंजरे में क्यों सजाते हो ?
बार बार.....

काली रात की कहानी दिल्ली की सड़के चिल्लाती हैं,
आज भी ये रास्ता सबके दिल को दहलाती हैं।
गली महल्लों में न जानी कितनी अस्मत लूटी जाती है,
हाथ पे हाथ धरे हमारी मंशा सिर्फ कानून बनाती है।
चन्द लम्हें इनके खातिर आँसू क्यों बहाते हों ?

दिव्या ''निरा'' बीमारी मन से हटाओ
बेटियों को भी बराबरी ले कर आओ
राम, कृष्ण, बुद्ध, महावीर, नानक, ख्वाजा की ये धरती
इस जन्नत को दाग मत लगाओ
मन में पाप का मैल क्यों जमाते हो ?
बार बार.....

बालिका की पुकार

श्री संतोष कुमार
वन अनुसन्धान संस्थान, देहरादून

सीता सावित्री मैं बनूंगी मीराबाई,
ना मारो हे भाई खाके दवाई।

बेटी मैं बनी हूँ मुझे भी अफसोस है,
लेता दहेज ये समाज का ही दोष है,
सुनेगा समाज कब बेटी की रूलाई ?
न मारो.....।

कपड़ा ना कापी, पाती न कराना पढ़ाई
गुदरी ओढ़ा के देना पुवाल पर सुलाई
न चाहूँ फल मिठाई, रखना जूठा खिलाई
न मारो.....।

होउंगी सयानी तो, बजेगा बैन्ड बाजा।
घोड़ी चढ़ के आयेंगे एक दुल्हे राजा।
दोगी आशीर्वाद तुम आँचल फैलाई।
न मारो.....।

दुर्गा क्षमा, शिवा धात्री अष्ट भुजी,
भारत में तो देवीयाँ जाती हैं पूजी
बेटी मार कैसे होगी देवी की पुजाई ?
न मारो.....।

कर रही हो पाप जो होगी हत्यारी,
ताना मारेंगे तुझको 'सन्तोश सनारी'।
धो न पाए दाग गंगा जल की धुलाई।
न मारो.....।

प्रेम पथ

श्री संतोष कुमार
वन अनुसन्धान संस्थान, देहरादून

दिल में देता है दर्द, करता दिल बे-करार रे
वो पागल ही होगा, बनाया जिसने प्यार रे

नारद की वीणा लगने लगी भारी।
मोहिनी के प्रेम ने मती जब मारी।
हरी जी से मुख मांगे, करके गोहार रे ।
वो पागल.....

पत्ता पत्ता बेला जंगल धावे त्रिपुरारी।
प्रेम के आंगन में जली जनक दुलारी।
बिछुडन वियोग में भूली सोलहो श्रृंगार रे

पावन पवित्र प्रेम गोपियों ने माना
जिसकी महिमा श्री कृष्ण ने बखाना
भक्तों के वस में नाचे जग के तारण हार रे।
वो पागल.....

लैला और मजनू हीर और रांझा
'संतोश सनारी' प्यार होता नहीं सांझा
पलक बंद होने तक रहता उसी का इंतजार रे।

प्रचंड

श्री अनूप कुमार
वन अनुसन्धान संस्थान, देहरादून

हाहाकार मचाये धरती पर
शिव जी का महमण्ड रे... प्रचंड रे
खण्ड खण्ड उतराखंड रे।

बिन सोचे जो देते वर को,
होटल बनाया बाबा के घर को
सुख स्वार्थ में होके अन्धा
पूजा बना है गोरख धंन्धा
करके नाश विनाश लीला
प्रलय किया ब्रहमांड रे
प्रचंड रे.....।

अभियन्ता की पोथी ज्ञानी
मिट्टी हो गई सारी मनमानी
पहले चेताया दे के तूफानी
करता रहा मानव हरि कृति से नदानी
छूटे प्राण तो टूटा मानव का घमंड रे
प्रचंड रे.....।

हे त्रिपुरारी भोले भण्डारी
बालक नादान है ''अनूप पुजारी''
भव सागर से हमकों तारो
अपना रचना बाग न उजाड़ो
करके रक्षा हमको रखो
धरती को अखंड रे
प्रचंड रे.....।

बिटिया

श्री शशांक शुक्ला
वन अनुसन्धान संस्थान, देहरादून

घर आने पर दौड़ कर जो पास आये, उसे कहते हैं बिटिया

थक जाने पर प्यार से जो माथा सहलायें, उसे कहते हैं बिटिया

''कल दिला देंगें'' कहने पर जो मान जाये, उसे कहते हैं बिटिया

हर रोज समय पर दवा की जो याद दिलाये, उसे कहते हैं बिटिया

घर को मन से फूल सा जो सजायें, उसे कहते हैं बिटिया

सहते हुये भी अपने दु:ख जो छुपा जायें, उसे कहते हैं बिटिया

दूर जाने पर जो बहुत रूलायें, उसे कहते हैं बिटिया

पति की होकर भी पिता को जो ना भूल पाये, उसे कहते हैं बिटिया

मीलों दूर होकर भी पास होने का जो एहसास दिलाये, उसे कहते हैं बिटिया

''अनमोल हीरा'' जो कहलाये, उसे कहते हैं बिटिया

भगवान पिता को एक बेटी अवश्य दें।

खारी बंजर भूमि की पुकार

डॉ. रंजना आर्या
शुष्क वन अनुसंधान संस्थान, जोधपुर

खारी भूमि ये करे पुकार,
मैं हूँ पड़ी बंजर और बेकार।
हमको भी हरा भरा बनाओ,
कुछ घास झाड़ी या फिर पेड़ उगाओ।
वैज्ञानिकों ने इस पर मनन किया,
कुछ देशी विदेशी पौधों का चयन किया।
पाली, नागौर और बाड़मेर का भ्रमण किया,
पर जोधपुर में गंगाणी क्षेत्र का चयन किया।

मिट्टी को जाँचा और क्लासिफाई किया,
फिर हरा भरा बनाने का प्रयास किया।
खारी भूमि में गहरे गड्ढे खुदवाये,
उनको जिप्सम व गोबर खाद से भरवाये,
एट्रीप्लेक्स व खारी जाल के पौधे लगवाये,
दो वर्षो तक गर्मी में मीठा जल पिलवाये।
दोनों खारी भूमि पर अच्छे पनपे,
उनमें पत्ती फूल और फल भी बने।

जिप्सम ने सर्वाइवल बढ़वाया,
नाइट्रोजन से उपज वृद्धि दर्शाया,
दोनों का संयोजन सबसे अच्छा था,
पर नमी का भी अपना ही स्पष्ट रोल था।
अर्धचन्द्राकार खाइयों ने निभाया दोहरा काम,
वर्षा में जल संचयन व गर्मी में लवण का निष्क्रमण।

समय के साथ पौधों की बढ़वार हुई,
खारी बंजर भूमि भी गुलज़ार हुई।
पहले छोटे वार्षिक खारे पौधे आये,
धीरे-धीरे बहुत सी खारी घासों को भी लाए।
जाल के फल चिड़ियों ने खाए,
जगह-जगह उनके बीज गिराए।

अब जाल स्वयं भी उगता है,
और बंजर भूमि में हरीतिमा लाता है।
और भी प्रजातियाँ लगाई हैं,
बहुत अच्छे परिणाम भी पाये हैं।
पर आज यहीं पर रूकते है,
अगली बार कुछ अन्य पौधों को चुनते हैं,
उनके परिणाम अगली बार दर्शाऐंगे,
और बंजर भूमि को हरा -भरा बनाऐंगे।

फागुन मास

सुश्री देवाक्षी कश्यप
वर्षा वन अनुसन्धान संस्थान, जोरहाट

फागुन मास की यह हवा मुझे कुछ कहती
धीरे से इसकी कहानी मुझे सुनाती,
जोर जोर से डाल जब हिलते,
सूखे पत्ते और फूल आके जमीन में मिलते
सबकी चाहत है बस एक बारिश
जो नहीं आती यह है इन्द्रदेव की साजिश।
बीमार होते है इस मौसम में जो
कहते है यह हवा सबके,
पर इस हवा में भी है एक सुंदरता
जो आम लोगों को दिखाई नहीं देती ?
यही आम है खास
तो देखिए इस मौसम का राज़।
सूखे डाल, लाल चांद से मन में आनंद
साथ में आता है होली का रंग।
धन्य होंगे आप करके फागुन के आनंद की प्राप्ति
इसी आशा के साथ करती हूँ मैं अपनी कविता की समाप्ति।

महिलाएं : समाज की वास्तविक वास्तुकार

सुश्री अंशु गर्ग
भारतीय वानिकी अनुसन्धान एवं शिक्षा परिषद्, देहरादून

मानव समाज की तुलना एक अच्छे भवन से की जा सकती है। जिस प्रकार किसी अच्छे भवन निर्माण के लिए एक कुशल वास्तुकार की आवश्यकता होती है, ठीक उसी प्रकार एक अच्छे समाज के निर्माण में भी एक कुशल वास्तुकार की आवश्यकता होती है, जो कि महिलाएं होती हैं।

परिवार समाज की इकाई है और महिला के बिना किसी परिवार की कल्पना असंभव है। परिवार में महिला की अनेक भूमिकाएं होती हैं। वो माता होती है जिसे ईश्वर का रूप समझा जाता है, वह बेटी होती है जिसकी पूजा की जाती है, वह बहू होती है जिसको लक्ष्मी का रूप माना जाता है। मनु द्वारा कहा गया है कि – 'यत्र नार्यस्तु पूज्यंते, रमंते तत्र देवता:' अर्थात जहां नारियों का आदर होता है वहां देवता का वास होता है। लेकिन आज के समय में यह सब किताबी बाते लगती हैं क्योंकि वास्तविकता प्राय: कुछ और ही है। आज जो माता, बेटी और बहुओं की दशा है वह किसी से छुपी नहीं। बहू-बेटों द्वारा माता को तिरस्कृत किया जाता है, बेटी को बोझ समझा जाता है, बहू को देहज की आग में जलाया जाता है। समाज की अधिकतर कुरीतियों का शिकार केवल महिलाएं ही होतीं हैं।

परंतु कहते हैं कि ईश्वर ने केवल महिलाओं को ही सहने की शक्ति प्रदान की है। इतना तिरस्कार, इतने अपमान के होते हुए भी नारियों ने कभी धैर्य नहीं छोड़ा और अपने कर्तव्यों का पूर्ण निर्वहन किया। कदम-कदम पर इतिहास में भी और आज भी अपने आप को एक कुशल वास्तुकार साबित किया है। एक ओर जहां गृहणी के रूप में समाज को आधार प्रदान किया है वहीं घर की चार दीवारी से बाहर आकर भी समाज के विभिन्न क्षेत्रों में भी अपना योगदान दिया है।

स्वतंत्रता सेनानियों के रूप में – भारतीय स्वतंत्रता संग्राम की गाथा ऐसे वीर और वीरांगनाओं से भरा है जिनके कारण आज हम आजादी से जी रहे हैं। स्वतंत्रता संग्राम के समय न कवेल पुरूषों ने वीरता का प्रदर्शन किया अपितु महिलाओं ने भी स्वतंत्रता संग्राम की लड़ाइयों में बढ़चढ़ कर भाग लिया और वीरांगनाएं कहलाई। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम की लड़ाई में महिलाओं की भागीदारी का उल्लेख बिना भीमा बाई होलकर की चर्चा के पूर्ण नहीं हो सकता जिन्होने माहिदपुर की लडाई में 2500 अश्वारोही सेनिकों सहित एक ब्रिगेड का नेतृत्व किया था। वे ब्रिटिश कर्नल के खिलाफ बहादुरी से लड़ी और उसे युद्ध में हरा दिया। रानी लक्ष्मीबाई झांसी पर शासन किया और झांसी की रानी के नाम से प्रसिद्ध हुई। उन्होने अपने पराक्रम और बुद्धिमता के दम पर अंग्रेजों के विरूद्ध बड़ी-बड़ी लड़ाइयां लड़ी और अंत में लड़ते हुए ही वीरगति को प्राप्त हुई। बेगम हजरत महल, एक महान भारतीय स्वतंत्रता सेनानी थी जिनका भारत के पहले स्वतंत्रता संग्राम की लड़ाई में महत्वपूर्ण स्थान था। इन्होंने ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कम्पनी के विरूद्ध विद्रोह में अहम भूमिका निभाई। इसी प्रकार अरूणा असफ अली का भारत छोड़ो आंदोलन में उत्कृष्ट योगदान था। ऐनी बेसेंट, एक समाज सेविका। ये इंडियन नेशनल कांग्रेस की प्रथम महिला अध्यक्ष बनीं और उन्होने भारत में महिलाओं के उद्धार के लिए कई महत्वपूर्ण कदम उठाएं। उन्होने कई स्कूलों एवं कॉलेजों की स्थापना की जिसमें सेंट्रल हिन्दू कॉलेज जो वाराणसी में है, प्रमुख है। मैडम भीकाजी कामा अपनी अंतिम सांस तक देश की स्वतंत्रता के लिए लड़ती रहीं और साथ-साथ दूसरे क्रांतिकारियों की धन एवं अन्य सामग्रियों से सहायता प्रदान करती रहीं। इन्होंने प्रथमबार एक अंतर्राष्ट्रीय कांफ्रेंस में जो कि जर्मनी में आयोजित की जा रही थी, में देश का झंडा फहराया था।

बेगम हजरत महल

राजनीति एवं प्रशासनिक क्षेत्र में – राजनीति एक ऐसा क्षेत्र है जहां बहुत बुद्धिशाली, समझदार एवं शक्तिशाली व्यक्ति की आवश्यकता होती है। इस क्षेत्र में भी नारियों ने

राजकुमारी अमृत कौर

समय-समय पर अपनी काबलियत साबित की। रजिया सुलतान – पहली और आखिरी मुस्लिम महिला, जिन्होने दिल्ली सल्तनत पर राज किया। उन्हें सेना का नेतृत्व करना और प्रशासनिक कार्यो का अच्छा अनुभव था। उन्होने अपने शासन काल में परदा प्रथा का विरोध किया और कई लड़ाइयां लड़ी। सरोजनी नायडू इंडियन नेशनल कांग्रेस की प्रथम भारतीय महिला अध्यक्ष बनीं एवं भारत के राज्य की प्रथम महिला राज्यपाल बनीं। राजकुमारी अमृत कौर प्रथम भारतीय महिला केबिनेट मंत्री बनीं। विजयलक्ष्मी पंडित – संयुक्त राष्ट्र महासभा की प्रथम महिला अध्यक्ष बनीं। इंदिरा गांधी, भारत की प्रथम महिला प्रधान मंत्री व प्रथम महिला है जिन्हे भारत रत्न से नवाजा गया। अन्ना जॉर्ज मल्होत्रा – भारत की प्रथम महिला आई ए एस। प्रतिभा देवी सिंह पाटिल – भारत की प्रथम महिला राष्ट्रपति बनीं। मीरा कुमार – भारत की प्रथम लोक सभा की अध्यक्ष, लीला सेठ – प्रथम महिला मुख्य न्यायाधीश, सुचेता कृपलानी – भारत के राज्य की प्रथम महिला मुख्य मंत्री, सिरीमावो बंदरानाइके – श्रीलंका की प्रथम महिला प्रधान मंत्री थीं। गोल्डा मेयर – इजरायल की प्रथम महिला प्रधानमंत्री, मारिया एस्टिला पेरॉन– अर्जेंटीना की प्रथम महिला राष्ट्रपति बनीं। एंजेला मर्केल – जर्मनी की चांसलर बनीं, एलेन जॉनसन सरलिफ– लाइबेरिया की राष्ट्रपति, बेनजीर भुट्टो – पाकिस्तान की प्रधानमंत्री बनीं। जुलिया गिलार्ड – आस्ट्रेलिया की प्रथम महिला प्रधान मंत्री बनीं, मार्गरेट थैचर – इंग्लैण्ड की प्रथम महिला प्रधानमंत्री सोनिया गांधी – इंडियन नेशनल कांग्रेस की अध्यक्ष और एक कुशल राजनीतिज्ञ। इनके अतिरिक्त ममता बेनर्जी, जयललिता, मायावती, शीला दीक्षित, सुषमा स्वराज इत्यादि अनगिनत नाम हैं जिन्होने राजनीति के क्षेत्र में अपना-अपना योगदान दिया, जिन्होने अपने कुशलता, बुद्धिमानी से राजनीति जैसे कठिन क्षेत्र में भी अपने आप को साबित किया।

खेलकूद – पारंपरिक रूप से खेल जगत में पुरूषों ने लोकप्रियता प्राप्त की है। किंतु सभी को लगता था कि खेलकूद के लिए शारीरिक रूप से कठोर व्यक्ति होना चाहिए जो सिर्फ पुरूष ही हो सकता है परंतु समय बदला और

पी.टी. उषा

महिलाओं ने भी खेलकूद की दुनिया में अपने कदम बढ़ाए और अपना एक अलग स्थान बनाया। खेल जगत के प्रसिद्ध प्रतियोगिताओं में महिलाओं ने स्वर्ण, रजत एवं कांस्य पदक सहित अन्य पुरस्कार हासिल किए। नादिया कोमैंसी, विश्व की प्रथम महिला जिम्नस्ट जिन्होने ओलंपिक खेलों में परफेक्ट 10 का स्कोर हासिल किया। आरती साहा – इंग्लिश चैनल तैर कर पार करने वाली भारत की प्रथम महिला और ये पहली महिला खिलाड़ी हैं जिसे पदम श्री से अलंकृत किया गया। पी.टी. उषा – ये भारत की ट्रेक एण्ड फील्ड एथलीट रह चुकी हैं। इन्होने वर्ष 1986 में आयोजित सियोल एशियन गेम्स में 4 स्वर्ण पदक एवं 01 रजत पदक जीता। इन्हें अर्जुन अवार्ड, पदम श्री, ग्रेटेस्ट वूमेन एथलीट, वर्ल्ड ट्रॉफी फार बेस्ट एथलीट के साथ अन्य पुरस्कारों से पुरस्कृत किया गया। कर्णम मल्लेश्वरी – वे ओलंपिक खेलों में कांस्य पदक जीतने वाली भारत की प्रथम महिला वेटलिफ्टर खिलाड़ी हैं। इन्हें अर्जुन अवार्ड, राजीव गांधी खेल रत्न, पदम श्री सहित अन्य पुरस्कारों से पुरस्कृत किया गया। भारतीय एथलीटिक्स में एक और प्रसिद्ध नाम है अंजू बॉबी जॉर्ज, एक भारतीय एथलीट जिन्होने 2003 में पेरिस में आयोजित विश्व एथलेटिक्स चैम्पियनशिप में लॉन्ग जम्प में कांस्य पदक जीत कर भारत का नाम रौशन किया। 2005 में आई ए ए एफ विश्व एथलेटिक्स फाइनल में स्वर्ण पदक जीता ये उनके जीवन का सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन था। अल्का तोमर, ये एक भारतीय रेस्लर है। इन्होने 2006 में आयोजित दोहा ऐशियन गेम्स में रेस्लिंग में कांस्य पदक जीता। अंजुम चोपड़ा – ये भारतीय राष्ट्रीय महिला क्रिकेट टीम की सदस्य हैं तथा भारतीय महिला क्रिकेट टीम की पूर्व कप्तान भी रहीं। बैडमिंटन की दुनिया का चमका सितारा, भारतीय बैडमिंटन खिलाड़ी साइना नेहवाल। 2010 में एशियन चैम्पियनशिप्स में महिला एकल में कांस्य पदक जीता। इसके साथ-साथ 2010 में आयोजित कॉमन वेल्थ गेम्स में महिला एकल में स्वर्ण पदक भी अपने नाम किया। इन्होने 2012 लंदन में आयोजित ओलंपिक गेम्स में महिला एकल में कांस्य पदक जीता। इन्हें अर्जुन अवार्ड, राजीव गांधी खेल रत्न, पदम श्री सहित अन्य सम्मानों से सम्मानित किया गया। सानिया मिर्जा – भारत की

एक टेनिस खिलाड़ी है। वें 2003 से 2013 तक लगातार महिला टेनिस संघ के (डब्लयू टी ए) एकल और डबल में शीर्ष भारतीय टेनिस खिलाड़ी के रूप में अपना स्थान बनाए रखने में सफल रहीं। इन्होंने अर्जुन अवार्ड, डब्ल्यू टी ए न्यू कमर ऑफ द इयर, पदम श्री सहित अन्य पुरस्कार प्राप्त किए। मैरी कॉम – भारतीय महिला मुक्केबाज (बॉक्सर)। ये पांच बार विश्व मुक्केबाजी प्रतियोगिता की विजेता रह चुकी हैं। 2010 में आयोजित ऐशियाई खेलों में कांस्य तथा 2014 के ऐशियाई खेलों में उन्होने स्वर्ण पदक हासिल किया। 2012 में लंदन ओलंपिक में उन्होने कांस्य पदक जीता। इन्हें अर्जुन अवार्ड, राजीव गांधी खेल रत्न अवार्ड, पदम श्री, पदम भूषण सहित अनेक पुरस्करों से पुरस्कृत किया गया। सेरेना विलियम्स – अमेरिका की टेनिस खिलाड़ी। उन्होने 30 से भी ज्यादा ग्रेंड स्लैम टाइटल जीते हैं एवं ओलंपिक गेम्स में अनेक स्वर्ण पदक भी जीते हैं। वीनस विलियम्स – ये अमेरिका की टेनिस खिलाड़ी हैं। उन्होने 5 बार विंबलडन प्रतियोगिता जीतने का खिताब अपने नाम किया है।

कला, साहित्य, लेखन के क्षेत्र में – कला एवं साहित्य के क्षेत्र में भी महिलाओं का अतुल्य योगदान है। एम.एस. सुब्बुलक्ष्मी, ये शास्त्रीय संगीत की दुनिया का प्रसिद्ध नाम हैं। ये भारत रत्न से सम्मानित होने वाली पहली संगीतज्ञ थीं। ये पहली भारतीय महिला थीं जिन्होने संयुक्त राष्ट्र संघ की सभा में संगीत कार्यक्रम प्रस्तुत किया। लता मंगेशकर, भारत की सबसे प्रसिद्ध प्लेबैक सिंगर हैं। भारतीय सिनेमा में इनकी अपनी अतुल्य पहचान है। इन्हें भारत रत्न, पदम विभूषण, पदम भूषण, दादा साहिब फाल्के अवार्ड, राष्ट्रीय फिल्म अवार्ड सहित कई अन्य सम्मानित पुरस्कारों से नवाजा गया।

गंगूबाई हंगल

लेखन के क्षेत्र में जितना योगदान पुरूष वर्ग ने किया है उतना ही महिलाओं ने भी किया। ऐसी बहुत सी महिलाएं हैं जिन्होने अपनी लेखन शैली से सबको चकित किया है। अपनी कहानियों, निबंधों, लेखों, कविताओं इत्यादि से समाज को एक नई दिशा दिखाई है जैसे कृष्णा सोबती – एक प्रसिद्ध लेखिका एवं रचनाकार हैं इनको साहित्य अकादमी पुरस्कार, साहित्य शिरोमणि सम्मान, शलाका सम्मान, मैथिलीशरण गुप्त पुरस्कार इत्यादि पुरस्कारों से सम्मानित किया गया। महादेवी वर्मा – कवि निराला द्वारा 'हिन्दी के विशाल मंदिर की सरस्वती' की उपाधि प्राप्त करने वाली हिन्दी की सुप्रसिद्ध कवयित्री एवं लेखिका। इनको पदम विभूषण, ज्ञानपीठ पुरस्कार सहित अन्य पुरस्कारों से सम्मानित किया गया। सुभद्रा कुमारी चौहान – हिन्दी की प्रसिद्ध लेखिका एवं कवयित्री थीं। आशापूर्णा देवी – पदम श्री, ज्ञानपीठ, साहित्य अकादमी सहित अन्य पुरस्कारों से सम्मानित बांगला की प्रसिद्ध लेखिका एवं कवयित्री। अमृता प्रीतम – पंजाबी की प्रसिद्ध लेखिका एवं कवयित्री जिन्हें पदम विभूषण, पदम श्री, ज्ञानपीठ, साहित्य अकादमी सहित अन्य पुरस्कारों से सम्मानित किया गया। इस्मत चुगताई – उर्दू की ख्यातिनाम लेखिका। गालिब एवं सोवियत लैंड नेहरू इत्यादि अनेक पुरस्कारों से सम्मानित। ज्ञानपीठ, साहित्य अकादमी सहित अन्य पुरस्कारों से सम्मानित असमिया की प्रसिद्ध लेखिका, कवयित्री, पत्रकार, इंदिरा गोस्वामी। महाश्वेता देवी – बांगला की प्रसिद्ध लेखिका, पदम विभूषण, पदम श्री, ज्ञानपीठ, साहित्य अकादमी सहित अन्य पुरस्कारों से सम्मानित। शशि देशपांडे – कन्नड़ की प्रसिद्ध लेखिका, पत्रकार जिन्हें पदम श्री, साहित्य अकादमी सहित अन्य पुरस्कारों से सम्मानित किया गया। नालापत बालामनी अम्मा – पदम विभूषण, साहित्य अकादमी सहित अन्य पुरस्कारों से सम्मानित, मलयालम की प्रसिद्ध लेखिका। लक्ष्मी त्रिपुरसुंदरी – तमिल की लेखिका जिन्हें साहित्य अकादमी सहित अन्य पुरस्कारों से सम्मानित किया गया। अनीता देसाई – ये एक विख्यात लेखिका हैं। इन्हें पदम श्री, पदम भूषण अवार्ड सहित अन्य अनेक पुरस्कारों से सम्मानित किया गया है। अरूंधति रॉय – अंग्रेजी की सुप्रसिद्ध लेखिका है। 1998 में इन्हें अपने प्रसिद्ध नोवल 'द गॉड ऑफ स्मॉल थिंग्स' के लिए बुकर पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

अंतरिक्ष एवं रक्षा क्षेत्र में – ये एक ऐसा क्षेत्र है जिसको 'ब्वायज फील्ड' के नाम से जाना जाता रहा है। किसी ने सोचा भी नहीं होगा कि कभी कोई महिला अंतरिक्ष में कदम रखेगी।

वेलेंटीना टेरेशकोवा

बहुत सी कठिनाइयों से लड़कर महिलाओं ने भी इस क्षेत्र में अपनी प्रतिभा को दिखाया। वेलेंटीना टेरेशकोवा, पहली महिला जो अंतरिक्ष यात्रा पर गई। अमेरिका की प्रथम महिला, सेली राइड, जो अंतरिक्ष पर गई। ऐलीन कोलाइंस, प्रथम महिला जो शटल पाइलेट एवं शटल कमांडर बनीं। कल्पना चावला – प्रथम भारतीय मूल की महिला अंतरिक्ष यात्री और अंतरिक्ष शटल की विशेषज्ञ थीं। अमेरिकी अंतरिक्ष एजेंसी नासा के माध्यम से अंतरिक्ष पर जाने वाली भारतीय मूल की दूसरी महिला सुनीता विलियम्स – उन्होने एक महिला अंतरिक्ष यात्री के रूप में 195 दिनों तक अंतरिक्ष में रहने का रिकॉर्ड बनाया है। अंतरिक्ष में कदम रखने के साथ-साथ महिलाओं ने रक्षा के क्षेत्र में भी खुद को साबित किया। गृह मंत्रालय के एक आंकड़ों के मुताबिक भारत में लगभग 5928 महिलाएं सीआरपीएफ में, 5896 सीआईएसएफ में, 2640 बीएसएफ में, 1166 एसएसबी में 1091 आईटीबीपी में हैं। भारत में ही नहीं विश्व के अन्य देशों में भी महिलाएं रक्षा बल के अलग-अलग फील्ड में अपना योगदान दे रहीं हैं। लक्ष्मी सहगल – वे आजाद हिंद फौज की अधिकारी तथा आजाद हिंद सरकार में महिला मामलों की मंत्री थीं। आजाद हिंद फौज की 'रानी लक्ष्मी रेजिमेंट' की कमाण्डर भी थीं। हरीता कौर देयोल – भारतीय वायु सेना की प्रथम महिला पाइलेट थीं। किरण बेदी- भारत की प्रथम आईपीएस अधिकारी बनीं।

महिला उद्यमी, सामाजिक कार्यकर्ता एवं वैज्ञानिक – वहुधा समाज में लोगों की धारणा रही है कि धन कमाना केवल पुरूषों का काम है। नारी केवल घर की चार दीवारियों के लिए बनीं है। उनका व्यवसायिक क्षेत्र में कोई काम नही। लेकिन आज के युग में विश्वभर में महिलाओं ने व्यवसायिक क्षेत्र में काफी उन्नति की है। इंदिरा नुई – पैप्सी को. की मुख्य कार्यकारी अधिकारी एवं अध्यक्ष, किरण मजूमदार शॉ- बायोकोन लि की अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक, इंदू जैन – टाइम्स समूह की अध्यक्ष, प्रिया पॉल – एपीजे पार्क होटल्स की अध्यक्ष, सुलज्जा फिरोदिया मोटवानी – काइनेटिक मोटर्स एवं काइनेटिक फाइनेंस की प्रबंध निदेशक, सिमोन टाटा – ट्रेंट लि. (टाटा ग्रुप कम्पनी) की अध्यक्ष, एकता कपूर – बालाजी टेली फिल्मस की क्रियेटिव हेड, चंदा कोचर – आईसीआईसीआई बैंक की अध्यक्ष। एक कुशल उद्यमी होने के साथ-साथ महिलाओं ने सामाजिक कार्यकर्ता के रूप में भी समाज में उत्पन्न कुरीतियों/संकटों के खिलाफ कई कदम उठाए। गौरा देवी – वृक्षों के संरक्षण हेतु चिपको आंदोलन का सूत्रपात। मेधा पाटकर – भारतीय सामाजिक कार्यकर्ता एवं समाज सुधारक। नर्मदा बचाओ आंदोलन सहित अनेक पर्यावरण और सामाजिक मुद्दों पर सक्रिय कार्य किया। वंदना शिवा – पर्यावरणविद एवं वैश्वीकरण विरोधी लेखिका। विज्ञान के क्षेत्र में भी महिलाओं के नाम कई उपलब्धियां हैं। राजेश्वरी चटर्जी – कर्नाटक से पहली महिला अभियंता। टेसी थॉमस – अग्नि – 4 मिसाइल, डीआरडीओ की परियोजना निदेशक। भारत में मिसाइल परियोजना की अध्यक्षता करने वाली प्रथम महिला। यें 'मिसाइल महिला' के नाम से विख्यात हुई। अदिति पंत – अंटार्टिका में जाने वाली प्रथम भारतीय महिला समुद्र विज्ञानी।

इंदिरा नुई

गौरा देवी

महिलाओं को उनके द्वारा किए गए उत्कृष्ट कार्यो के लिए कई विश्व विख्यात प्रतिष्ठित पुरस्कारों से सम्मानित किया गया है जिसमें 'नोबेल पुरस्कार' भी सम्मिलित है। अब तक 47 से अधिक महिलाओं को विभिन्न क्षेत्रों में अनुपम कार्यो के लिए इस पुरस्कार से पुरस्कृत किया जा चुका है। मैरी क्यूरी – जिन्होने रेडियम की खोज की, वह प्रथम महिला थीं जिनको नोबल प्राइज से नवाजा गया। वंगारी मथाई – सतत विकास, लोकतंत्र और शांति के लिए उनके योगदान के लिए उनको शांति पुरस्कार प्रदान किया गया, आन सू की – लोकतंत्र एवं मानवाधिकारों के लिए उनके संघर्ष के लिए शांति पुरस्कार दिया गया, मदर टेरेसा – उनको गरीब, अनाथ और असहाय लोगों की मदद करने और चेरिटी के मिशनरीज के प्रसार करने के लिए शांति पुरस्कार प्रदान किया गया, मलाला युसूफजई- इनको युवाओं के दमन के खिलाफ और

आन सू की

सभी बच्चों के शिक्षा के अधिकार के लिए उनके संघर्ष के लिए शांति पुरस्कार प्रदान किया गया।

इन सब से यही स्पष्ट होता है कि महिलाओं ने हर क्षेत्र में अपनी योग्यता साबित की है। ये उदाहरण तो केवल मुठ्ठी भर हैं। ये वो महिलाएं हैं जो अपने कार्यों से प्रसिद्ध हुई। परंतु एक आम महिला भी जिसका कहीं कोई नाम नहीं छपता, समाज के निर्माण में अपना अप्रतिम योगदान देती है- अध्यापिका, डॉक्टर, इंजीनियर, वैज्ञानिक, वकील, जज, प्रशासनिक अधिकारी के रूप में साथ ही घर में एक कुशल गृहणी के रूप में।

समाज के निर्माण में महिलाओं के योगदान और समाज में उनकी स्थिति को देखते हुए सरकार द्वारा महिलाओं के लिए कई कानून बनाए गए हैं। हम सरकारों द्वारा बनाई गई योजनाओं का सम्मान करते हैं। लेकिन केवल सरकार द्वारा उठाए गए कदम काफी नहीं हैं। आज भी अगर महिला के अधिकारों की बात उठती हैं तो पुरूषों के एक विशाल वर्ग को लगता है कि यह उनके वर्चस्व को चुनौती दी जा रही है। वे न तो इस मन:स्थिति में हैं कि समझ सकें कि महिलाओं को भी स्वतंत्रता की आवश्यकता है और न ही इस बात को स्वीकार नहीं कर पा रहे हैं कि महिलाएं अपने अधिकारों के लिए आवाज उठा रहीं हैं। यही कारण है कि ऐसे लोग महिलाओं के प्रति आक्रामक हो उठे हैं और फलस्वरूप आज समाज में महिलाओं के साथ कई प्रकार के अपराध हो रहे हैं। इसलिए यह स्पष्ट है कि समाज में महिला को उसका यथोचित स्थान दिलाने के लिए केवल सरकार ही नहीं अपितु समाज के हर वर्ग को विशेषत: पुरूषों को अपनी सोच बदलनी होगी और इसके लिए हमारे पूरे समाज में महिलाओं के प्रति एक जागरूकता लाने की आवश्यकता है, महिलाओं के महत्व को समझने की आवश्यकता है। हमे समझना होगा कि अगर महिलाएं इतने बंधनों के बाद भी इतनी महत्वपूर्ण उपलब्धियां प्राप्त कर सकती हैं तो यदि महिलाओं को पूर्ण स्वतंत्रता प्रदान की जाए तो सोचिए समाज को ऊंचा उठाने में महिलाएं कितनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकेगीं।

गले मिलने को आपस में दुआएँ रोज आती हैं..

गले मिलने को आपस में दुआएँ रोज आती हैं,
अभी मस्जिद के दरवाजे पे माएँ रोज आती हैं।

अभी रोशन हैं चाहत के दीये हम सबकी आँखों में,
बुझाने के लिये पागल हवाएँ रोज आती हैं।

कोई मरता नहीं है, हाँ मगर सब टूट जाते हैं,
हमारे शहर में ऐसी वबाएँ रोज आती हैं।

ये सच है नफरतों की आग ने सब कुछ जला डाला,
मगर उम्मीद की ठंडी हवाएँ रोज आती हैं।

– मुनव्वर राना

मेरी मसूरी यात्रा

सुश्री दिव्यानि राना सुपुत्री श्रीमती सीमा राणा
भारतीय वानिकी अनुसन्धान एवं शिक्षा परिषद्, देहरादून

कुछ समय पहले की घटना है। हमारा सपरिवार पिकनिक पर मसूरी जाने का प्रोग्राम बना। पिकनिक जाने के नाम पर हम दोनों बहनें बहुत खुश थी। हम दोनों का मन फास्ट फूड खाने का था। हम घर के भोजन के लिए बिलकुल भी इच्छुक नहीं थे।

लेकिन यह क्या, पिकनिक होने लगी बेकार
जब मां ने घर का खाना, ले जाने का किया विचार
और फास्ट फूड को घोषित किया बेकार
साथ ही पापा को भी कर लिया तैयार।

मां प्रात: काल से उठकर ही हमारा मनपसंद भोजन बनाने में लग गई। हम भी मन-मानकर मां के पीछे लग गए। हम 10 बजे के लगभग घर से निकले व 11:30 तक मसूरी पहुंच गये बिना किसी परेशानी के, वहां लगभग 2 घंटे घूमने व झूला-झूलने में लग गए।

फिर आई खाने की बारी,
ये क्या ये तो हो गई मन की हमारी
क्योंकि
जल्दी में खाने वाली बास्केट हम घर में ही भूल आये थे
और फॉस्ट फूड की दूकानें जगह-जगह खुल आये थे।
फिर क्या था हमारी फास्ट फूड की हो गई तैयारी,
मां-पापा भी खाने को तैयार छोले-भटूरे भारी।

हमने खूब सारा फास्ट फूड खाया, कोल्ड ड्रिंक पिया। सब कुछ अपने मन से किया। फिर कुछ समय छोटे-मोटे खेल में बिताया। अतत: घर वापसी के लिए तैयार हो गये।

ज्युंही मसूरी के मोड़ हुए शुरू,
हम दोनों कै करने में एक-दूसरे के हुए गुरू।

मम्मी - पापा ने प्यार से व थोड़ी डांट से फास्ट-फूड के बारे में समझाया व हम दोनों ने फास्ट फूड पर नियंत्रण रखने का वादा किया।

इतना करते - करते शिव मंदिर आ गया,
जहां खाली पेट, को भोले का प्रसाद मिल गया।
थोड़ा और नीचे उतरकर सांई बाबा के किए दर्शन
वहां जाकर मन हो गया अति प्रसन्न।
आखिरकार हम घर पहुंच गए,
थोड़ा मस्ती, थोड़ा खेलते हुए।
इन्हीं सब चीजों में दिन हुआ तमाम
घर जाकर मिला अच्छा आराम।

ज्ञान की गंगा

श्री बिरेन्द्र प्रसाद खंकरियाल
भारतीय वानिकी अनुसन्धान एवं शिक्षा परिषद्, देहरादून

जीवन पथ जटिल है ये, कालचक्र कठिन है ये,
पग-पग पे भेद भाव है, रक्त रंजित पांव हैं
जन्म से किसी के सर वंश की छांव है,
किसी के पास छल कपट, किसी को रुप का वरदान है
ये सोच के मत बैठ जा कि ये विधि का विधान है,
बज रहा मृदंग है, ये कहता अंग-अंग है,
कि प्राण अभी शेष है मान अभी शेष है,
उठा ले ज्ञान का धनुष
एक कण भी और कुछ मांग मत भगवान से,
ज्ञान की कमान पे लगा दे तू ये गुलाल से,
काल के कपाल पे लिख दे तू ये गुलाल से,
"कि, रोक सकता है कोई तो रोक के दिखा मुझे,
हक छीनता आया है जो, अब छीन के बता मुझे",
ज्ञान के मंच पर सब एक समान है,
विधि का विधान पलट दे, वो ब्रहमास्त्र ज्ञान हैं
तो आज यह ठान ले, ये बात गांठ बांध ले,
कि कर्म के कुरूक्षेत्र में,
ना रूप काम आता हैं, ना झूठ काम आता हैं
ना जाति काम आती है, ना बाप का नाम काम आता है,
सिर्फ ज्ञान ही आपको आपका हक दिलाता हैं।

कलयुग का प्रमाण

श्री शमसुद्दीन
भारतीय वानिकी अनुसन्धान एवं शिक्षा परिषद्, देहरादून

कल युग का प्रमाण प्रत्यक्ष आपको दिख रहा है
इन्सान इन्सान की कीमत नहीं पहचान रहा है
आजकल हर जगह जमीनों का खेल रहा है
हर जगह जाने जा रही हैं, कसूर है जमीन का
प्यारा हो गया पैसा सबको खून किया अपनों का
जिसने समय से पहले पैसे की कीमत नहीं जानी
बाद में बोझ पड़ा सिर पर, कर डाली अपनों के साथ बेईमानी।

सुख खोया चैन खोया, खोया मान सम्मान
बाहर वालों ने नहीं पूछा, अपने हुए विरान
घर और जमीन सोच समझकर लेना
लालच में आकर अपने आपको बर्बाद मत कर देना
जमीन के बारे में ठंडे दिमाग से सोचे
बर्बाद होने के बाद में कोई तुम्हे ना पूछे
बुढ़ापे का सहारा छिनवा मत देना
अपनी प्यारी आंखों में धूल मत झोंक देना।

विश्वास करो तुम

श्रीमती सुधा पाण्डेय ''गुड्डी''
सामाजिक वानिकी एवं पारि-पुनर्स्थापन केन्द्र, इलाहाबाद

भले न कोई आस करो तुम,
अपने पर विश्वास करो तुम।
सारा उप वन महक उठेगा,
पतझड़ को मधुमास करो तुम।

हर सांस में ढलता प्रतिक्षण,
पल-पल होता जब परिवर्तन।
परिवर्तन बनता नवजीवन फिर,
जीवन में उल्लाह भरो तुम।

ऊंचे-नीचे पथ चल आये,
जिसने पग-पग फूल बिछाये।
क्यों न हृदय उसके गुण गाये,
मत उसका उपहास करो तुम।

अपने कर्तव्यों को पा ले,
जो औरों का भार उठा ले।
बोझ नहीं ईश्वर पर डाले,
वही परीक्षा पास करो तुम।

मुस्कुराते रहिये

श्रीमती सुधा पाण्डेय ''गुड्डी''
सामाजिक वानिकी एवं पारि-पुनर्स्थापन केन्द्र, इलाहाबाद

होकर मायूस न यूं अश्क बहाते रहिये,
उम्मीद का नाम है जिन्दगी जरा मुस्कुराते रहिए।

लोग तो पत्थर बनकर यूंही जख्म देते रहेंगे,
उन जख्मों पर बस प्यार की मरहम लगाते रहिये।

जो वक्त किसी के इन्तजार में रूकते ही नहीं,
उस वक्त के साथ हमेशा कदम बढ़ाते रहिए।

आसान नहीं यूं हर मुश्किल को झेल पाना,
फिर भी गर्दिश के आगे न सिर झुकाते रहिए।

जो तूफान में भी कश्ती साहिल तक ले आता है,
उस माझी को हिम्मत के गीत सुनाते रहिए।

हिन्दी का राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य

डॉ. बसन्ती मठपाल*
भारतीय वानिकी अनुसन्धान एवं शिक्षा परिषद्, देहरादून

भारत भवन में आर्यजन, जिसकी उतारें आरती,
भगवान भारतवर्ष में, गूंजे हमारी भारती।

21वीं सदी तीव्रतर परिवर्तनों व चमत्कारिक उपलब्धियों वाली शताब्दी, जिसमें उपलब्ध ज्ञान-विज्ञान व तकनीक ने सम्पूर्ण विश्व को एक वैश्विक ग्राम में परिवर्तित कर दिया है। स्थलीय एवं भौगोलिक दूरियों के अर्थ समाप्त हो रहे हैं। कोलम्बस व वास्कोडिगामा को इसी धरा के एक बिन्दु से दूसरे बिन्दु तक पहुंचने में सालों लगे, आज उन्हीं दूरियों को हम चंद घंटों में तय कर रहे हैं। जिस तेजी से गति हमारी गुठठी में बंद हो रही है, उससे यह निश्चित है कि आगामी समय में ये दूरियां और भी कम होने जा रही हैं।

वर्तमान में विश्व आर्थिक और व्यापारिक ध्रुवीकरण व पुनर्संघटन की प्रक्रिया से गुजर रहा है। विश्व में सशक्त राष्ट्रों में सशक्त राष्ट्रों का महत्वक्रम बदल रहा है। 18वीं सदी आस्ट्रिया व हंगरी की सदी थी, उन्नीसवीं सदी ब्रिटेन व जर्मनी की, 20वीं सदी अमेरिका व सोवियत संघ की सदी रही है। आज इक्कीसवीं सदी का प्रारंभिक काल है और हम विश्व मंचों से उन्मुक्त स्वर सुन रहें हैं कि यह भारत व चीन की सदी होने वाली है। इसका ठोस आधार है:- भारत व चीन के पास विद्यमान अकूल प्राकृतिक संसाधन व विश्व का सबसे युवा मानव-संसाधन। भावी वैश्विक संरचना में यही दो कारण उत्पादन के सबसे बड़े स्रोत हैं। कोई देश जब विश्व में अपेक्षाकृत अधिक महत्व, स्वीकृति तथा स्वयं के प्रति अन्यों की अधिक निर्भरता प्राप्त करता है तो उसकी सभी चीजें स्वत: महत्वपूर्ण हो जाती हैं। अत: भारत का बढ़ता हुआ अन्तर्राष्ट्रीय कद उसकी राष्ट्रभाषा हिन्दी के लिए एक वरदान सिद्ध होने जा रहा है। विश्व बिरादरी में भारत की सशक्त उपस्थिति विश्वस्तर पर हिन्दी के लिए स्वीकार्यता व व्याप्ति का आधार बनने जा रही है।

यहां मैं गांधीजी द्वारा दिनांक 15 अगस्त 1947 को बी.बी.सी. लंदन के लिए दिए गए उनके संदेश का उल्लेख करना चाहती हूं। उन्होंने कहा अंग्रेजी बोलने वाले मिलते हैं, पर संख्या में काफी कम, क्योंकि अंग्रेजी एक कठिन विदेशी भाषा है। करोड़ो भारतीयों को अंग्रेजी सिखाना यानि उन्हें गुलामी में डालने जैसा होगा, मैकाले ने शिक्षा की जो बुनियाद भारत में रखी, वह वास्तव में गुलामी की बुनियाद थी। उन्होंने कहा कि लाईचैम्सफोर्ड ने आशा व्यक्त की है कि अंग्रेजी कुछ ही दिनों में उच्च परिवारों की मातृभाषा बन जाएगी। अंग्रेजी प्रशिक्षण की आवश्यकता के विश्वास ने राष्ट्र के सर्वोत्तम मस्तिष्क को निष्क्रिय कर दिया है। यह एक विपत्ति है, अत: इस विचार से पीछे हटें, देशी भाषाएं अपनाएं व हिन्दी को उसके स्वाभाविक पद पर प्रतिष्ठित करें। जो राष्ट्र अपनी भाषा का अनादर करता है, वह अपनी राष्ट्रीयता खो बैठता है। पृथ्वी पर भारत ही एक ऐसा देश है, जहां माता-पिता अपने बच्चे के साथ अंग्रेजी बोलने व लिखने में गर्व का अनुभव करते हैं। यदि हमने 50 वर्ष तक अपनी मातृभाषा में शिक्षा पाई होती तो इस देश में इतने बसु व राय होते कि दुनिया अचम्भित रह जाती, इसलिए दुनिया से कह दो कि गांधी अंग्रेजी नहीं जानता, मैं अपनी बात अपनी भाषा में कहूंगा, जिसे गरज होगी वो सुनेगा भी और सीखेगा भी, इस प्रतिज्ञा के साथ काम होगा तो हिन्दी का दर्जा स्वत: बढ़ेगा। विदेशी भाषा माध्यम से शिक्षित बच्चे - तुर्की के कमालपाशा का उल्लेख - रट्टू व नकलची ही बन पाते हैं।

गांधी जी का सशक्त हस्तक्षेप भारतीय राजनीति में 1920 के असहयोग आंदोलन से हुआ। किन्तु, हिन्दी की अनिवार्यता को वे दक्षिण अफ्रिका प्रवास के समय ही जान चुके थे। 1910 में प्रकाशित उनकी पुस्तक हिन्द-स्वराज में उन्होंने लिखा - "भारत की भाषा अंग्रेजी नहीं है, हिन्दी है, व आपको सीखनीं पडेगी।" गांधी जी ने कई बार कई मंचों से राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी का पक्ष अत्यंत प्रभावी ढंग से रखा था। हिन्दी की अनिवार्यता को लेकर विरोध के स्वर कुछ हिन्दीतर प्रदेशों से सुनाई देते हैं, पर गौर किया जाए तो पता चलेगा कि ये स्वर उन लोगों के होते हैं, जो राजनीति से जुड़े होते हैं। साहित्य-साधना से जुडे लोग कभी भी हिन्दी का

*धर्मपत्नी श्री के.एन.मठपाल, नि. सचिव (से.नि.)

विरोध नहीं करते। हिन्दीतर क्षेत्रों के हिन्दी-प्रेमी सिद्ध कर चुके हैं कि हिन्दी अलगाव नहीं जुड़ाव की भाषा है। 16वीं सदी में बंगाल व उड़ीसा के वैष्णव भक्त कवियों ने "ब्रजबुलि" काव्य भाषा प्रयुक्त की जिसका व्याकरण ब्रजभाषा से मिलता-जुलता है, ब्रजबुलि पदकर्त्ताओं की परम्परा - राय रामानन्द, चम्पति राय, माधवी दासी, माधव घोष, ज्ञानदास व गोविन्ददास के साथ उन्नीसवीं सदी के नवें दशक तक चलती रही, कहने का भाव यह है कि खड़ी बोली की एक सशक्त कड़ी के रूप में ब्रजभाषा व ब्रजबुलि ने उड़ीसा य बंगाल को राष्ट्र की मुख्य धारा के साथ जोड़ा।

कलकत्ता, बर्द्धमान, कल्याणी, उत्तरबंग विश्व विद्यालयों में हिन्दी का अध्ययन-अध्यापन होता है। शांतिनिकेतन व विश्वभारती में स्नातक व स्नात्तकोत्तर स्तर पर हिन्दी पढ़ाई जाती है। उडीसा व बंगाल के कुल नौ विश्वविद्यालयों हिन्दी शोध कार्य हो रहे हैं, उड़ीसा से दो सौ व बंगाल से चार सौ छात्र शोध उपाधि प्राप्त कर चुके हैं और सैकड़ों अभी शोधरत हैं। मराठी संत नामदेव ने 13वीं सदी में हिन्दी पद लिखे। गुजराती नरसी मेहता ने 16वीं सदी में ब्रजभाषा को काव्य रचना का माध्यम बनाया। कबीर, नानक, दादू, सूर, तुलसी, गुरू गोविन्द सिंह, भालण, एकनाथ, तुकाराम की रचनाएं हिन्दी में प्राप्त होती है।

दक्षिण भारत के शातवाहन, शंकराचार्य, रामानुजाचार्य, माधवाचार्य, वल्लभाचार्य की कृतियां व विचारधारा ने परोक्षत: हिन्दी भाषा सहित्य को प्रेरित किया। आन्ध्र के पद्माकर रीतिकाल के आलोक स्तम्भ थे। केरल के महाराजा पदमनाथ नाम से हिन्दुस्तानी में पद रचना करते थे। 18वीं सदी में हिन्दी - मलयालय की पाठशालाएं चलायी जाती थी महाराजा स्वाति तिरूमाल ने हिन्दी को सरल व सरस गीतों से समृद्ध किया। कर्नाटक में हिन्दी कोश तैयार किया गया। 175 वर्ष पूर्व स्वामी दयानन्द सरस्वती ने हिन्दी को सम्पूर्ण राष्ट्र की सम्पर्क भाषा बनाने का प्रस्ताव किया था और अपनी सारी रचनाएं भी हिन्दी में ही लिखी थी। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि खिली कुसुम सी सब भाषाएं, हिन्दी पुष्प गुलाब है सुरभित भारत के उपवन के, ऋतुओं का मधुमास है।

भारत के स्वाधीनता संग्राम में महात्मा गांधी, सी. राजगोपालाचारी, लाला लाजपत राय, विपिन चंद्रपाल, लोकमान्य तिलक, सुभाष चंद्र बोस, जे. बी. कृपलानी, सरदार पटेल, अनंत शयनम् आयंगर, काका कालेलकर आदि अहिन्दी भाषियों ने हिन्दी को स्वाधीनता संग्राम की संवाद भाषा घोषित किया। हिन्दी साहित्य सम्मेलन का 27 वर्षो तक सदस्य रहकर गांधी जी ने दक्षिण भारत में हिन्दी प्रचार-प्रसार का काम किया, इतने अहिन्दी भाषी हिन्दी साधकों व समर्थको का उल्लेख मैं इसलिए कर रही हूं ताकि तस्वीर स्पष्ट हो जाए कि हिन्दी का विरोध जनता नहीं करती बल्कि जनता को विभाजित कर राज करने वाली कुटिल सोच करती है, राष्ट्रीय स्तर पर यही कुटिल सोच आज भी हावी नजर आ रही है।

मैं आपको और पीछे ले जाना चाहती हूं दक्षिण भारत की भाषाएं द्रविड कुल की भाषाएं है तमिल, तेलगु, मलयालग व कन्नड। इन भाषाओं ने युगों तक अपनी विशिष्टताओं को संरक्षित व सुरक्षित रखा, महर्षि अगस्त्य ने भारत की सांस्कृतिक भाषा संस्कृत को कश्मीर से कन्याकुमारी तक प्रचारित - प्रसारित किया और ये चारों भाषाएं संस्कृत से प्रभावित हुई यहां तक कि मलयालम का पहला व्याकरण संस्कृत में लिखा गया था। बिल्कुल अलग कुल की ये भाषाएं भी संस्कृत के साथ चली और इनमें हजारों संस्कृत शब्द आज भी प्रचलित हैं। यह सांस्कृतिक एकता युगों से भारत की विशेषता रही है। उत्तर व दक्षिण में विचार वैभव से सदैव एक दूसरे को प्रभावित किया है। आज संस्कृत की भूमिका में हिन्दी है। एक सांस्कृतिक चेतना के रूप में हिन्दी पूरे राष्ट्र में अपनी उपस्थिति दर्ज करा रही है। दक्षिण भारत के तीर्थ - स्थानों की यात्रा करने वाले अगणित साधु-संत, तीर्थ यात्री व व्यापारी हिन्दी को प्रतिष्ठित कर रहे हैं, जिनके कोई राजनीतिक स्वार्थ नहीं है। महाराजा स्वाति तिरूमाल के सरस हिन्दी एक महत्वपूर्ण सांस्कृतिक कड़ी काम करते हुए सिद्ध करते है कि द्रविडकुल के भाषा-भाषियों ने हिन्दी को अत्यंत आत्मीयता से आत्मसात किया है।

हिन्दी के महान लोकप्रिय साहित्यकारों की रचनाओं को अनुवाद कर दक्षिण भारत पहुंचाने का काम श्रीमती तुलसी जयरामन, श्री उमा चंद्रन, सरस्वती रामनाथ, डॉ. सुन्दरम टी. शोषाद्रि, सी. बालगौरी रेड्डी, आरिगपूडि, आंजनेय शर्मा, ए. सी. कामाक्षिराव, एल्लूरू जनार्द्धन, डॉ. नागप्पा, डॉ. एन. एस. दक्षिणामूर्ति, श्री एन. चन्द्र शेखरन नायर, एस. शौरिराजन आदि ने किया और कई मौलिक रचनाएं भी हिन्दी को दी।

युगप्रभात, राष्ट्रवाणी, हिन्दी प्रचार-समाचार, केरल भारती, केरल ज्योति, भारतवाणी, कल्पना व अंकन नामक पत्र-पत्रिकाएं दक्षिण में हिन्दी की पावन ज्योति प्रज्ज्वलित करने का काम कर रहे हैं। जिस गति से अर्थव्यवस्था केन्द्रित हितों के साथ राष्ट्रों के स्वरूप स्थापित हो रहे हैं उससे यह निश्चित है कि भारत के रूप में 125 करोड़ से भी अधिक उपभोक्ताओं का बाजार विश्व को नजर आ रहा है तब तो देश में बाजार से सम्पर्क की भाषा के रूप में देश के लिए भी और विश्व के लिए भी हिन्दी आवश्यकता बनने जा रही है। अब वैश्विक संदर्भ में भी हिन्दी की स्थिति पर एक नजर डाल ली जाए।

विश्व के 44 राष्ट्रों की 5 अरब चौरासी करोड़ सत्तासी लाख अडतालीस हजार की कुल जनसंख्या में से एक अरब 10 करोड़ 29 लाख 96 हजार चार सौ सैंतालीस लोग हिन्दी जानते है जो 18.9 प्रतिशत है। विश्व में 70 से 80 प्रतिशत हिन्दी जानने वाले देश है -मॉरीशस, नेपाल, पाकिस्तान और भारत। 30 से 50 प्रतिशत हिन्दी जानने वाली जनसंख्या वाले देश है - बांग्लादेश, भूटान, इक्वेडर, फिजी, ग्वाटेमाला, गयाना, सूरीनाम, संयुक्त अरब अमीरात ट्रिनिडाड, बाकी के 30 देशों में 1 से 10 प्रतिशत लोग हिन्दी जानते है।

21वीं सदी भू-मंडलीकरण की प्रक्रिया लिए तीव्र सांस्कृतिक संक्रमण से गुजर रही है। संस्कृति के प्रमुख निर्माणक तत्व वैश्विक स्वरूप ग्रहण कर रहे हैं। प्रौद्योगिकी क्रांति एवं उपलब्धियों की उथल-पुथल से विश्व की भाषाओं की बुनियादें हिल चुकी हैं। उपग्रह चैनलों, कम्प्यूटर संजालों व इंटरनेट जैसे सर्वव्यापी माध्यमों का भाषा पर प्रभाव तो भविष्य के गर्भ में है। पर अटकलों का बाजार गर्म है। एक पाश्चात्य विद्वान ने तो यहां तक कह दिया है कि आने वाले 50 वर्षों में आज बोली जाने वाली 1300 भाषाओं में से केवल 800 भाषाएं ही जीवित रह पायेंगी।

इसका सीधा संकेत यह हुआ कि इस सदी की तकनीकी और वैज्ञानिक उपलब्धियों एवं संभावनाओं के अनुसार हिन्दी को भी तैयार होना होगा। यह तो अस्तित्व का प्रश्न है और हमें नई जीवन दिशाओं व गतिशील प्रौद्योगिकीय उपलब्धियों के साथ ताल मिलाकर चलने के लिए तैयार होना होगा क्योंकि ग्लोबल प्रतिस्पर्धाओं से भाषाएं भी नहीं बचेंगीं।

सौभाग्य से विश्व के एक बड़े बाजार की नियोजक शक्ति का संबल हिन्दी को मिल रहा है। बाजारीवादी शक्तियों के लिए हिन्दी प्रयोग की अनिवार्यता सामने आ रही है, यही कारण है कि हिन्दी वैश्विक भाषा बनने की दिशा में बढ़ रही है विश्वभाषा बनने के लिए किसी भी भाषा को चाहिए कि

1. उसमें समृद्ध व वैविध्यपूर्ण साहित्य सृजन की एक सुदीर्घ परंपरा हो और उसकी कोई एक विधा अंतर्राष्ट्रीय स्तर की हो।
2. उसके पास विपुल शब्द भंडार हो, जो विचार-विनिमय द्वारा एक दूसरे को प्रभावित करने में सक्षम हो।
3. एक बड़ी संख्या में इसे बोलने व पसंद करने वाले हों जो विश्वभर में फैले हों।
4. उसमें ज्ञान-विज्ञान की सभी शाखाओं में सृजित व प्रकाशित साहित्य हो और किसी भी नवीनतम विषय पर सामग्री तैयार करने की क्षमता हो।
5. उसका एक सरल, सुबोध व वैज्ञानिक लिपि हो जो निरंतर परिष्कृत होती रहे।
6. उसका प्रयोग बड़े पैमाने पर देश-विदेश में जन-संचार माध्यमों द्वारा हो रहा हो व विश्व मीडिया में उसका प्रभावी हस्तक्षेप हो।
7. अंतर्राष्ट्रीय, आर्थिक आदान-प्रदान, राजनीतिक संदर्भो, सांस्कृतिक व सामाजिक चिंताओं की संवाहक हो।
8. उसका साहित्य अनुवाद द्वारा विश्व की दूसरी महत्वपूर्ण भाषा-भाषियों तक पहुंच रहा हो।
9. उसमें सुपर कम्प्यूटर, सूचना स्रोत, सॉफ्ट-वियर, उपलब्ध हो ताकि ईमेल, ई-कार्मस, इंटरनेट व वेबजगत के क्रियाकलापों की कसौटी पर खरी उतर सके।
10. वैज्ञानिक व तकनीकी उपलब्धियों के साथ स्वयं को पुरस्कृत व समायोजित करने की क्षमता से युक्त हो।
11. अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक आदान-प्रदान, राजनीतिक, संदर्भो, सांस्कृतिक व सामाजिक, चिंताओं की संवाहक बन सके।

इन सभी कसौटियों पर हिन्दी कुछ कम तो कुछ ज्यादा पर खरी उतरती तो है। विश्व के 140 देशों में हिन्दी किसी न किसी रूप में प्रयुक्त होती है। इसको बोलने वालों की संख्या चीनी भाषा के बाद दूसरे नंबर पर है। हिन्दी को विश्वभाषा बनाने के लिए हमारा प्रयास होना चाहिए कि वह प्रशासनिक, व्यावसायिक व वैचारिक स्तर पर प्रभावी भाषा बने। भारत में

1980 के बाद जन्में 65 करोड़ बच्चे 2015 तक शिक्षित व प्रशिक्षित होकर विश्वस्तरीय सेवाओं के लिए तैयार हो चुके हैं जबकि इसी समय जापान की 60% आबादी बुढ़ापे में कदम रख रही है। यही स्थिति यूरोप व अमेरिका में हैं। इस प्रकार 2020 तक हिन्दी विश्व की सर्वाधिक बोली व समझी जाने वाली भाषा बन जाएगी।

हिन्दी के पास विश्व की सबसे बड़ी कृषि विषयक शब्दावली है। हिन्दी उदार है, उदारतापूर्वक अन्य भाषाओं के शब्दों को ग्रहण करती चली आ रही है और आगे भी करेगी। सूचना, प्रौद्योगिकी, विज्ञान, चिकित्सा, भू-विज्ञान तथा अन्यानेक विज्ञान की शाखाओं की सामग्री के लिए हिन्दी में शब्दों को चेष्ठापूर्वक गढ़ने की आवश्यकता नहीं है, बल्कि जो शब्द जिस क्षेत्र का है उसे यथासंभव उसी रूप में देवनागरी में लिख व बोल कर समस्याओं का किसी सीमा तक निदान पाया जा सकता है।

ये आवश्यकता का तकाजा ही तो है कि डिस्कवरी, नेशनल ज्योग्राफिक, सारे कार्टून चैनल हिन्दी में प्रसारित हो रहे हैं। इकोनॉमिक्स टाइम्स व बिजनेस स्टैंडर्ड जैसे पत्र हिन्दी में प्रकाशन को विवश हैं। स्टार न्यूज अंग्रेजी में शुरू हुआ और आज पूरी तरह हिन्दी चैनल बन चुका है। ESPN व स्टार स्पोर्टस चैनल हिन्दी में कमेंटरी देने लगे हैं। उपग्रह से प्रसारित चैनलों के माध्यम से हिन्दी विश्व के सब देशों में अबाध रूप से पहुंच रही है। विश्वमीडिया में वह अपना स्थान बना चुकी है। जन संचार माध्यमों की प्रिय व अनुकूल भाषा बनी हुई है।

यूरोप, कनाडा, अमेरिका, मॉरिशस, दक्षिण-पूर्व एशिया, मध्य एशिया, खाड़ी क्षेत्र, अफ्रिका में हिन्दी उपग्रह चैनलों के माध्यम से पहुंच रही है। सब जगह हिन्दी चैनल खुल रहे है। ब्रिटेन में BBC हिन्दी सेवा के सर्वाधिक श्रोता हैं। मॉरिशस में 7 हिन्दी चैनल सक्रिय हैं। विश्व के अनेक देशों में FM रेडियो के हिन्दी चैनल जनता की साइट्स पर उपलब्ध हैं। मॉरिशस, त्रिनिडाड, लंदन, सूरीनाम, न्यूयार्क व दक्षिण-अफ्रिका में विश्व हिन्दी सम्मेलन आयोजित हो चुके हैं।

भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद् द्वारा विदेशों में पोलेंड, बुल्गारिया, सूरीनाम, मास्को, ट्रिनिडाड, स्पेन, चीन, टर्की, बेल्जियम, दक्षिण कोरिया, रोमानिया में हिन्दी विद्यापीठ, थाइलैंड व फ्रांस में संस्कृत विद्यापीठ तथा पोलेंड में तमिल विद्यापीठ स्थापित की गई हैं। हिन्दी विश्वभाषा इसलिए भी बन रही है क्योंकि वह विविध सांस्कृतिक परिवेश में युगों से सक्रिय रही है। इसलिए विश्व के वैविध्यपूर्ण सांस्कृतिक परिवेश में हिन्दी चलेगी ही नहीं बल्कि दौड़ेगी।

कुछ समय पूर्व एक कार्यशाला में अमेरिका के एक वक्ता बता रहे थे – अंग्रेजी विश्वभाषा बनी क्योंकि उसने फ्रेंच, लैटिन, ग्रीक, इटेलियन व स्पेनिश के हजारों शब्द अपनाए हैं। हिन्दी के 800 शब्द आक्सफोर्ड शब्दकोश में आ चुके हैं। यही नीति हिन्दी अपना सकती है। अंतरिक्ष, IT, कम्प्यूटर, भू-विज्ञान, चिकित्सा और भी जो नवीनतम शाखाएं विज्ञान व प्रौद्योगिकी में विकसित हो रही हैं उनके पारिभाषिक शब्दों को जैसे का तैसा ग्रहण किया जाना चाहिए न कि जबरदस्ती कृत्रिम शब्द गढ़े जाएं। विश्व के प्रत्येक विकास व खोज का आधार बनता है भारत का विशाल संस्कृत वांङमय। संस्कृत वांङमय में जीवन से जुड़े उन सब शाखाओं का आधारभूत ज्ञान संरक्षित जिनकी कल्पना भी नहीं की जाती थी। आत्रेय, सुश्रुत, पुनर्वसु, अग्निवेश, चरक, दृढ़बल द्वारा उन्नत चिकित्सा व शल्य चिकित्सा की पुस्तकें लिखी गई। 800 ई. में चरक संहिता का अरबी में अनुवाद हो भी चुका था। ये ग्रंथ पशुओं, घोड़ों व वृक्षों तक की चिकित्सा का विवरण देते हैं। चिकित्साशास्त्र संबंधी कोशों की रचना भी हुई। आचार्य व्याडि ने रसायन पर, चाणक्य ने अर्धशास्त्र, पाणिनी ने व्याकरण पर उत्कृष्ट ग्रंथों की रचना की है। इन पुस्तकों में वैद्यक चिकित्सा सामुद्रिक शास्त्र, शल्य चिकित्सा, अंतरिक्ष विज्ञान संबंधी शब्दावली विद्यमान है। हर बात के लिए यूरोप का मुंह ताकें यह ठीक नहीं बल्कि हिन्दी के साथ संस्कृत का मजबूत ज्ञान छात्रों को देना अत्यंत आवश्यक है। जो उन्हें भारत की युग-युगांतर से संचित ज्ञान राशि से जोड़ेगा और जहां अपने शोध व अनुसंधान में उन्हें अपने पूर्वजों का अनुभव व संचित ज्ञान का लाभ मिलेगा जो उनका जन्म सिद्ध अधिकार है।

अंत में

जनमानस की अनुपम वाणी, हिन्दी बने दिलों की रानी
सरल सीखना और समझाना, मधुर गान है इसको सुनना
अविरल गति से बहती भाषा, हर्षित मन कर जीवन आशा
गौरवशाली इतिहास बताता, मां संस्कृति के गीत सुनाता
आज हमें इसको अपना कर, पावन धर्म निभाना है
जिस धरती पर जन्म लिया, उसकी भाषा को अपनाना है।

नतोहम रामवल्लभाम

श्री रमाकान्त मिश्र एवं श्रीमती रेखा मिश्र
भारतीय वानिकी अनुसन्धान एवं शिक्षा परिषद्, देहरादून

वन प्रांतर में प्रवेश करते ही महारानी को अपूर्व शांति का अनुभव हुआ। ऐसा नहीं था कि वन पूर्णत: निस्पंद था किंतु पक्षियों की चहचहाहट और वृक्षों की सरसराहट से मानो संगीत की सृष्टि होती थी। थोड़ी दूर चलकर रथवान ने रथ रोक दिया। अश्वारोही अंगरक्षक आगे खड़े हुए थे। अंगरक्षकों के नायक ने आकर निवेदन किया, ''महारानी की जय हो। आर्यो के नियमानुसार अब आगे अश्व, रथ यहां तक कि पादुकाएं भी वर्जित हैं। महारानी को कष्ट करना होगा।''

''ये आर्य और इनके पाखंड।'' महारानी ने कहा और नीचे उतर पड़ीं। अंगरक्षकों के नायक ने सभी अस्त्र-शस्त्र वहीं रख दिए और नंगे पैर महारानी के साथ चल पड़ा।

उनके एक सुंदर कुटिया के प्रांगण में प्रवेश करते ही एक वन बाला कुटिया से बाहर आई। उसने महारानी को नमस्कार किया।

''क्या मैं यहां की स्वामिनी से मिल सकती हूँ?''

''क्या आपका परिचय मिलेगा?''

''अच्छा हो तुम उन्हें ही पूछने दो।'' महारानी ने दर्पयुक्त मुस्कान से कहा।

वन बाला कुटिया में चली गई।

कुछ ही क्षणों के उपरांत एक तेजस्विनी महिला काषाय वस्त्रों में कुटिया के द्वार पर प्रकट हुई।

''ओह! महारानी मंदोदरी, यह कुटिया तो आपके स्वागत योग्य नहीं फिर भी पधारिए।''

तभी वन बाला ने प्रकट हो कलश से मंदोदरी को पाद्य दिया।

पदप्रक्षालन के उपरांत मंदोदरी कुटिया में प्रविष्ट हुई। अंदर आते ही उसने कुटिया का कोना-कोना विवेचनात्मक दृष्टि से देखा और फिर उसके मुख पर एक कुटिल मुस्कान उभरी।

वन बाला ने उसे एक चौकी पर आसन दिया और तदुपरांत कुछ फल और एक कुल्हड़ में शीतोष्ण दूध लाकर आहार के लिए प्रस्तुत किया।

मंदोदरी ने बड़े नखरे से फल का एक टुकड़ा लिया।

''हमे आपकी इस अवस्था पर खेद है। आपका जीवन भी निरंतर संघर्ष की अंतहीन कथा प्रतीत होता है।''

कोई उत्तर न पाने पर मंदोदरी पुन: बोली, ''सुना है आपके दो पुत्र हैं। जुड़वां हैं क्या?''

प्रश्न में छुपे आरोप से यदि कोई चोट पहुंची हो तो वह सीता के मुख पर प्रकट न हो सकी। वहां पर तो वही भुवनमोहिनी मुस्कान थी।

''हां, जुड़वा ही हैं।''

''भाग्य का कैसा खेल है, अयोध्या के राजकुमार वन-वन भटक रहे हैं।'' मंदोदरी ने फिर प्रहार किया।

''वन प्रांतर स्थित गुरूकुलों में शिक्षा पाना आर्यो की परम्परा है।'' सीता ने सस्मित कहा।

''हां, वो मैं भूल गई थी। किंतु माताएं तो गुरूकुल संभवत: नहीं जातीं।''

''आर्य स्त्रियां प्राय: अपने पितृकुल में लंबी अवधि तक निवास करती हैं।''

''महर्षि वाल्मीकि आपके पितृकुल की ओर से हैं, मुझे ज्ञात न था।''

व्यंग का सीता की ओर से कोई उत्तर न आने पर पर्याप्त समय तक कुटिया में मौन छा गया। मौन को वन बाला ने दूध का कुल्हड़ बढ़ाते हुए भंग किया, ''इस दूध का स्वाद देखिए।''

''दूध ..... दूध वस्तुत: हमे रूचिकर तो नहीं लगता, किंतु तब भी पी लेती हूँ।''

''आपको अपने पति से रोष तो अवश्य होगा?'' दूध का एक घूंट लेते हुए मंदोदरी ने पुन: कुरेदा।

''रोष, किस बात का रोष?''

एक क्षण को मंदोदरी अवाक रह गई। किंतु वह पट्ट कूटनीतिज्ञ थी। मुस्कराई और फिर बोली ''आपको सगर्भा वन में निर्वासित कर दिया। आपका नही तो आपकी अवस्था का और अपने बच्चों का तो सोचा होता।''

''निर्वासित? कहां से निर्वासित? इस ब्रहमाण्ड में ऐसा क्या है जो अयोध्यानाथ के अधिकार से बाहर हो?''

एक बार पुन: मंदोदरी को अवाक रह जाना पड़ा। किंतु वह चुप रहने वाली कहां थी। वह तो आई ही सीता को कष्ट पहुंचाने थी। पुन: बोली, ''ठीक है, किंतु स्वयं प्रासादों के ऐश्वर्य में रहते हुए पत्नी को वन में भेज देना तो उचित प्रतीत नहीं होता।''

सीता मुस्कराती रहीं। मानो मंदोदरी को और प्रहार करने को प्रेरित कर रहीं हों। उनके मौन और उनकी मुस्कान से मंदोदरी का हृदय ईर्ष्या की अग्नि से धधक उठा।

''आप कुछ भी कहें। मैं तो इसे महाराज रामचंद्र का अन्याय ही मानूंगी।''

''महारानी मंदोदरी, आप अतिथि हैं, किंतु मेरे पति और राजा के प्रति सम्मानपूर्वक वचन ही बोलें। मैं आपकी मान्यता को चुनौती नहीं देना चाहती। किंतु आप इतना जान लें कि रघुकुल शिरोमणि द्वारा कभी भी अन्याय नहीं हो सकता।''

एक क्षण को मंदोदरी को उत्तर न सूझा। फिर वह बोली, ''आप ये कहना चाहती हैं कि आप पर लांछन लगा कर उन्होने उचित किया?''

''लांछन? उन्होंने लांछन लगाया?ये आप क्या कह रही हैं?''

मंदोदरी को कुछ समझ नहीं आया। उसने पुन: कहा – ''आपका कहना है कि महाराज रामचंद्र ने आप पर कोई आरोप नहीं लगाया।''

''हां, अवश्य।''

''तो फिर आप यहां क्यों हैं?अयोध्या के राजमहल में क्यों नहीं?'' मंदोदरी उत्कंठित स्वर में बोली।

''अच्छा, तो आप मेरे यहां होने का कारण कोई लांछन समझती हैं।''

''ऐसा तो सर्वत्र चर्चा में है।''

''क्या चर्चा में है, यह तो आपके सूत्रों पर निर्भर है। किंतु मेरे स्वामी का मेरे साथ क्या संबंध है और एक दूसरे को हम क्या और कितना समझते हैं, यह तो निश्चय ही कोई दूसरा नहीं जान सकता।''

''तो फिर उन्होंने आपको देश निकाला क्यों दिया?''

''मैंने आपसे पहले भी कहा है कि ऐसा नहीं है और,'' सीता एक क्षण के लिए रुकीं और फिर मंद हास के साथ बोलीं, ''वे ऐसा चाहें भी तो भी ऐसा संभव ही नहीं, मैने आपको पहले भी बताया।''

मंदोदरी असहज हो गई। बातचीत का कोई सूत्र ही पकड़ाई में नहीं आ रहा था। मंदोदरी सदृश कूटनीति पारंगत राजमहिषी के लिए ऐसा कभी नहीं होता था। कहां तो वह सोच रही थी कि वह सीता को व्यग्र कर देगी और कहां वह बात ही नहीं चला पा रही थी।

''आप विश्राम कर लीजिए। थक गई होंगी।'' सीता ने सस्मित कहा।

''नहीं, कोई थकान नहीं है। मैं तो आपसे मिलने को व्यग्र थी। आप चाहे जो कहें किंतु मुझे महाराज रामचंद्र का आपके प्रति व्यवहार सर्वथा संवेदनहीन प्रतीत होता है।''

''मेरे प्रति मेरे पति का व्यवहार समझना कठिन नहीं है। मात्र इतनी समझ पर्याप्त है कि उनका मुझपर अपार नेह है।''

''आप इसको नेह कहती हैं।'' मंदोदरी हंसते हुए बोली, ''आपको वनवास और स्वयं राजप्रसाद में राजसी जीवन। अगर यह नेह है तो धन्य हैं आप।''

''नेह को आपकी संस्कृति में भोग से जाना जाता है। किंतु हमारी संस्कृति में नेह त्याग से जाना जाता है। हम आर्य, मूल्यों की रक्षा, नैतिक दूरदृष्टि और परिवार के कल्याण के लिए कुछ भी त्याग सकते हैं और जिससे जितना अधिक नेह होता है, उससे उतने अधिक त्याग की अपेक्षा रखते हैं।'' सीता सहज स्वर में बोलीं।

''तो फिर ये त्याग उन्होने स्वयं भी क्यों न किया ?केवल आप पर त्याग का भार क्यों डाला ?''

''इसी लिए तो मैंने आपसे पहले ही कहा कि यह मेरे पति का मुझ पर नेह है। लेकिन लगता है आप इसे समझना नहीं चाहतीं।''

''मैं तो मात्र इतना देखती हूँ कि आपके पति ने आपको कष्ट में डाल दिया है और स्वयं सभी प्रकार के सुख-साधनों में रहते हैं।''

''यह आपका नहीं वरन आपकी संस्कृति का दोष है। जिसमें मात्र सुख का साथ माना जाता है और पति-पत्नी को सुख का साथी समझा जाता है। दोनों किसी भी प्रकार का कष्ट नहीं उठाना चाहते और चाहते हैं कि दूसरा ही उसका निराकरण करे, चाहे तो स्वयं ही कष्ट उठाए।''

संस्कृति पर ही आक्षेप सुन मंदोदरी तिलमिला उठी।

''मैं समझती हूँ आप अपने पति का पक्ष ले रही हैं। उनके अनुचित कृत्य को भी उचित ठहरा रही हैं।''

''आप बातों को दोहराती बहुत हैं। मेरे पति कोई अनुचित कृत्य कभी कर ही नहीं सकते, मुझे फिर कहना पड़ रहा है। रही पक्षधरता की बात तो मैं तो उनके अतिरिक्त अपना कोई पक्ष देखती ही नहीं। पति-पत्नी का अलग-अलग पक्ष भला कैसे हो सकता है?''

''तो आपको यह उचित लगता है कि वे राजप्रासाद में आनंदभोग करें?'' मंदोदरी ने सीधा प्रहार किया।

''यहां आप पुन: सत्य को नहीं देख पा रही हैं। जब हम अभिन्न हैं तो हमारे सुख-दुख भिन्न कैसे होंगे। अगर वे आनंद में हैं तो मैं भी आनंद में हूँ।''

''आप तो सैद्धांतिक बात करती हैं। भला उनके भोजन करने से आपका पेट कैसे भरेगा ?''

''आप बहुत स्थूल बात करती हैं। भोजन, वस्त्र इत्यादि बहुत प्राथमिक वस्तुएं हैं। इनका उपयोग मात्र शरीर के पोषण, रक्षण में होता है। मैं आत्मा की बात करती हूँ जो इन सब से परे है। उसी का सुख-दुख अर्थ रखता है, शेष सब व्यर्थ है।''

''यदि आत्मा की ही बात है तो फिर आपका यहां आने का क्या प्रयोजन रहा?''

''आत्मा के परिष्कार के लिए और उसके जागरण के लिए सात्विक वातावरण अपेक्षित है। तामसी, राजसी वातावरण में आत्मा उपेक्षित हो जाती है और शरीर प्रमुख हो जाता है। इस कारण अपनी संतति की आत्मा को पुष्ट करने और उनके उज्ज्वल भविष्य को प्रशस्त करने के लिए यह आवश्यक था कि मैं यहां आऊं।''

वे एक क्षण के लिए रूकीं मुस्कराईं फिर बोलीं, ''पति-पत्नी में संतान के लिए कर्तव्य भिन्न-भिन्न हो सकते हैं, फिर एक राजा मात्र अपने परिवार या संतान के ही भविष्य के लिए कार्य नहीं कर सकता। उस पर गुरूतर दायित्व होते हैं। अत: परिवार के लिए दोनों में से किसी एक को अलग डगर भी लेनी पड़ सकती है।''

''चाहे जो हो, मैं एक बात के लिए तो आपकी प्रशंसा करूंगी कि आप अपने पति के पक्ष में सदैव रहेंगी चाहे उनका व्यवहार आपके प्रति कुछ भी क्यों न रहा हो।''

''मैने पहले भी कहा है हमारा पक्ष अलग-अलग नहीं है। और फिर अगर पत्नी पति के पक्ष में न होगी तो किसके पक्ष में होगी?'' सीता ने मधुर मुस्कान के साथ कहा।

मंदोदरी की कामना पूर्ण न हो सकी थी। वह यहां पर अपने ऐश्वर्य का प्रदर्शन करके और राम के विरूद्ध बात कर सीता को नीचा दिखाने के उद्देश्य से आई थी लेकिन उसका मनोरथ पूर्ण न हो सका। अपनी इच्छा की पूर्ति न होने से कुछ निराश मंदोदरी को वहां रूकना सह्य न हुआ। अत: वह अनायास ही उठ खड़ी हुई।

''अब चलती हूँ। आपके दर्शन हो गए। मेरा आना सफल हुआ।''

''ये मेरा सौभाग्य है कि लंका की महारानी मेरी कुटिया में पधारीं।''

मंदोदरी के साथ सीता भी कुटिया से बाहर आईं। वे दोनों कुटिया के आंगन से बाहर आ रही थीं कि तभी लव-कुश का आगमन हुआ।

''आप लंका की महारानी मंदोदरी हैं। इन्हें प्रणाम करो, पुत्र!'' सीता ने पुत्रों से कहा।

दोनों ने हाथ जोड़कर मंदोदरी को नमस्कार किया।

दोनों प्रश्नवाचक मुद्रा में मां को देख रहे थे। गंभीर लव तो चुप रहा किंतु वाचाल कुश कहां चुप रहने वाला था। इससे पूर्व कि सीता उसकी उद्विग्नता भांप सकें, कुश बोला, ''महारानी मंदोदरी, किंतु मां इन्होने तो पूर्ण श्रृंगार किया हुआ है ? ''

मंदोदरी पर जैसे घड़ों पानी पड़ गया। वह क्रुद्ध हो गई।

''महारानी सीता, आपके पुत्र वन में रहकर सभ्यता नहीं सीख सके हैं।''

एकाएक सीता की भृकुटि में बल पड़ गए, ''ये क्षत्रियकुमार हैं। इनसे अधिक सभ्य कोई नहीं हो सकता। ये सत्य सम्भाषण करने में काल से भी भीत नहीं होते।''

''अपने बेटों की अच्छी शिक्षा की व्यवस्था की है, महाराज रामचंद्र ने।'' मंदोदरी व्यंग्य से बोली।

सीता के रोष का वारापार न रहा, ''मेरे पति ने अपने बच्चों का उज्ज्वल भविष्य और निश्छल विकास सुनिश्चित करने के लिए अपने दांपत्य को होम कर दिया। उन्होने अपनी वासना की अग्नि में अपने पुत्रों को होम नहीं किया।''

मंदोदरी स्तब्ध रह गई। कुटिया के भीतर अत्यंत सौम्यता से प्रत्येक प्रहार का मधुर प्रतिकार करने वाली सीता से कुटिया के प्रांगण से बाहर ऐसा प्रचंड प्रहार किए जाने की मंदोदरी को कोई अपेक्षा न थी।

''मेरे पुत्रों को सर्वश्रेष्ठ मानव व्यवहार की शिक्षा दी गई है,'' सीता का रोष अभी थमा नहीं था, ''आप लंका की महारानी हैं, अत: आपसे उच्चतम मानव व्यवहार की अपेक्षा की जाती है। और ऐसा ही इन बालकों ने भी किया। ये तो जानते हैं कि आप महर्षि पुलत्स्य की पुत्रवधू हैं किंतु ये यह नहीं जानते कि पितृकुल से आप दानव हैं और आपने राक्षसी जीवनशैली आकंठ अपनाई है।''

मंदोदरी से कोई उत्तर न बन पड़ा। उसने चुपचाप सीता को नमस्कार किया और अपने रथ की ओर बढ़ गई।

अपने स्कंधावार में लौटने तक मंदोदरी के मन में क्रोध, अपमान, ईर्ष्या, द्वेष की कुछ ऐसी अग्नि प्रज्ज्वलित हो गई थी कि उसे किसी करवट शांति न थी। इसी उद्विग्न मन:स्थिति में स्कंधावार कूच हुआ और दो दिन के उपरांत वह अयोध्या पहुंच गई।

अयोध्या पहुंचते ही उसने अपने गुप्तचरों से मंत्रणा की। किंतु अपेक्षित सूचनाएं न पा सकी। अत: उसने उन्हें पुन: निर्देशित किया कि वे महाराजा राम के निजी जीवन से संबंधित छोटी से छोटी सूचना एकत्रित कर उसे नित्य बताएं।

विभीषण के साथ जाकर वे राज दरबार में अपनी उपस्थिति कर चुके थे। किंतु राजभवन में उनको रूकने का आमंत्रण प्राप्त नहीं हुआ। उनको अन्यत्र एक भवन में ठहरने का निर्देश मिला।

धीरे-धीरे यज्ञ की तिथि निकट आ रही थी। किंतु मंदोदरी को गुप्तचरों से कोई आशाजनक सूचना प्राप्त नहीं हो रही थी। जो कुछ वे बताते थे उसपर मंदोदरी को विश्वास न था। भला यह कहीं संभव था कि अयोध्या से लंका पर्यन्त जिस सम्राट का आदेश चलता हो वह राजभवन में एकाकी रहता हो। जिसके राजभवन में राजमाताओं को छोड़कर किसी महिला का प्रवेश निषेध हो। जो पूर्ण निरामिष अत्यंत सादा भोजन करता हो। आर्यवृत के आर्य राजाओं में सामिष भोजन, सुरापान, नृत्य संगीत की सभाएं तो सामान्य बात थीं फिर भला राजा राम ऐसा ऋषितुल्य जीवन कैसे और क्यों जीते थे, अवश्य कोई भेद है। कुछ तो ऐसा रहस्य है जिसको छुपाया जा रहा है। इस प्रकार की ओट तो प्राय: किसी अनैतिक कार्य हेतु ही निर्मित की जाती है, मंदोदरी को सहज विश्वास था। किंतु दिन प्रतिदिन उसके ज्ञान में कोई वृद्धि न हो पा रही थी। उसे अपने गुप्तचरों पर क्रोध आ रहा था। फिर उसने महाराजा राम से मिलने के लिए अनुरोध प्रेषित किया जो कि उसके पास एक दूत द्वारा इस अनुरोध के साथ वापस आ गया कि वह प्रयोजन व्यक्त करें अन्यथा भेंट संभव नहीं।

यज्ञ का दिन आ गया। मंदोदरी अन्य राज्यों की रानियों, राजकुमारियों आदि के साथ प्रांगण में उपस्थित थी। आर्य परम्पराओं के अनुसार राम ने यज्ञ भूमि में प्रवेश किया और गुरूजनों तदुपरांत माताओं और अंत में सभी उपस्थित समुदाय को नमस्कार कर आसन ग्रहण किया। राम के वामांग में आसन रिक्त था। मंदोदरी के होठों पर कुटिल मुस्कान खेलने लगी। अब रहस्य के उद्घाटन का समय आ गया है। तभी महल की ओर से कहार एक सुसज्जित पालकी उठाए आते दिखाई दिए। पालकी के ऊपर छत्र और चवर लिए दासियां चल रहीं थीं। ठीक उसी प्रकार जैसे कि आर्य राजाओं की

महारानियां यज्ञ मण्डप में प्रवेश करती थीं। आसन के समीप लाकर पालकी को रख दिया गया। और दो दासियों ने पालकी का आवरण हटाकर किसी को बाहर निकाला।

मंदोदरी के मुख पर उत्कंठा का साम्राज्य था। वह जहां बैठी थी वहां से भली भांति देख नहीं पा रही थी कि पालकी से कौन उतरा। उसने देखा कि दासियों ने किसी राजसी वस्त्र धारण किए महिला को हाथों में उठा कर आसन पर आसीत किया।

'अच्छा आडंबर है' मंदोदरी ने सोचा, 'चार पग चल भी नहीं सकती।'

पुरोहितों ने मंत्रोचार प्रारंभ कर दिया। मंदोदरी उस महिला को देख पाने को उद्विग्न हो रही थी। किंतु उसके मुख पर अवगुंठन था।

यज्ञ के कर्मकांड चलने लगे। एक स्त्री ने राम के अंगवस्त्र का ग्रंथिबंधन उस महिला के आंचल से किया। मंदोदरी को कुछ भी सुनाई नहीं पड़ रहा था। वह उस स्त्री का मुख देखने को लालायित थी। यज्ञ की गतिविधियां चलती रहीं। मंदोदरी व्याकुलता से प्रतीक्षा करती रहीं।

यज्ञ का एक अंक पूर्ण हुआ। राजा राम और महारानी सीता के जयघोष से चारणों ने पूरा यज्ञस्थल गुंजायमान कर दिया।

'सीता' मंदोदरी चौंक पड़ी, 'तो लौट आई महारानी, कैसी बड़ी-बड़ी बातें करती थीं।' मंदोदरी ने सोचा। उसकी कुटिल बुद्धि सभी सूचनाओं को अपनी दृष्टि से परिभाषित करने लगी। तो यह बात है। इसी लिए राम एकांत में रहते हैं। इसी लिए किसी महिला का प्रवेश निषिद्ध है। क्या आवश्यकता है ऐसे आडंबर की। लेकिन ये आर्य तो ऐसे ही हैं। कथनी में और करनी में कुछ और। अब तो महारानी से मिलना ही होगा। मंदोदरी ने सोचा। तभी जयघोष के साथ दासियों ने सीता को उठाया और पालकी की ओर ले चली। इस बार उनका मुख मंदोदरी की ओर था। मंदोदरी उठ खड़ी हुई। देवयोग से उसी समय तीव्र पवन का एक झोंका आया और सीता के मुख का अवगुंठन हट गया।

मंदोदरी पर जैसे तड़ित घात हुआ हो। ये तो प्रतिमा है, सीता की स्वर्ण प्रतिमा।

एक ही क्षण में मंदोदरी के सारे द्वेष भाव तिरोहित हो गए। जो कुछ सीता ने कहा था वह उसके सम्मुख था। राम का नेह, कर्तव्य, कष्ट, पीड़ा और त्याग।

मंदोदरी का मन शांत हो गया। वह राम -सीता के दांपत्य का मर्म समझ गई। उसे उनके जीवन की उपलब्धि भी दृश्यमान हो उठी और अपने जीवन की निस्सारता भी। वह नतमस्तक हो गई, बुदबुदाई - ''नतोहम रामवल्लभाम''।

इस आलेख का कथ्य हमारा मौलिक नहीं है, ये आदरणीय श्री रमेश चंद्र तिवारी 'विराम' के खण्डकाव्य 'नतोहम रामवल्लभाम' से प्रेरित है। इसमें जो कुछ भी उत्कृष्ट है, उनका है। हमारी तो मात्र प्रस्तुति है। हम उनके प्रति आभार व्यक्त करने की धृष्टता नहीं कर सकते। वैसे भी वे हमारे पारिवारिक मित्र के मामा हैं, और भांजों ने भला मामाओं का आभार कब माना है ?

राम की जल समाधि

पश्चिम में ढलका सूर्य उठा वंशज सरयू की रेती से,
हारा-हारा, रीता-रीता, नि:शब्द धरा, नि:शब्द व्योम,
नि:शब्द अधर पर रोम-रोम था टेर रहा सीता-सीता।

किसलिए रहे अब ये शरीर, ये अनाथमन किसलिए रहे,
धरती को मैं किसलिए सहूँ, धरती मुझको किसलिए सहे।
तू कहाँ खो गई वैदेही, वैदेही तू खो गई कहाँ,
मुरझे राजीव नयन बोले, काँपी सरयू, सरयू काँपी,
देवत्व हुआ लो पूर्णकाम, नीली माटी निष्काम हुई,
इस स्नेहहीन देह के लिए, अब साँस-साँस संग्राम हुई।

ये राजमुकुट, ये सिंहासन, ये दिग्विजयी वैभव अपार,
ये प्रियाहीन जीवन मेरा, सामने नदी की अगम धार,
माँग रे भिखारी, लोक माँग, कुछ और माँग अंतिम बेला,
इन अंचलहीन आँसुओं में नहला बूढ़ी मर्यादाएँ,
आदर्शों के जल महल बना, फिर राम मिलें न मिलें तुझको,
फिर ऐसी शाम ढले न ढले।

ओ खंडित प्रणयबंध मेरे, किस ठौर कहां तुझको जोड़ूँ,
कब तक पहनूँ ये मौन धैर्य, बोलूँ भी तो किससे बोलूँ,
सिमटे अब ये लीला सिमटे, भीतर-भीतर गूँजा भर था,
छप से पानी में पाँव पड़ा, कमलों से लिपट गई सरयू,
फिर लहरों पर वाटिका खिली, रतिमुख सखियाँ, नतमुख सीता,
सम्मोहित मेघबरन तड़पे, पानी घुटनों-घुटनों आया,
आया घुटनों-घुटनों पानी। फिर धुआँ-धुआँ फिर अँधियारा,
लहरों-लहरों, धारा-धारा, व्याकुलता फिर पारा-पारा।

फिर एक हिरन-सी किरन देह, दौड़ती चली आगे-आगे,
आँखों में जैसे बान सधा, दो पाँव उड़े जल में आगे,
पानी लो नाभि-नाभि आया, आया लो नाभि-नाभि पानी,
जल में तम, तम में जल बहता, ठहरो बस और नहीं कहता,
जल में कोई जीवित दहता, फिर एक तपस्विनी शांत सौम्य,
धक धक लपटों में निर्विकार, सशरीर सत्य-सी सम्मुख थी,
उन्माद नीर चीरने लगा, पानी छाती-छाती आया,
आया छाती-छाती पानी।

आगे लहरें बाहर लहरें, आगे जल था, पीछे जल था,
केवल जल था, वक्षस्थल था, वक्षस्थल तक केवल जल था।
जल पर तिरता था नीलकमल, बिखरा-बिखरा सा नीलकमल,
कुछ और-और सा नीलकमल, फिर फूटा जैसे ज्योति प्रहर,
धरती से नभ तक जगर-मगर, दो टुकड़े धनुष पड़ा नीचे,
जैसे सूरज के हस्ताक्षर, बांहों के चंदन घेरे से,
दीपित जयमाल उठी ऊपर,
सर्वस्व सौंपता शीश झुका, लो शून्य राम लो राम लहर,
फिर लहर-लहर, सरयू-सरयू, लहरें-लहरें, लहरें- लहरें,
केवल तम ही तम, तम ही तम, जल, जल ही जल केवल,
हे राम-राम, हे राम-राम
हे राम-राम, हे राम-राम ।

– भारत भूषण

लेखक परिचय

भारतीय वानिकी अनुसन्धान एवं शिक्षा परिषद्, देहरादून

नाम एवं पता

श्री सुधीर कुमार
वैज्ञानिक - जी
पर्यावरण प्रबन्धन प्रभाग

डॉ. अनिल नेगी
वैज्ञानिक - डी
शिक्षा निदेशालय

श्री रमाकान्त मिश्र
वैज्ञानिक - बी
मीडिया एवं विस्तार प्रभाग
विस्तार निदेशालय

कुमारी अंजिपा
संविदा कर्मी
पंचायत तथा मानव आयाम

सुश्री अंशु गर्ग
संविदाकर्मी
मीडिया एवं विस्तार प्रभाग

श्री बिरेन्द्र प्रसाद खंकरियाल
संविदाकर्मी
प्रशासन निदेशालय

नाम एवं पता

श्री विजयराज सिंह रावत
वैज्ञानिक-एफ
वन एवं जलवायु परिवर्तन प्रभाग

डॉ. ओम कुमार
वैज्ञानिक - डी
पर्यावरण प्रबन्धन प्रभाग

श्री छत्रपाल सिंह
सहायक
पंचायत एवं मानव आयाम प्रभाग

श्रीमती रूपेन्द्रिका
संविदा कर्मी
सूचना का अधिकार कार्यालय

श्री अनूप कुमार वर्मा
संविदा कर्मी

सुश्री दिव्यानी राना
सुपुत्री श्रीमती सीमा राना
विद्यार्थी

वन अनुसन्धान संस्थान, देहरादून

नाम एवं पता

डॉ. मौ. यूसुफ
वैज्ञानिक - एफ
वन कीट विज्ञान प्रभाग

डॉ. डी. पी. खाली
वैज्ञानिक - एफ
वन उत्पाद प्रभाग

डॉ. के. पी. सिंह
वैज्ञानिक-डी
वन कीट विज्ञान प्रभाग

डॉ. राकेश कुमार
वैज्ञानिक-डी

श्री राम बहादुर सिंह
वैज्ञानिक - बी
वन कीट प्रभाग

श्री अनूप कुमार
अनुसन्धान सहायक-द्वितीय
वन सूचना विज्ञान प्रभाग

श्री विकास
अनुसन्धान सहायक

नाम एवं पता

डॉ. वाई. सी. त्रिपाठी
वैज्ञानिक - एफ

डॉ. सुधीर सिंह
वैज्ञानिक-ई
वन कीट विज्ञान प्रभाग

डॉ. बी. पी. टम्टा
वैज्ञानिक-डी
अकाष्ठ वन उपज प्रभाग

डॉ. देवेन्द्र कुमार
वैज्ञानिक -डी
वन अनुसंधान संस्थान

श्री महेन्द्र सिंह
अनुसन्धान अधिकारी
वनस्पति शाखा

श्री अमित कुमार सिंह
अनुसन्धान सहायक - द्वितीय
रसायन प्रभाग

श्रीमती संतोष गैरोला
अनुसंधान सहायक (आर्टिस्ट)
प्रचार शाखा

वन अनुसन्धान संस्थान, देहरादून

नाम एवं पता

श्री शम्भू सिंह रावत
केयर टेकर (नियन्त्रण कक्ष)
पहरा एवं निगरानी अनुभाग

श्री शशांक शुक्ला
परियोजना सहायक
संसाधन सर्वेक्षण एवं प्रबन्ध प्रभाग

सुश्री निशात अन्जुम
कनिष्ठ अनुसन्धान अध्येता,
रसायन प्रभाग

सुश्री अनिता पाल
शोध छात्रा

श्रीमती सुधा पाण्डेय
धर्मपत्नी डॉ. वी.पी. पाण्डेय
सामाजिक वानिकी एवं
पारिपुनर्स्थापन केन्द्र, इलाहाबाद

नाम एवं पता

श्री रमेश सिंह
उच्च श्रेणी लिपिक
हिन्दी अनुभाग

श्री संतोष कुमार
परियोजना सहायक
वन सूचना विज्ञान प्रभाग

श्री देवेश तिवारी
कनिष्ठ अनुसन्धान अध्येता
रसायन प्रभाग

सुश्री दिव्या यादव
जे.पी.एफ.
वन सूचना विज्ञान प्रभाग

उष्णकटिबन्धीय वन अनुसन्धान संस्थान, जबलपुर

नाम एवं पता

डॉ. नितिन कुलकर्णी
प्रभागाध्यक्ष एवं वैज्ञानिक-जी
वन कीट विज्ञान प्रभाग

डॉ. राजेश कुमार मिश्रा
अनुसन्धान सहायक-प्रथम
संगणक एवं सूचना प्रौद्योगिकी

नाम एवं पता

डॉ. संजय पौनीकर
अनुसन्धान अधिकारी
वन कीट विज्ञान प्रभाग

श्रीमती पूर्णिमा श्रीवास्तव
पुस्तकालय सूचना सहायक
पुस्तकालय

शुष्क वन अनुसन्धान संस्थान, जोधपुर

नाम एवं पता

डॉ रंजना आर्या
वैज्ञानिक-ई एवं प्रमुख
अकाष्ठ वनोपज प्रभाग

श्री अजय वशिष्ठ
हिन्दी अनुवादक

नाम एवं पता

श्रीमती अनुराधा भाटी
पुस्तकालयध्यक्ष

वर्षा वन अनुसन्धान संस्थान, जोरहाट

नाम एवं पता

डॉ. शैलेश पांडेय
वैज्ञानिक-सी

श्री राजेश कुमार
वैज्ञानिक - सी

श्री अजय कुमार
वैज्ञानिक-बी
पारिस्थितिकी एवं जैवविविधता प्रभाग

डॉ. गौरव मिश्रा
वैज्ञानिक - बी

सुश्री देवाक्षी काश्यप

नाम एवं पता

डॉ. आर. राजऋषि
वैज्ञानिक-सी

श्री दिनेश कुमार मीणा
वैज्ञानिक-बी
पारिस्थितिकी एवं जैवविविधता प्रभाग

डॉ. कृष्णा गिरी
वैज्ञानिक-बी

डॉ. अरून्धती बरूवा
अनुसन्धान अधिकारी
झूम खेती प्रभाग

वन उत्पादकता संस्थान, रांची

नाम एवं पता

श्री अशोक कुमार पाण्डेय
वैज्ञानिक - एफ
अकाष्ठ वन उत्पाद प्रभाग

श्री पंकज सिंह
अनुसन्धान अधिकारी

श्री जीशान दानिश
तकनीकी सहायक

श्री हरि शंकर लाल
कनिष्ठ अनुसन्धान अध्येता
वन कार्यकी एवं आणविक
जीवविज्ञान प्रभाग

श्री सोनू भारती
पी.एच.डी छात्र एवं
वरिष्ठ अनुसन्धान अध्येता

नाम एवं पता

डॉ. संजय सिंह
वैज्ञानिक - डी एवं प्रमुख
वनस्पति, संवर्धन तथा अकाष्ठ
वन उत्पाद प्रभाग

श्री रवि शंकर प्रसाद
अनुसन्धान सहायक - प्रथम
(एस.जी.)

सुश्री कंचन कुमारी
वरिष्ठ अनुसन्धान अध्येता
वन कार्यकी एवं आणविक
जीवविज्ञान प्रभाग

सुश्री अमृता सिन्हा
कनिष्ठ अनुसन्धान अध्येता
वन कार्यकी एवं आणविक
जीवविज्ञान प्रभाग

अतिथि

श्री दीपक सिंह सचान
वैज्ञानिक - डी
रक्षा अनुसन्धान एवं विकास संगठन, देहरादून

वन आनुवंशिकी एवं वृक्ष प्रजनन संस्थान, कोयम्बटूर

नाम एवं पता	नाम एवं पता
सुश्री आर. श्रीदेवी सहायक पुस्तकालयाध्यक्षा	**श्रीमती आर. जी. अनिता** तकनीकी सहायक
श्री एम. विनयचन्द्रन आशुलिपिक ग्रेड - II	**श्रीमती पूंगोदै कृष्णन** कनिष्ठ हिन्दी अनुवादक
श्री आर. वेलुमणि अनुसन्धान सहायक	**श्री एस. श्रीनिवासराघवन** सुपुत्र श्रीमती एन. उषा विद्यार्थी

प्रत्याख्यान (डिस्क्लेमर)

पत्रिका में व्यक्त तथ्य, आँकड़े और विचार रचनाकारों के अपने हैं, सम्पादक मंडल एवं परिषद् का इनसे सहमत होना अनिवार्य नहीं है। पाठकों के हित में उन्हें सूचित किया जाता है कि किन्ही औषधीय प्रयोगों की पत्रिका में प्रकाशित लेखों द्वारा अनुशंसा नहीं की जाती है। ये मात्र सूचनार्थ हैं। इनका चिकित्सीय प्रयोग किसी अर्ह डॉक्टर/वैद्य इत्यादि की देखरेख में ही करें।

इतने ऊँचे उठो कि जितना उठा गगन है

इतने ऊँचे उठो कि जितना उठा गगन है।
देखो इस सारी दुनिया को एक दृष्टि से
सिंचित करो धरा, समता की भाव वृष्टि से
जाति भेद की, धर्म-वेश की
काले गोरे रंग-द्वेष की
ज्वालाओं से जलते जग में
इतने शीतल बहो कि जितना मलय पवन है।

नये हाथ से, वर्तमान का रूप सँवारो
नयी तूलिका से चित्रों के रंग उभारो
नये राग को नूतन स्वर दो
भाषा को नूतन अक्षर दो
युग की नयी मूर्ति-रचना में
इतने मौलिक बनो कि जितना स्वयं सृजन है।

लो अतीत से उतना ही जितना पोषक है
जीण-शीर्ण का मोह मृत्यु का ही द्योतक है
तोड़ो बन्धन, रुके न चिंतन
गति, जीवन का सत्य चिरन्तन
धारा के शाश्वत प्रवाह में
इतने गतिमय बनो कि जितना परिवर्तन है।

चाह रहे हम इस धरती को स्वर्ग बनाना
अगर कहीं हो स्वर्ग, उसे धरती पर लाना
सूरज, चाँद, चाँदनी, तारे
सब हैं प्रतिपल साथ हमारे
दो कुरूप को रूप सलोना
इतने सुन्दर बनो कि जितना आकर्षण है।

– द्वारिका प्रसाद माहेश्वरी

प्रकाशक

मीडिया एवं विस्तार प्रभाग, विस्तार निदेशालय

भारतीय वानिकी अनुसन्धान एवं शिक्षा परिषद्

डाकघर-न्यू फॉरेस्ट, देहरादून (उत्तराखण्ड) 248 006

भारत

मुद्रण : एलाईड प्रिन्टर्स, देहरादून 0135-2654505, 3290845